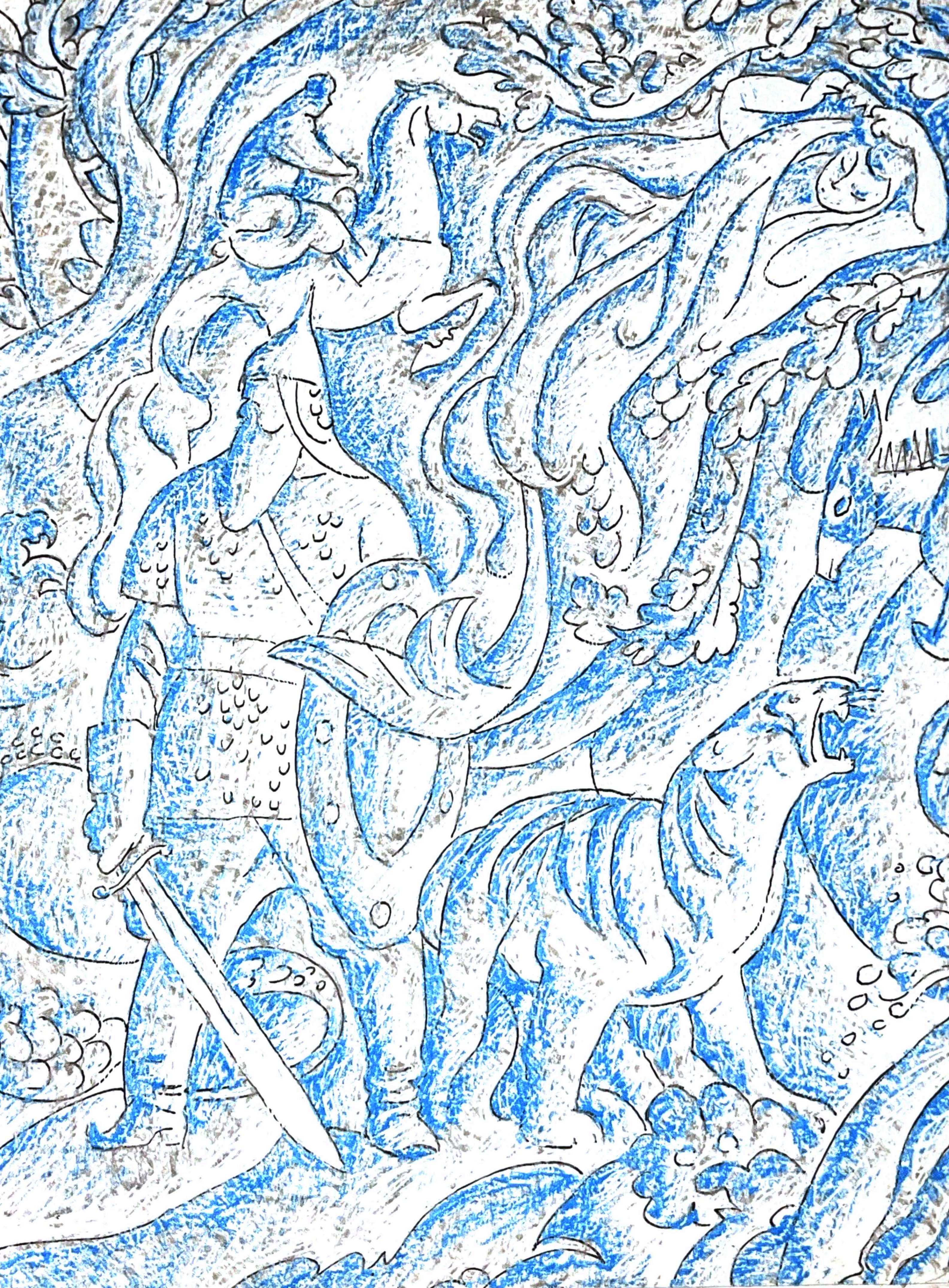
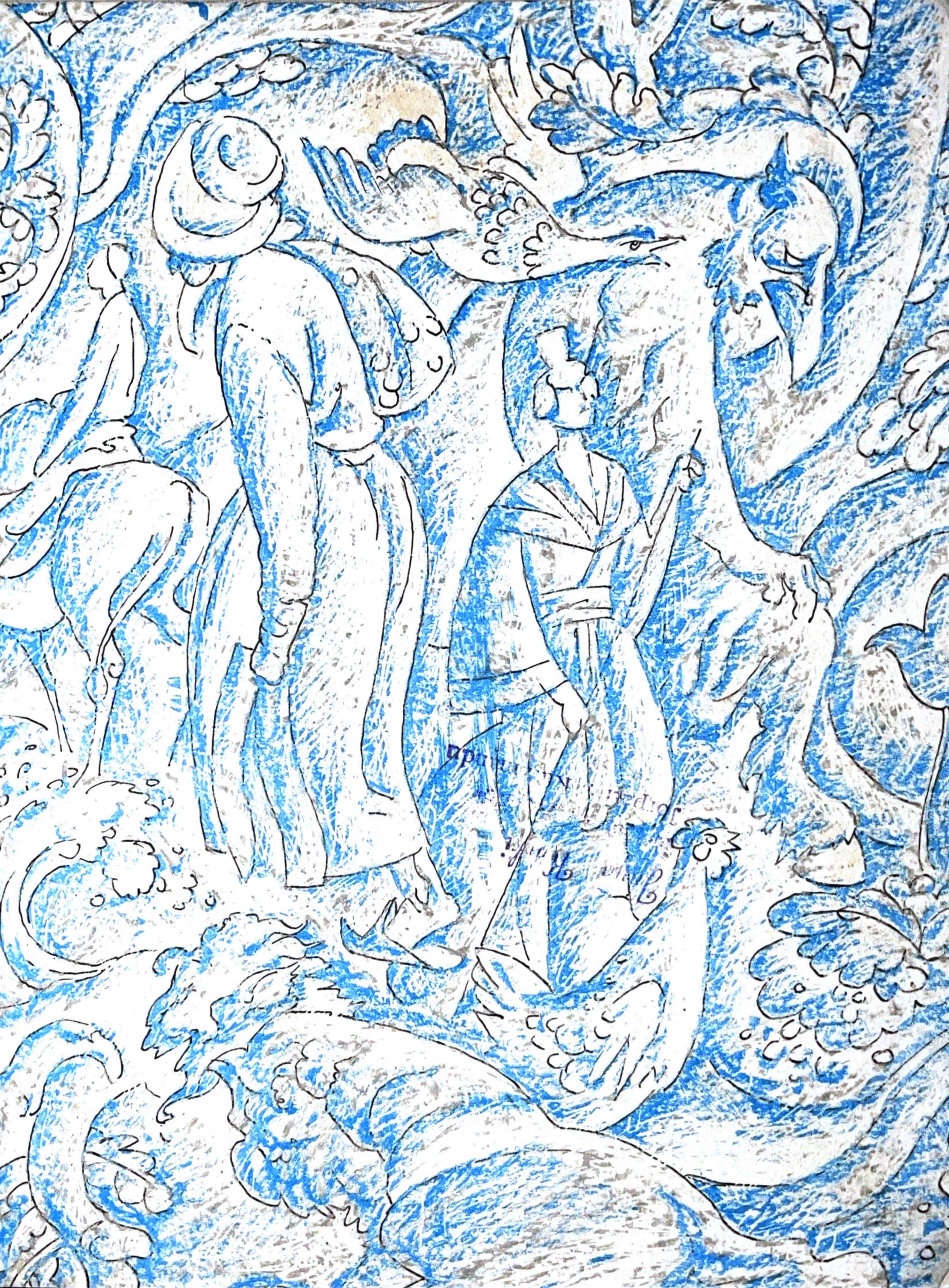
कथा-संसार

चमत्कार चमत्कार

रूसी लेखकों के क़िस्से-कहानियां





कथा-संसार

चमत्कार चमत्कार

रूसी
लेखकों के
क़िस्से-कहानियां

रादुगा प्रकाशन
१६८४
मास्को

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड
५ ई, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली-११००५५

अनुवादक : मदनलाल 'मधु'

चित्रकार : कोरोविन ओ० द०

ЛУКОМОРЬЕ

Сказки русских писателей

на хинди

LUKOMORYE

The Tales of Russian Writers

in Hindi

सोवियत संघ में मुद्रित

Л $\frac{4803010101\text{-}076}{031(01)\text{-}84}$ 400-84

अनुक्रम



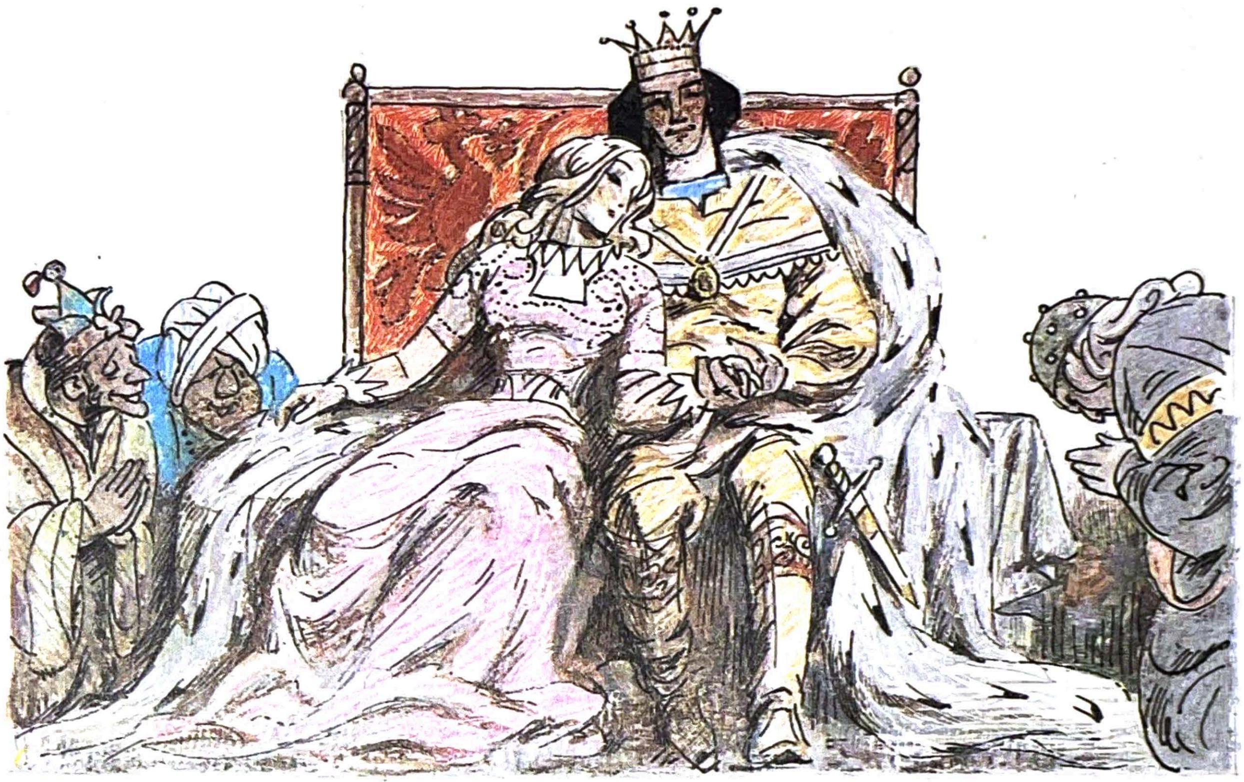


अलेक्सान्द्र पुश्किन

सागर-तट पर

सागर-तट के निकट बलूत का वृक्ष हरा
सोने की ज़ंजीर बंधी लम्बी उस पर,
बिल्ला एक, कि सचमुच जो विद्वान बड़ा
हर क्षण उस पर आये-जाये इधर-उधर,
जब वह जाये दायें को, गाये गाना,
बायें जाये – बुने कथा ताना-बाना,
वहां अजूबे – वन-राक्षस का फेरा है,
और जल-परी का डालों पर डेरा है,
वहां अनूठी औ' अनदेखी राहों पर
अद्भुत पशुओं के आते पद-चिह्न नज़र,
मुर्ग़ी के पंजों पर झुग्गी वहां खड़ी

दरवाज़ा भी नहीं, न उसमें है खिड़की,
वहां घाटियां, वन, भूतों से भरे हुए
सुबह-सुबह लहरों के तेवर चढ़े हुए,
वे सूने, रेतीले तट से टकरायें
तीस सूरमा लहरों से बाहर आयें,
और संग में उनका एक कमांडर है
बड़ा साहसी जिसका बेहद आदर है,
राजकुमार वहीं पर ज़ार भयंकर को
करे पराजित, बन्दी उसे बनाता है,
जादूगर भी लांघ वनों को, सागर को
पकड़ सूरमा, सब के सम्मुख लाता है,
राजकुमारी वहां जेल में पड़ी सड़े
और भेड़िया भूरा उसकी टहल करे,
वहां ओखली ख़ुद ही चलती-फिरती है
बैठ उसी पर बाबा-यागा उड़ती है,
सोने के पर्वत पर कोशेई ज़ार वहां
व्यथित हो रहा, बैठा है लाचार वहां,
वहां आत्मा रूसी, रूसी प्राण वहां
गया वहां मैं, और किया मधुपान वहां,
देखा सागर-तट पर मैंने बलूत हरा
उसके नीचे बिल्ला, जो विद्वान बड़ा
क़िस्से ढेरों वही सुनाता मुझे रहा ...



सेर्गेई अक्साकोव

सुर्ख़ फूल

किसी देश में, किसी राज्य में एक अमीर सौदागर रहता था, बड़ा नाम था उसका।

उसके पास तरह-तरह की बड़ी दौलत थी – समुद्र-पार की महंगी-महंगी चीज़ें, हीरे-मोती, सोना-चांदी। तीन बेटियां थीं उसकी – तीनों ही बहुत सुन्दर, सांचे में ढली-सी। तीसरी, सबसे छोटी, तीनों में बढ़-चढ़कर थी। अपनी बेटियों को वह सारी दौलत – हीरे-मोतियों, सोने और चांदी – से ज़्यादा प्यार करता था। इसलिये कि वह विधुर था और बेटियों को छोड़कर अपना प्यार लुटाता तो किस पर! वह बड़ी बेटियों को भी प्यार करता था, मगर

छोटी को सबसे ज़्यादा चाहता था, क्योंकि वही सबसे अधिक सुन्दर और पिता के प्रति अधिक स्नेहमयी थी।

तो एक बार सौदागर तिजारत के लिए समुद्र-पार, नौ-तिया-सत्ताईस देश और दस-तिया-तीस राज्य में जाने की तैयारी करने लगा और अपनी स्नेहमयी बेटियों से बोला:

"मेरी प्यारी, अच्छी और सुन्दर बेटियो, मैं अपने सौदागरी के काम से नौ-तिया-सत्ताईस देश तथा दस-तिया-तीस राज्य में जा रहा हूं। कह नहीं सकता कि कब लौटूंगा मैं, जल्दी या देर से। जाने से पहले मैं तुम से यही कहना चाहता हूं कि मेरी अनुपस्थिति में तुम अच्छे ढंग और हेल-मेल से रहना। अगर तुम ऐसा करोगी तो मैं तुम्हें जो चाहोगी, वही तोहफ़े ला दूंगा। तोहफ़ों के बारे में सोचने के लिये तीन दिन देता हूं और तब तुम मुझे बताना कि क्या-क्या चाहती हो।"

तीनों बेटियां तीन दिन-रातों तक सोचती रहीं और फिर पिता के पास आईं। पिता ने पूछा कि वे क्या तोहफ़े चाहती हैं। सबसे बड़ी बेटी ने झुककर पिता को प्रणाम किया और बोली:

"प्यारे, पूज्य पिता! आप मेरे लिये न तो सोने-चांदी का किमख़ाब लायें, न काले सेबलों के क़ीमती समूर, और न ही बड़े-बड़े मोतियों की मालायें। आप मुझे ला दें हीरों से जड़ा हुआ सोने का मुकुट। उन हीरों से पूनम के चांद और उषा-बेला के सूरज जैसी रोशनी हो, कि उनसे अंधेरी रात दिन के उजाले की तरह चमक उठे।"

धनी-मानी सौदागर सोच में डूब गया और कुछ देर बाद बोला:

"अच्छी बात है, मेरी प्यारी, अच्छी और सुन्दर बिटिया, मैं तुम्हें ऐसा मुकुट ला दूंगा। सागर-पार मैं एक ऐसे आदमी को जानता हूं जो इस तरह का मुकुट हासिल कर देगा। यह मुकुट सागर-पार की एक शहज़ादी के पास है और पत्थर के बने ख़ज़ाने में छिपा हुआ है। यह ख़ज़ाना कोई सात मीटर की गहराई पर एक पहाड़ में है। उसमें लोहे के तीन दरवाज़े और तीन मज़बूत ताले लगे हुए हैं। इसे पाने के लिये काफ़ी झंझट करना पड़ेगा, लेकिन मेरी दौलत सब कुछ कर सकती है।"

मंझली बेटी ने झुककर प्रणाम किया और बोली:

"प्यारे, पूज्य पिता! आप मेरे लिये न तो सोने-चांदी का किमख़ाब लायें, न साइबेरियाई सेबलों के काले समूर, न बड़े-बड़े मोतियों की मालायें और न ही हीरों से जड़ा हुआ सोने का मुकुट। आप मुझे पूर्वी बिल्लौर के एक ही टुकड़े का बना हुआ इतना अच्छा आईना ला दें कि मैं उसमें आकाश का सारा सौन्दर्य देख सकूं, कि उसे निहारते हुए मैं कभी बुढ़ाऊं नहीं और मेरे युवती के रूप को चार चांद लग जायें।"

धनी-मानी सौदागर सोच में डूब गया। उसने थोड़ी देर सोचा या ज़्यादा देर तक, यह कहना मुश्किल है और फिर बेटी से ये शब्द कहे :

"ठीक है, मेरी प्यारी, अच्छी और सुन्दर बेटी। मैं तुम्हें ऐसा बिल्लौरी आईना ला दूंगा। वह फ़ारस के बादशाह की जवान शहज़ादी के पास है जिसकी ख़ूबसूरती अनुमान और बयान से बाहर है। यह आईना रखा हुआ है ऊंचे पहाड़ पर बनी पत्थर की ऊंची मीनार में। उस पहाड़ की ऊंचाई छ: सौ मीटर से ज़्यादा है और मीनार में लोहे के सात दरवाज़े तथा सात मज़बूत ताले लगे हुए हैं। उस मीनार तक पहुंचने के लिये तीन हज़ार सीढ़ियां हैं, हर सीढ़ी पर नंगी, इस्पाती तलवार लिये हुए ईरानी सन्तरी पहरा देता है और सातों दरवाज़ों की चाबियां शहज़ादी अपनी पेटी में लटकाये रहती है। सागर-पार मैं एक ऐसे आदमी को जानता हूं जो मुझे यह आईना ला देगा। बड़ी बहन के मुक़ाबले में तुम्हारा काम ज़्यादा मुश्किल है, लेकिन मेरी दौलत सब कुछ कर सकती है।"

सबसे छोटी बेटी ने झुककर प्रणाम किया और बोली :

"प्यारे, पूज्य पिता! न तो आप मेरे लिये सोने-चांदी के किमख़ाब लायें, न साइबेरियाई सेबलों के काले समूर, न बड़े-बड़े मोतियों की मालायें, न हीरोंवाला सोने का मुकुट और न ही बिल्लौरी आईना। आप मुझे ला दें सुर्ख़ फूल जिससे बढ़कर सुन्दर फूल दुनिया में दूसरा न हो।"

धनी-मानी सौदागर पहले से भी ज़्यादा गहरी सोच में डूब गया। बहुत देर तक या कम वक़्त तक सोचता रहा, यह कहना मुश्किल है। लेकिन सोचने के बाद उसने अपनी सबसे छोटी, लाड़ली बेटी को चूमा, सहलाया-दुलराया और कहा :

"अपनी बहनों के मुक़ाबले में तुमने मुझे बहुत ही मुश्किल काम सौंपा है। अगर यह मालूम हो कि क्या खोजना है, तो मैं किसी तरह खोज ही लूं। लेकिन जिसके बारे में ख़ुद को कुछ मालूम न हो, उसे कैसे ढूंढ़ा जाये? सुर्ख़ फूल हासिल करना तो मुश्किल नहीं, लेकिन मैं यह कैसे जान सकता हूं कि उससे ज़्यादा ख़ूबसूरत कोई फूल दुनिया में है या नहीं? कोशिश करूंगा, पर यदि न ला सकूं, तो बुरा नहीं मानना।"

उसने अपनी अच्छी और सुन्दर बेटियों को उनके कमरों में जाने को कहा। ख़ुद वह रास्ते की, सफ़र की, सागर-पार के देशों में जाने की तैयारी में जुट गया। इस तैयारी में उसका थोड़ा या बहुत वक़्त लगा, मुझे मालूम नहीं और मैं कुछ कह भी नहीं सकता – क़िस्सा बयान करते इतनी देर नहीं लगती, काम करने में कहीं ज़्यादा वक़्त लगता है। आख़िर वह सफ़र पर निकल पड़ा, अपनी मंज़िल की तरफ़ चल दिया।

तो धनी-मानी सौदागर सागर पार के पराये देशों में, अनजाने-अजनबी राज्यों में बढ़ता जा रहा था। अपने माल वह तिगुने महंगे बेचता और दूसरों से तिगुने सस्ते ख़रीदता, माल से माल बदलता और सो भी सस्ते में तथा साथ में चांदी और सोना लेता। जहाज़ों में सोने की

मुद्रायें भर-भरकर घर भेजता जाता था। उसने बड़ी बेटी का मनपसन्द तोहफ़ा–हीरोंवाला सोने का मुकुट – हासिल कर लिया। इन हीरों से अंधेरी रात भी दिन के उजाले की तरह चमक उठती थी। मंझली बेटी का तोहफ़ा – बिल्लौरी आईना –भी प्राप्त कर लिया। उसमें आकाश का सारा सौन्दर्य प्रतिबिम्बित होता था और युवती की सुन्दरता कम होने के बजाय बढ़ जाती थी। लेकिन अपनी लाड़ली, सबसे छोटी बेटी का तोहफ़ा – सुर्ख़ फूल जिससे बढ़कर ख़ूबसूरत कोई दूसरा फूल दुनिया में न हो – उसे कहीं नहीं मिल रहा था।

ज़ारों, बादशाहों और सुलतानों के बाग़ों में उसने अनेक ऐसे ख़ूबसूरत सुर्ख़ फूल देखे कि जिन्हें न क़िस्से-कहानी में बयान किया जाये और न क़लम से लिखा जाये। लेकिन कोई भी उसे इस बात का यक़ीन दिलाने को तैयार नहीं था कि उनसे बढ़कर ख़ूबसूरत कोई दूसरा फूल दुनिया में नहीं है और वह ख़ुद भी ऐसा नहीं सोचता था। चुनांचे वह अपने वफ़ादार नौकरों के साथ बढ़ता जा रहा था भुरभुरी बालूवाले मरुस्थलों में, घने जंगलों में। न जाने कहां से तुर्क और काफ़िर डाकू उस पर टूट पड़े। यह देखकर कि इस मुसीबत से बचने का कोई रास्ता नहीं, धनी-मानी सौदागर ने दौलत के अपने कारवां और वफ़ादार नौकरों को वहीं छोड़ा और घने जंगलों में भाग गया। "काफ़िर लुटेरों के हाथों में पड़ने और क़ैदी बनकर ग़ुलामी की ज़िन्दगी बिताने से तो यही ज़्यादा अच्छा होगा कि ज़ालिम दरिन्दे मुझे फाड़ खायें।"

वह उस घने, दुर्गम और अलन्घ्य जंगल में बढ़ता जाता था और जैसे-जैसे आगे बढ़ता था, रास्ता अच्छा होता जाता था मानो वृक्ष पीछे हटते जाते थे और घनी झाड़ियां अलग होकर राह बनाती जाती थीं। सौदागर पीछे मुड़कर देखता – हाथ तक फैलाना सम्भव नहीं था, दायें देखता तो इतने ठूंठ और कुएं थे कि भेंगा ख़रगोश भी उन्हें न लांघ सके और बायें तो और भी ज़्यादा बुरी हालत थी। धनी-मानी सौदागर बढ़ता जाता था, अपनी अक़्ल लड़ाता था, मगर कुछ भी समझ नहीं पाता था कि उसके साथ यह क्या करिश्मा हो रहा है। फिर भी बढ़ता जाता था, बढ़ता जाता था –उसके पैरों तले बढ़िया, समतल मार्ग था। सुबह से शाम तक वह दिन भर चलता रहा, न तो उसे दरिन्दों की चिंघाड़ सुनाई दी, न सांपों की फुंकार, न उल्लू की चीख़ और न परिन्दों की चहक – उसके आस-पास तो मानो सभी कुछ ने दम साध लिया था। लो, अन्धेरी रात आ गयी, सभी ओर ऐसा अन्धेरा कि हाथ को हाथ सुझाई न दे, मगर उसके पैरों के नीचे उजाला था। वह लगभग आधी रात तक ऐसे ही चलता रहा और तब उसे अपने सामने ज्वाला-सी दिखाई दी। उसने सोचा : "शायद जंगल जल रहा है। किसलिये मैं जान-बूझकर उधर, निश्चित मौत के मुंह में जाऊं?"

वह पीछे मुड़ा, मगर पीछे जाना असम्भव था, दायें, बायें भी असम्भव था। आगे बढ़ा – बढ़िया रास्ता था। "अगर मैं एक ही जगह पर खड़ा रहूं तो हो सकता



है कि ज्वाला दूसरी तरफ़ को या मुझसे हटकर चली जाये या बिल्कुल बुझ ही जाये।"

वह खड़ा होकर इन्तज़ार करने लगा। किन्तु जैसा उसने सोचा था, वैसा नहीं हुआ – ज्वाला तो सीधे उसकी तरफ़ आने लगी, मानो उसके निकट अधिकाधिक उजाला होता जाता था। सौदागर सोचता रहा, सोचता रहा और उसने आगे बढ़ते जाने का निर्णय कर लिया। दो बार तो कोई मरता नहीं और एक मौत से बचता नहीं। उसने अपने ऊपर सलीब बनायी और आगे चल दिया। ज्यों-ज्यों वह आगे जाता था, त्यों-त्यों प्रकाश अधिक होता जाता था, लगभग दिन जैसा उजाला हो गया, मगर आग की भड़भड़ाहट और चटक सुनाई नहीं देती थी। आखिर वह बहुत खुले वन-प्रांगण में निकला और क्या देखता है कि उस बड़े-चौड़े वन-प्रांगण के बीचोंबीच एक घर, अजी नहीं, विशाल भवन, अजी नहीं, किसी बादशाह या ज़ार का महल खड़ा है, ऊपर से नीचे तक दहकता हुआ, चांदी, सोने और हीरों से जगमगाता हुआ। वह पूरे का पूरा दहक रहा था, चमक रहा था, लेकिन आग कहीं नज़र नहीं आ रही थी। बिल्कुल ऐसे लग रहा था मानो दहकता हुआ सूरज हो, यहां तक कि उस पर नज़र टिकाना भी सम्भव नहीं था। महल की सभी खिड़कियां पूरी तरह खुली हुई थीं और भीतर ऐसा मधुर संगीत बज रहा था, जैसा उसने पहले कभी नहीं सुना था।

सौदागर बड़े-बड़े और चौपट खुले फाटकों को लांघता हुआ बहुत चौड़े अहाते में दाखिल हुआ। यहां से सफ़ेद संगमरमर का रास्ता शुरू हो गया था जिसके दोनों तरफ़ ऊंचे-ऊंचे, बड़े और छोटे फ़व्वारे चल रहे थे। लाल बानात बिछी सीढ़ियां चढ़कर, जिनके दोनों ओर सुनहरे जंगले लगे हुए थे, वह एक कमरे में पहुंचा – वहां कोई नहीं था, दूसरे, तीसरे कमरे में गया – वहां भी कोई नहीं, पांचवें, दसवें में गया – वहां भी कोई दिखाई नहीं दिया। किन्तु सजावट सभी जगह शाही, अनदेखी-अनसुनी थी सभी जगह सोने, चांदी, पूर्वी बिल्लौर, हाथी दांत और महागज के दांत की चीज़ें सजी हुई थीं।

धनी-मानी सौदागर ऐसी अनदेखी-अनसुनी दौलत से हैरान हो रहा था और उसकी हैरानी इसलिये और भी ज़्यादा बढ़ती जा रही थी कि न केवल मालिक, बल्कि कोई नौकर-चाकर भी यहां नहीं था और संगीत लगातार बजता जा रहा था। इसी वक़्त उसने मन ही मन सोचा: "बाक़ी तो सब कुछ लाजवाब है, लेकिन खाने को कुछ नहीं।" उसने इतना सोचा ही था कि खूब सजी-धजी मेज़ उसके सामने आ गयी। सोने-चांदी के बर्तनों में तरह-तरह की मिठाइयां, दूर-दराज़ से आई मदिरायें और शहद के शरबत रखे हुए थे। किसी तरह की हिचक-झिझक के बिना वह मेज़ पर बैठ गया, उसने खूब शराब पी और पेट भरकर खाना खाया, क्योंकि चौबीस

घण्टों से एक दाना तक मुंह में नहीं डाला था। फिर भोजन भी तो ऐसा ज़ायक़ेदार था कि बयान से बाहर, आदमी उंगलियां ही चाटता रहे। और वह तो जंगलों तथा रेगिस्तानों में भटकते रहने के कारण भूख से बेहाल था। वह मेज़ से उठा, इतने बढ़िया भोजन के लिये किसको सिर झुकाये, किसको धन्यवाद दे? सौदागर मेज़ से उठा ही था, पीछे मुड़कर देख भी नहीं पाया कि खाने की मेज़ ऐसे ग़ायब हो गयी मानो कभी थी ही नहीं, लेकिन संगीत लगातार बजता जा रहा था।

धनी-मानी सौदागर ऐसे अचम्भे से चकित और ऐसे अजूबे से हैरान होता जा रहा था। वह सजे-धजे कमरों में घूम रहा था, मुग्ध होकर सब कुछ देख रहा था और मन ही मन सोच रहा था: "अब अगर नींद के खर्राटे लिये जायें, तो मज़ा आ जाये!" उसने यह सोचा ही था कि उसे अपने सामने बिल्लौरी पायोंवाला असली सोने का नक़्क़ाशीदार पलंग दिखाई दिया जिस पर झालरों और मोती के गुच्छों से सजा हुआ रुपहला पर्दा लगा हुआ था। हंस के बहुत ही मुलायम रोयों से भरा हुआ गद्दा उसपर टीले की तरह ऊंचा उभरा हुआ था।

सौदागर इस नये अजूबे, नये और अनूठे करिश्मे से हैरान हो रहा था। वह ऊंचे पलंग पर लेट गया, उसने चांदी का पर्दा गिरा दिया और देखा कि वह पतला और ऐसा मुलायम है मानो रेशमी हो। कमरे में शाम के वक़्त जैसा झुटपुटा हो गया और संगीत मानो कहीं दूर से सुनाई देने लगा। उसने सोचा: "काश, सपने में ही मुझे मेरी बेटियां दिखाई दे जायें!" और इसी क्षण उसकी आंख लग गयी।

सौदागर की आंख खुली तो देखा कि सूरज वृक्ष से ऊपर उठ चुका है। वह जाग तो गया, लेकिन उसके होश-हवास पूरी तरह ठिकाने नहीं आ रहे थे – रात भर वह सपने में अपनी स्नेहमयी, अच्छी और सुन्दर बेटियों को देखता रहा था। उसने देखा था कि सबसे बड़ी और मंझली बेटी ख़ुश, बहुत ख़ुश हैं और केवल सबसे छोटी, उसकी लाड़ली बेटी ही उदास है। उसने यह भी देखा कि बड़ी और मंझली बेटी के धनी मंगेतर भी हैं तथा वे पिता के आशीर्वाद की प्रतीक्षा किये बिना ही शादी करने जा रही हैं। सबसे छोटी, लाड़ली और मूरत जैसी ख़ूबसूरत बेटी प्यारे पिता के लौटने से पहले मंगेतर का नाम तक नहीं सुनना चाहती थी। पिता का मन ख़ुश भी हुआ और दुखी भी।

सौदागर ऊंचे पलंग से उठा, उसे अपने कपड़े सामने तैयार रखे मिले और एक बड़े बिल्लौरी प्याले में पानी का फ़व्वारा चल रहा था। उसने कपड़े पहने, हाथ-मुंह धोया और अब किसी भी नये अजूबे से उसे हैरानी नहीं हो सकती थी – मेज़ पर चाय और कॉफ़ी तथा मिठाइयां रखी थीं। उसने भगवान को याद किया, खाया-पिया और फिर से कमरों में चक्कर लगाने लगा, ताकि सूरज की रोशनी में फिर से उन्हें अच्छी

तरह से देखे। उसे हर चीज़ पिछले दिन से बेहतर प्रतीत हुई। उसने खुली खिड़कियों में से बाहर झांककर देखा, तो पाया कि महल के चारों तरफ़ अद्भुत-अनूठे फलोंवाले बाग़ हैं और इतने सुन्दर फूल खिले हैं जिनका वर्णन सम्भव नहीं। उसका मन हुआ कि उन बाग़ों में सैर करे।

सौदागर दूसरे, हरे संगमरमर और मेलाकाइट के ज़ीने से, जिसके दोनों ओर सुनहरे जंगले लगे थे, नीचे उतरा और सीधा हरे-भरे बाग़ों में पहुंच गया। वह वहां घूमने और मन्त्रमुग्ध होकर उन्हें देखने लगा – पेड़ों पर पके हुए, लाल-लाल फल लटक रहे थे मानो कह रहे हों – लो, हमें मुंह में डाल लो। नहीं, यह कहना ज़्यादा सही होगा कि उन्हें देखकर मुंह में पानी भर-भर आता था। बहुत ही सुन्दर फूल खिले हुए थे, घनी पंखुड़ियों और ख़ुशबूवाले, रंग-बिरंगे। अनदेखे, ऐसे पक्षी उड़ रहे थे मानो हरी और लाल मख़मल पर सोने और चांदी से सजे हुए हों। वे जन्नत जैसे मधुर तराने गा रहे थे। बहुत ऊंचे-ऊंचे फ़व्वारे चल रहे थे जिन्हें देख पाने के लिये सिर को पीछे की ओर करना पड़ता था। बिल्लौरी तल में पानी के चश्मे तेज़ी से बह रहे थे, शोर मचा रहे थे।

धनी-मानी सौदागर घूम रहा था, हैरान हो रहा था। इतने अधिक अजूबे थे कि उसकी नज़र कहीं टिक नहीं पाती थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या देखे और क्या सुने। वह इसी तरह बहुत देर तक घूमता रहा या थोड़ी देर तक – कहना मुश्किल है। क़िस्सा-कहानी सुनाने में इतना वक़्त नहीं लगता जितना काम करने में। अचानक उसने छोटे-से हरे-भरे टीले पर अनदेखी-अनजानी सुन्दरतावाला सुर्ख़ रंग का ऐसा फूल देखा जिसे न क़िस्से में बयान किया जा सके और न क़लम से लिखा जा सके। धनी-मानी सौदागर का दिल ज़ोर से धड़क उठा। वह इस फूल के पास गया। उसकी ख़ुशबू मानो धारा की तरह सारे बाग़ में बहती जा रही थी, सब कुछ महक रहा था। उत्तेजना से सौदागर के हाथ-पांव कांपने लगे और वह ख़ुशी भरी आवाज़ में कह उठा:

"यह है वह सुर्ख़ फूल जिससे बढ़कर ख़ूबसूरत कोई दूसरा फूल इस दुनिया में नहीं और मेरी सबसे छोटी, लाड़ली बेटी ने यही लाने का अनुरोध किया है।"

ऐसा कहकर वह सुर्ख़ फूल के क़रीब गया और उसे तोड़ लिया। इसी क्षण बादलों के बिना बिजली कड़की-कौंधी, घन-गर्जन हुआ, यहां तक कि पैरों के नीचे ज़मीन भी कांप उठी और मानो धरती फाड़कर न तो दरिन्दे जैसा दरिन्दा, न आदमी जैसा आदमी, बल्कि अजीब और भयानक सूरतवाला झबरीला-सा प्राणी सौदागर के सामने प्रकट हुआ और वहशियाना आवाज़ में गरजा:

"यह तुमने क्या कर डाला? तुमने मेरे बाग़ में मेरे प्यारे फूल को तोड़ने की कैसे जुर्रत की जिसके लिये मनाही है? मैं आंख की पुतली की तरह उसे प्यार करता

था और उसे देखकर ही राहत पाता था। लेकिन तुमने मेरी ज़िन्दगी का सारा सुख-चैन छीन लिया। मैं इस महल और बाग़ का मालिक हूं, मैंने एक प्यारे और अच्छे मेहमान की तरह तुम्हारा स्वागत किया, तुम्हें खिलाया-पिलाया और तुम्हारे लिये मीठी नींद सोने की व्यवस्था की। लेकिन तुमने मेरी भलाई का मुझे क्या बदला दिया? तो अब तुम अपनी बुरी क़िस्मत का फ़ैसला सुन लो – अपने इस क़ुसूर के लिये तुम्हें वक़्त से पहले ही मरना होगा! .."

और सभी ओर से असंख्य भयानक आवाज़ें चिल्ला उठीं:

"तुम्हें वक़्त से पहले ही मरना होगा! .."

धनी-मानी सौदागर की तो डर के मारे घिग्घी बंध गयी। उसने अपने इर्द-गिर्द नज़र दौड़ाई और देखा कि हर वृक्ष तथा हर झाड़ी, पानी और ज़मीन के नीचे से अनेक भयानक और बेहद दहशत पैदा करनेवाले राक्षस उसकी ओर बढ़ते आ रहे हैं। वह, बड़े मालिक, झबरीले दानव के पैरों पर गिर पड़ा और दर्दभरी आवाज़ में बोला:

"ख़ुदा के अच्छे बन्दे, जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे, क्या नाम है तुम्हारा – मैं नहीं जानता, मुझे मालूम नहीं! इस मासूम जुर्रत के लिये तुम मुझ ईसाई की आत्मा की हत्या नहीं करो, मेरे टुकड़े-टुकड़े करने, मुझे सज़ा देने का हुक्म नहीं दो, मुझे कुछ कहने की इजाज़त दो। मेरी तीन बेटियां हैं, तीन बहुत ही सुन्दर, अच्छी और स्नेहमयी बेटियां हैं। मैंने तीनों के लिये एक-एक तोहफ़ा लेकर जाने का वचन दिया था – बड़ी बेटी के लिये हीरों से जड़ा सोने का मुकुट, मंझली बेटी के लिये बिल्लौरी आईना और सबसे छोटी बेटी के लिये सुर्ख़ फूल, जिससे बढ़कर ख़ूबसूरत दूसरा फूल दुनिया में न हो। बड़ी बेटियों के तोहफ़े तो मैंने खोज लिये, मगर छोटी बिटिया का तोहफ़ा नहीं खोज पाया। ऐसा सुर्ख़ फूल मुझे तुम्हारे बाग़ में दिखाई दिया जिससे बढ़कर ख़ूबसूरत कोई दूसरा फूल दुनिया में नहीं। मैंने सोचा कि ऐसे धनी, बेहद धनी, ऐसे अच्छे और शक्तिशाली स्वामी को इस सुर्ख़ फूल के लिये, जिसकी मेरी छोटी और सबसे प्यारी बेटी ने फ़रमाइश की थी, अफ़सोस नहीं होगा। मालिक, तुम्हारे सामने मैं अपने इस क़ुसूर के लिये बहुत पछता रहा हूं। मुझ मुर्ख और बुद्धिहीन को तुम माफ़ कर दो, मुझे अपनी प्यारी बेटियों के पास घर जाने दो और मेरी छोटी, सबसे लाड़ली बेटी के लिये यह फूल तोहफ़े के तौर पर मुझे दे दो। इसके बदले में मैं तुम्हें जितना भी चाहोगे, सोना-चांदी दे दूंगा।"

जंगल में ऐसा ज़ोरदार ठहाका गूंजा मानो घन-गर्जन हुआ हो और जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे ने सौदागर को जवाब दिया:

"नहीं चाहिये मुझे तुम्हारा सोना – अपने सोने का ही क्या करूं, यह नहीं जानता। तुम मुझसे रहम की उम्मीद नहीं करो और मेरे वफ़ादार नौकर तुम्हारे टुकड़े-

टुकड़े कर देंगे, तुम्हारा क़ीमा बना देंगे। तुम्हारे ज़िन्दा बचने की सिर्फ़ एक ही सूरत है। मैं इस शर्त पर तुम्हें सही-सलामत घर जाने दे सकता हूं, साथ में बेशुमार दौलत भी दूंगा, सुर्ख़ फूल भी ले जाने दूंगा, अगर तुम मुझे सौदागर का सच्चा वचन दो, अपने हाथ से यह रुक़्क़ा भी लिख दो कि अपने बदले में अपनी एक प्यारी और सुन्दर बेटी को मेरे पास भेज दोगे। मैं किसी भी तरह उसका दिल नहीं दुखाऊंगा, वह यहां उसी तरह इज़्ज़त और आज़ादी से रहेगी जैसे तुम ख़ुद मेरे महल में रहे हो। अकेले रहते-रहते मेरा मन ऊब गया है और अब मैं अपनी एक संगिनी चाहता हूं।"

सौदागर नम धरती पर गिर पड़ा और फूट फूटकर रोने लगा। वह जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे की ओर देखता, अपनी प्यारी और सुन्दर बेटियों को याद करता और रोंगटे खड़े करनेवाली आवाज़ में पहले से भी ज़्यादा ज़ोर से रोने लगता – बहुत ही भयानक था जंगली दरिन्दा, अजीब समुद्री बाशिन्दा। नामी सौदागर बहुत देर तक ग़म में घुलता रहा, ज़ार-ज़ार आंसू बहाता रहा और फिर दर्द भरी आवाज़ में बोला:

"ख़ुदा के अच्छे बन्दे, जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे! अगर मेरी प्यारी और सुन्दर बेटियों में से कोई भी अपनी इच्छा से तुम्हारे पास नहीं आना चाहेगी, तब मैं क्या करूंगा? मैं हाथ-पांव बांधकर ज़बर्दस्ती तो किसी को तुम्हारे पास भेज नहीं सकता! फिर तुम्हारे यहां तक पहुंचा भी कैसे जाये? मैं पूरे दो साल में तुम्हारे पास पहुंचा हूं और किन जगहों तथा किन रास्तों से यहां आया हूं, मुझे कुछ मालूम नहीं।"

जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे ने सौदागर को जवाब दिया:

"मुझे बन्दी की ज़रूरत नहीं, तुम्हारी बेटी तुम्हारे प्यार की ख़ातिर, अपनी इच्छा और अपनी चाह से यहां आये। और अगर तुम्हारी कोई भी बेटी अपनी इच्छा, अपनी चाह से यहां आने को तैयार न हो, तो तुम ख़ुद वापिस आ जाना और तब मैं बेरहमी से तुम्हारी जान लेने का हुक्म दूंगा। मेरे यहां तक पहुंचा कैसे जाये – तुम्हें इसकी फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं। मैं अपने हाथ से एक अंगूठी उतारकर तुम्हें दे दूंगा। जो कोई भी उसे अपने दायें हाथ की छोटी उंगली में पहन लेगा, वह जहां चाहेगा, एक क्षण में वहीं पहुंच जायेगा। मैं तुम्हें तीन दिन और तीन रातों तक घर पर रहने की मोहलत देता हूं।"

सौदागर सोचता रहा, गहरी सोच में डूबा रहा और आख़िर इस नतीजे पर पहुंचा: "यही ज़्यादा अच्छा होगा कि मैं अपनी बेटियों से मिल लूं, उन्हें अपना आशीर्वाद दूं और अगर वे मेरी जान बचाना नहीं चाहेंगी, तो एक ईसाई का फ़र्ज़ पूरा करते हुए मैं मरने के लिये इस जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे के पास लौट आऊंगा।"

उसके मन में छल-कपट बिल्कुल नहीं था और इसलिये उसने सच-सच वही कह दिया जो सोचा था। जंगली दरिन्दा, अजीब समुद्री बाशिन्दा पहले से ही उसके मन के भावों को जानता था। उसकी सचाई से ख़ुश होकर उसने उसके हाथ का लिखा रुक़्क़ा भी नहीं लिया, अपने हाथ से सोने की अंगूठी उतारी और नामी सौदागर को दे दी।

धनी-मानी सौदागर ने दायें हाथ की छोटी उंगली में अंगूठी पहनी ही थी कि वह अपने घर के खुले अहाते में पहुंच गया। इसी वक़्त वफ़ादार नौकरों के साथ उसके धन-दौलत के कारवां फाटकों को लांघकर भीतर जा रहे थे और वे पहले की तुलना में तिगुनी दौलत और माल-ख़ज़ाने लाये थे। घर में तो ख़ुशी का शोर मच गया, बेटियां रेशमी रूमालों पर सोने-चांदी के तारों की अपनी कढ़ाई छोड़कर बाहर भागी आयीं। वे अपने पिता को चूमने, तरह-तरह से प्यार जताने और प्यारे-प्यारे नामों से सम्बोधित करने लगीं। दोनों बड़ी बहनें छोटी की तुलना में ज़्यादा ही चापलूसी कर रही थीं। उन्होंने देखा कि पिता ख़ुश नहीं हैं और उनके दिल में कहीं कोई दुख छिपा हुआ है। बड़ी बेटियां पूछने लगीं कि कहीं पिता जी की बेशुमार दौलत तो नहीं खो गयी। लेकिन छोटी बेटी धन-दौलत की बात ही नहीं सोच रही थी। उसने पिता से कहा:

"मुझे आपकी दौलत की ज़रूरत नहीं। दौलत तो आनी-जानी चीज़ है। आप मुझे यह बतायें कि किस कारण दुखी हैं।"

तब धनी-मानी सौदागर ने अपनी प्यारी, अच्छी और सुन्दर बेटियों से कहा:

"अपनी बेशुमार दौलत मैंने नहीं खोई और मेरा ख़ज़ाना पहले से तिगुना-चौगुना हो गया है। मेरा दिल किसी और वजह से दुखी है। उसके बारे में मैं कल बताऊंगा और आज तो हम मौज करेंगे।"

उसने लोहे से मढ़े हुए अपने सफ़री सन्दूक़ लाने का हुक्म दिया, बड़ी बेटी को न तो आग में जलने, और न पानी में ज़ंग खानेवाले अरबी सोने का हीरों से जड़ा हुआ मुकुट निकालकर दिया और मंझली बेटी को पूर्वी बिल्लौर का आईना भेंट किया। इसके बाद सौदागर ने सुर्ख़ फूल समेत सोने की गगरी छोटी बेटी को दी। बड़ी बेटियां तो ख़ुशी से मानो दीवानी हो गयीं, अपनी अट्टालिकाओं में तोहफ़ों को ले गयीं और वहां उन्हें जी भरकर देखती और ख़ुश होती रहीं। केवल छोटी, सबसे ज़्यादा प्यारी बेटी ही सुर्ख़ फूल को देखकर सिर से पांव तक कांप उठी और फूट-फूटकर रोने लगी मानो उसके दिल पर किसी ने बड़ी चोट की हो।

तब पिता ने उससे यह कहा:

"मेरी प्यारी, मेरी लाड़ली बिटिया, तुम अपना मनचाहा फूल क्यों नहीं लेती हो? इससे ज़्यादा ख़ूबसूरत कोई दूसरा फूल इस दुनिया में नहीं है!"

छोटी बेटी ने मानो मन मारकर सुर्ख़ फूल ले लिया, पिता के हाथों को चूमा, लेकिन आंखों से आंसुओं की झड़ी लगा दी। कुछ देर बाद दोनों बड़ी बेटियां भी आ गयीं, उन्होंने पिता के तोहफ़ों को अच्छी तरह से देख लिया था और उनकी ख़ुशी का कोई ठिकाना नहीं था। वे सभी बलूत की लकड़ी की मेज़ के गिर्द बैठ गये, जिस पर बेल-बूटोंवाला मेज़पोश बिछा हुआ था, तरह-तरह की मिठाइयां और शहद के शरबत रखे हुए थे। बाप-बेटियां खाने-पीने, ख़ुश होने और मीठी-मीठी बातें करने लगे।

शाम को मेहमान आ गये, सौदागर का घर प्यारे अतिथियों, रिश्तेदारों, चापलूसों और टुकड़खोरों से भर गया। आधी रात तक गपशप चलती रही और ऐसी बढ़िया दावत रही जैसी धनी-मानी सौदागर ने अपने घर में कभी देखी-जानी नहीं थी। कहां से इतनी चीज़ें आती जा रही थीं, उसके लिये अनुमान लगाना सम्भव नहीं था और सब लोग भी अधिकाधिक हैरान होते जाते थे। सोने-चांदी के बर्तन और ऐसे ज़ायकेदार पकवान तथा मिठाइयां सामने आ रही थीं, जैसी उसने अपने घर में पहले कभी नहीं देखी थीं।

सुबह होने पर सौदागर ने बड़ी बेटी को अपने पास बुलाया, उसके साथ जो कुछ बीती थी, विस्तार से सब कुछ कह सुनाया और पूछा कि उसे भयानक मौत से बचाने के लिये वह जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे के पास जाकर रहने को तैयार है या नहीं।

बड़ी बेटी ने साफ़ इन्कार कर दिया और बोली:

"वही बेटी अब आपकी जान बचाये जिसके लिये आप सुर्ख़ फूल लाये।"

धनी-मानी सौदागर ने मंझली बेटी को अपने पास बुलाया, उसके साथ जो कुछ बीती थी, विस्तार से सब कुछ कह सुनाया और पूछा कि उसे भयानक मौत से बचाने के लिये वह जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे के पास जाकर रहने को तैयार है या नहीं।

मंझली बेटी ने साफ़ इन्कार कर दिया और बोली:

"वही बेटी अब आपकी जान बचाये जिसके लिये आप सुर्ख़ फूल लाये।"

धनी-मानी सौदागर ने सबसे छोटी बेटी को अपने पास बुलाया और उसके साथ जो कुछ बीती थी, सब कुछ सविस्तार बताने लगा। वह अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाया था कि सबसे छोटी, लाड़ली बेटी घुटनों के बल हो गयी और बोली:

"मुझे अपना आशीर्वाद दीजिये, पिता जी। मैं जाकर रहूंगी जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे के पास। मेरे लिये ही आप सुर्ख़ फूल लाये हैं, मुझे ही आपकी ज़ान बचानी चाहिये।"



धनी-मानी सौदागर रोने लगा, उसने अपनी छोटी, लाड़ली बेटी को गले लगाया और यह कहा:

"मेरी प्यारी, सुन्दर, सबसे छोटी और लाड़ली बेटी! मेरा आशीर्वाद तो तुम्हारे साथ होगा ही, क्योंकि तुम मुझे, अपने पिता को भयानक मौत से बचा रही हो और अपनी इच्छा तथा चाह से जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे के पास रहने जा रही हो। तुम उसके यहां महल में, धन-दौलत से घिरी हुई और स्वतन्त्रता से रहोगी। लेकिन वह महल कहां है, कोई नहीं जानता, किसी को यह मालूम नहीं। न तो कोई घोड़े पर सवार होकर, न पैदल ही वहां पहुंच सकता है, न तो किसी तेज़ जानवर और न पक्षी के लिये ही ऐसा करना सम्भव है। हमें न तो तुम्हारी कोई ख़बर मिलेगी, न सुध-सार ही और तुम तक तो हमारी ख़बर निश्चय ही नहीं पहुंचेगी। तुम्हारा प्यारा मुखड़ा देखे बिना, तुम्हारे मीठे वचन सुने बिना में अपना यह कटु जीवन कैसे बिताऊंगा? मैं तुमसे सदा के लिये जुदा हो रहा हूं, मानो तुम्हें ज़िन्दा ही धरती में दफ़ना रहा हूं।"

सबसे छोटी, लाड़ली बेटी ने जवाब दिया:

"आप रोयें नहीं, दुखी नहीं हों, प्यारे पिता – मैं ठाठ-बाट और आज़ादी की ज़िन्दगी बिताऊंगी। जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे से डरूंगी नहीं, धर्म-ईमान से उसकी सेवा करूंगी, उसकी, अपने मालिक की हर इच्छा पूरी करूंगी और बहुत सम्भव है कि उसे मुझ पर दया आ जाये। आप मेरे ज़िन्दा होते हुए मुझे मुर्दा मानकर रोयें नहीं। भगवान ने चाहा तो मैं आपके पास लौट आऊंगी।"

धनी-मानी सौदागर रो रहा था. उसकी हिचकियां बंधी हुई थीं, बेटी के शब्दों से उसके दिल को चैन नहीं मिल रहा था।

दोनों बड़ी बहनें भी आ गयीं और पूरे घर में रोना-धोना मच गया – मानो उन्हें भी अपनी छोटी, लाड़ली बहन के लिये दुख हो रहा था। लेकिन सबसे छोटी बहन तो माथे पर शिकन भी नहीं ला रही थी, न रोती थी, न आह-ओह करती थी और लम्बी अनजानी मंज़िल की तैयारी कर रही थी। उसने सोने की गगरी में रखा हुआ सुर्ख़ फूल भी साथ ले लिया।

तीसरा दिन और तीसरी रात भी बीत गयी, धनी-मानी सौदागर के लिये अपनी छोटी, लाड़ली बेटी से अलग होने का वक़्त आ गया। वह उसे बार-बार चूम रहा था, उसके साथ लाड़-दुलार कर रहा था, आंसुओं से अपना मुंह धो रहा था और आशीर्वाद देते हुए उस पर सलीब का निशान बना रहा था। उसने लोहे से मढ़ी मंजूषा में से जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे की अंगूठी निकाली, लाड़ली बेटी के दायें हाथ

की छोटी उंगली में पहनाई और आन की आन में लाड़ली बेटी और उसका सारा सामान भी ग़ायब हो गया।

सौदागर की सबसे छोटी बेटी ने अचानक अपने को जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे के पत्थर के बने ऊंचे-ऊंचे कमरोंवाले महल में बिल्लौरी पायोंवाले सोने के नक़्क़ाशीदार पलंग पर पाया। पलंग पर हंस के रोयों का मुलायम गद्दा बिछा था और वह बेल-बूटोंवाली सुनहरी, रेशमी चादर से ढका हुआ था। वह तो मानो यहां से कहीं गयी ही नहीं थी, ज़िन्दगी भर यहीं रही थी, मानो सोने के लिये लेटी थी और अब जाग गयी थी। ऐसा मधुर संगीत बजने लगा जैसा कि उसने अपने जीवन में पहले कभी नहीं सुना था।

वह अपने रोयोंवाले मुलायम पलंग से उठी और उसने देखा कि उसका सारा सामान तथा सुर्ख़ फूल सहित सोने की गगरी भी यहीं है और सामान मेलाकाइट की सज्जा-वाली मेज़ों पर ढंग से रखा हुआ है। कमरे में बहुत-सी क़ीमती चीज़ें हैं, आराम से बैठने-लेटने की व्यवस्था है, बदलने के लिये बहुत-सी पोशाकें और आईना भी है। एक दीवार पूरी तरह शीशे की थी, दूसरी सुनहरी, तीसरी रुपहली और चौथी हाथी दांत तथा महागज के दांत की जिसमें लाल और नीलम जड़े हुए थे। उसने सोचा: "यह मेरा सोने का कमरा होना चाहिये।"

सारा महल देखने को उसका मन हुआ और वह उसके सारे ऊंचे-ऊंचे कमरे देखने चल दी। सभी तरह के अजूबों को मुग्ध होकर देखते हुए वह बहुत देर तक महल का चक्कर लगाती रही। एक कमरा दूसरे से अधिक सुन्दर था और सब कुछ उससे कहीं बढ़कर सुन्दर था जैसा कि उसके धनी-मानी पिता नें उसे बताया था। उसनें सुनहरी गगरी में रखा हुआ अपना प्यारा सुर्ख़ फूल लिया और हरे-भरे बाग़ में चली गयी। वहां परिन्दों ने अपने जन्नती तराने छेड़ दिये और वृक्षों, झाड़ियों तथा फूलों ने अपनी फुनगियां ऐसे हिलानी शुरू कीं मानो सिर झुकाकर उसे नमस्कार कर रहे हों। फ़व्वारे अधिक ऊंची जल-धारायें छोड़ने लगे और चश्मे अधिक ज़ोर से बहते हुए ज़्यादा शोर करने लगे। उसने हरे-भरे टीले पर वह ऊंची जगह ढूंढ़ ली, जहां से धनी-मानी सौदागर ने वह सुर्ख़ फूल तोड़ा था जिससे ज़्यादा ख़ूबसूरत दूसरा फूल इस दुनिया में नहीं था। उसने सुनहरी गगरी में से वह सुर्ख़ फूल निकाला और उसे पहलेवाली जगह पर लगाना चाहा। लेकिन वह तो ख़ुद ही उसके हाथ से उड़कर टहनी पर जा लगा और पहले से भी ज़्यादा सुन्दर बनकर खिल उठा।

वह ऐसे अजूबे, ऐसे करिश्मे से दंग रह गयी, अपने सुर्ख़ और मनपसन्द फूल को देखकर ख़ुश हुई तथा अपने महल के कमरों की ओर वापस चल दी। उनमें से एक कमरे में मेज़ पर खाना लगा हुआ था। उसने अपने मन में यह सोचा ही था कि "लगता है, जंगली दरिन्दा, अजीब समुद्री बाशिन्दा मुझसे नाराज़ नहीं है और वह मेरा

मेहरबान मालिक बनेगा," कि संगमरमर की सफ़ेद दीवार पर ये शब्द जगमगा उठे:

"मैं तुम्हारा मालिक नहीं, हुक्म बजानेवाला गुलाम हूं। तुम मेरी मालकिन हो और जो कुछ भी तुम चाहोगी, तुम्हारी जो भी इच्छा होगी, मैं बड़ी ख़ुशी से उसे पूरा करूंगा।"

उसने जगमगाते शब्द पढ़े और वे सफ़ेद संगमरमर की दीवार से ऐसे ग़ायब हो गये मानो वहां कभी लिखे ही नहीं गये थे। अचानक उसके दिमाग़ में यह ख़्याल आया कि वह अपने पिता को ख़त लिखे और उन्हें अपने बारे में बताये। उसने ऐसा सोचा ही था कि उसे अपने सामने काग़ज़, सोने की लेखनी और दवात दिखाई दी। वह प्यारे पिता और स्नेहमयी बहनों को पत्र लिखने लगी:

"मेरे लिये रोने-धोने और दुखी होने की ज़रूरत नहीं। मैं जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे के महल में शहज़ादी की तरह रहती हूं। ख़ुद उसे तो न मैं देखती हूं, न उसकी आवाज़ सुनती हूं। वह संगमरमर की सफ़ेद दीवार पर लिखे गये जगमगाते शब्दों द्वारा अपनी बात मुझसे कहता है। मेरे दिल-दिमाग़ में जो कुछ होता है, उसे उस सब की ख़बर रहती है और उसी क्षण मेरी इच्छा पूरी कर देता है। वह यह नहीं चाहता कि मैं उसे अपना मालिक कहूं, मगर मुझे अपनी मालकिन कहता है।"

उसने पत्र लिखा ही था और बन्द करके मुहर लगायी ही थी कि वह उसके हाथ और नज़र से ऐसे ग़ायब हो गया मानो वहां कभी था ही नहीं। संगीत पहले से अधिक ज़ोर से बजने लगा और मेज़ पर तरह-तरह के मिष्टान्न-पकवान, शहद के शरबत और असली सोने के बर्तन रखे दिखाई दिये। वह बहुत ख़ुश-ख़ुश मेज़ पर बैठी, गो उसने आज तक कभी भी अकेले ही भोजन नहीं किया था। उसने खाया-पिया, आनन्द-विभोर होते हुए संगीत का रस पान किया। दोपहर का भोजन करने के बाद वह सोने के लिये लेट गयी। संगीत धीमे-धीमे और कहीं दूरी पर बजने लगा, ताकि उसकी नींद में ख़लल न पड़े।

नींद के बाद वह बहुत ख़ुश-ख़ुश जागी और फिर से हरे-भरे बाग-बगीचों में घूमने चल दी, क्योंकि दोपहर के भोजन के पहले वह उनके आधे भाग में भी नहीं घूम सकी थी, उनके सभी अजूबे नहीं देख पायी थी। सारे पेड़, झाड़ियां और फूल उसके सामने झुकते थे तथा पके हुए फल – नाशपातियां, आड़ू और रसीले सेब – मानो ख़ुद ही मुंह में आते थे। काफ़ी देर तक, हम कह सकते हैं कि शाम तक घूमने के बाद वह ऊंची-ऊंची छतोंवाले अपने कमरों में लौटी और उसने देखा – खाने की मेज़ लगी हुई है और उस पर तरह-तरह के बहुत बढ़िया मिष्टान्न-पकवान तथा शहद के शरबत रखे हुए हैं।

रात का भोजन करने के बाद वह सफ़ेद संगमरमर के उस कमरे में गयी, जहां उसने दीवार पर जगमगाते शब्द पढ़े थे। उसी दीवार पर उसे फिर से वैसे ही जगमगाते हुए ये शब्द दिखाई दिये:

"मेरी मालकिन, आप अपने बाग-बगीचों और कमरों, खान-पान और नौकरों-चाकरों से खुश हैं या नहीं?"

सौदागर की जवान और मूरत-सी ख़ूबसूरत बेटी ने खुशी भरी आवाज़ में जवाब दिया:

"तुम मुझे अपनी मालकिन नहीं कहो, बल्कि हमेशा मेरे दयालु, स्नेहशील और कृपालु मालिक बने रहो। मैं तुम्हारी इच्छा की कभी अवहेलना नहीं करूंगी। तुम्हारी खातिरदारी के लिये बहुत-बहुत धन्यवाद देती हूं। तुम्हारे ऊंची-ऊंची छतोंवाले कमरों और हरे-भरे बाग-बगीचों से बेहतर दुनिया में और कहां मिलेंगे? भला मैं कैसे खुश नहीं होऊंगी? मैंने ज़िन्दगी में कभी ऐसे अजूबे देखे ही नहीं। ऐसे चमत्कारों से मैं तो चकित हुई जा रही हूं। लेकिन मुझे अकेले सोते हुए डर लगता है। ऊंची छतोंवाले तुम्हारे इन कमरों में आदमी का नाम-निशान ही नहीं है।"

दीवार पर जगमगाते शब्द दिखाई दिये:

"मेरी सुन्दर मालकिन, तुम डरो नहीं, तुम अकेली नहीं सोओगी, तुम्हारी प्यारी और वफ़ादार नौकरानी तुम्हारा इन्तज़ार कर रही है। इन कमरों में अनेक इन्सान हैं, सिर्फ़ तुम उन्हें न तो देखती हो और न सुनती हो। मेरे साथ वे सभी दिन-रात तुम्हारी रक्षा करते हैं। क्या मजाल कि कोई तुम्हारा बाल भी बांका कर सके, तुम्हें किसी तरह की तकलीफ़ देने पाये।"

सौदागर की जवान, मूरत जैसी ख़ूबसूरत बेटी सोने के लिये अपने शयनकक्ष में गयी। वहां उसने देखा कि उसकी अपनी वफ़ादार और प्यारी नौकरानी, जिसकी डर के मारे जान निकली जा रही थी, उसके पलंग के पास खड़ी है। अपनी मालकिन को देखकर वह बहुत खुश हुई, उसके गोरे-गोरे हाथों को चूमने तथा फुर्तीले पैरों को बांहों में भरने लगी। मालकिन को भी बेहद खुशी हुई, वह उससे अपने पिता और बड़ी बहनों तथा नौकरानियों के बारे में पूछ-ताछ करने लगी। इसके बाद यह बताने लगी कि यहां खुद उसका वक़्त कैसे बीता है और इसी तरह एक-दूसरी की बातें सुनते-सुनाते भोर हो गया।

तो इस तरह सौदागर की मूरत जैसी ख़ूबसूरत बेटी यहां चैन से रहने-सहने लगी। हर दिन उसके लिये नयी-नयी और बढ़िया पोशाकें तैयार रहतीं, उसे अमूल्य ज़ेवर-गहने पहनने को दिये जाते जिन्हें न क़िस्से-कहानी में बयान किया जाये, न क़लम से लिखा जाये। हर दिन नये-नये और बढ़िया मिष्टान्नों-पकवानों से उसकी खातिरदारी की जाती, मनोरंजन के साधन जुटाये जाते – घने जंगलों में घोड़ों और साज़ के बिना स्लेजों-

बग्घियों में बाजों-गाजों के साथ सैर-सपाटे होते। घने जंगल उसके सामने पीछे हट जाते और उसके लिये बहुत चौड़ा-चौड़ा तथा समतल रास्ता बना देते। वह युवतियों के अनुरूप कशीदाकारी करने लगी, सोने-चांदी के तारों से रूमाल काढ़ने लगी और झालरों में मोती पिरोने लगी। उसने इन्हें अपने प्यारे पिता को उपहार के रूप में भेजा और सबसे अच्छा रूमाल अपने स्नेहशील स्वामी, जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे को भेंट किया। वह संगमरमरवाले कमरे में हर दिन अधिकाधिक जाने और दीवार पर जगमगाते शब्दों में उसके उत्तर तथा अभिवादन पढ़ने लगी।

बहुत समय बीता या थोड़ा, यह कहना मुश्किल है। क़िस्सा-कहानी सुनाने में देर नहीं लगती, काम करने में देर लगती है। सौदागर की जवान, मूरत-सी सुन्दर बेटी अपने रहन-सहन की आदी होने लगी। उसे किसी भी चीज़ से न तो अब हैरानी होती थी और न ही डर लगता था। नज़र न आनेवाले नौकर-चाकर उसकी सेवा करते थे, उसे जिस भी चीज़ की ज़रूरत होती उसके सामने पेश कर देते, वह जो कुछ भी देना चाहती, उसके हाथ से ले लेते, घोड़ों के बिना बग्घियों में उसे सैर कराते, बाजे बजाते और उसकी सभी इच्छायें पूरी करते। अपने दयालु-कृपालु मालिक से उसे हर दिन अधिकाधिक प्रेम होता जा रहा था। वह यह अनुभव करती थी कि वह यों ही उसे अपनी मालकिन नहीं कहता था, बल्कि उसे अपने मे भी ज़्यादा प्यार करता था। सौदागर की बेटी का मन ललकने लगा कि वह उसकी आवाज़ सुने, संगमरमर के कमरे में जाये बिना जगमगाते शब्दों को पढ़े बिना उससे बातचीत करे।

वह इसके लिये उसकी मिन्नत-समाजत करने लगी, मगर जंगली दरिन्दा, अजीब समुद्री बाशिन्दा जल्दी से ऐसा करने को राज़ी नहीं हुआ। उसे शंका थी कि वह उसकी आवाज़ सुनकर डर जायेगी। सौदागर की बेटी अपने स्नेही स्वामी से अनुरोध करती रही, उसकी मिन्नत करती रही। आख़िर वह उसकी बात टाल न सका और उसने अन्तिम बार संगमरमर की दीवार पर जगमगाते हुए ये शब्द लिखे:

"आज तुम हरे-भरे बाग़ में आना, पत्तों, लताओं और फूलों से ढकी अपनी कुंज-कुटीर में बैठकर यह कहना: 'मेरे साथ बात करो, मेरे वफ़ादार ग़ुलाम।'"

थोड़ा-सा समय बीतने पर सौदागर की जवान, मूरत-सी सुन्दर बेटी भागती हुई हरे-भरे बाग़ में गयी, पत्तों, टहनियों और फूलों से ढकी अपनी प्यारी कुंज-कुटीर में जाकर बेंच पर बैठी और हांफते-हांफते बोलने लगी, क्योंकि उसका दिल क़ैद कर लिये गये परिन्दे की तरह धक-धक कर रहा था। उसने कहा:

"मेरे दयालु और स्नेही स्वामी, तुम इस बात की चिन्ता नहीं करो कि मुझे अपनी आवाज़ से डरा दोगे। तुम्हारी इतनी अधिक कृपाओं के बाद तो मैं दरिन्दे की चिंघाड़ से भी नहीं डरूंगी। किसी भी तरह की शंका के बिना मुझसे बात करो।"

उसे कुंज-कुटीर के बाहर मानो किसी की गहरी उसांस सुनाई दी और बड़ी भयानक, वहशियाना, तीखी, खरखरी और फटी-सी आवाज़ सुनाई दी। हां, और



वह तो अभी दबी-दबी आवाज़ में बोल रहा था। सौदागर की जवान, मूरत-सी सुन्दर बेटी जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे की आवाज़ सुनकर कांप उठी, किन्तु उसने अपने डर पर क़ाबू पा लिया और यह ज़ाहिर नहीं होने दिया कि डर गयी है और बहुत जल्द ही उसके स्नेह तथा सौजन्यपूर्ण शब्द, उसके समझदारी और सूझ-बूझ से भरे वाक्यों को वह ध्यान से सुनने लगी और उसका मन खिल उठा।

इस घड़ी, इस क्षण से हरे-भरे बाग-बगीचों, घने जंगलों में सैर-सपाटे के वक़्त और ऊंची-ऊंची छतोंवाले सभी कमरों में लगभग दिन भर इन दोनों के बीच बातचीत होती रहती थी। सौदागर की जवान, मूरत-सी सुन्दर बेटी केवल इतना ही पूछती:

"मेरे दयालु और प्यारे मालिक, तुम यहीं हो न?"

जंगली दरिन्दा, अजीब समुद्री बाशिन्दा उसे उत्तर देता:

"यहीं हूं, मैं तुम्हारा वफ़ादार ग़ुलाम, तुम्हारा सच्चा दोस्त, मेरी सुन्दर मालकिन।"

उसकी भयानक और वहशियाना आवाज़ से वह डरती नहीं थी और उनके बीच अन्तहीन मीठी-मीठी बातें शुरू हो जाती थीं।

बहुत समय बीता या थोड़ा, यह कहना मुश्किल है। क़िस्सा-कहानी सुनाने में देर नहीं लगती, काम करने में देर लगती है। सौदागर की जवान, मूरत-सी ख़ूबसूरत बेटी ने जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे को अपनी आंखों से देखना चाहा और वह इसके लिये उसकी मिन्नत-समाजत करने लगी। बहुत अर्से तक वह इसके लिये राज़ी नहीं हुआ, क्योंकि उसे डराना नहीं चाहता था। वह तो सचमुच ऐसा भयानक था कि न क़िस्से में बयान किया जाये और न क़लम से लिखा जाये। आदमी ही नहीं, दरिन्दे तक हमेशा उससे डरते थे और अपनी मांदों में दुबक जाते थे। जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे ने उससे ये शब्द कहे:

"मेरी बहुत ही सुन्दर, बहुत ही ख़ूबसूरत मालकिन, तुम मुझसे यह अनुरोध नहीं करो कि मैं तुम्हें अपना घृणित चेहरा और बहुत ही भोंडा शरीर दिखाऊं। तुम मेरी आवाज़ की आदी हो गयी हो और हम बड़े हेल-मेल से रहते हैं, लगभग एक-दूसरे से अलग नहीं होते हैं और तुम मुझे मेरे असीम प्यार के बदले में प्यार करती हो। मुझ भयानक और घृणित को देखने के बाद तुम मुझ बदक़िस्मत से नफ़रत करने लगोगी, मुझे अपने से दूर भगा दोगी और तुम्हारे बिना मैं तुम्हारी याद में तड़प-तड़पकर मर जाऊंगा।"

सौदागर की जवान, मूरत-सी ख़ूबसूरत बेटी ऐसी बातों पर कान नहीं देती थी। वह पहले से अधिक आग्रह करने और क़समें खा-खाकर कहने लगी कि दुनिया की किसी भी भयानक से भयानक सूरत से नहीं डरेगी और अपने कृपालु मालिक को इसी तरह प्यार करती रहेगी। उसने उससे ये शब्द कहे:

"अगर तुम बूढ़े हो, तो मेरे लिये दादा के समान होगे, अगर अधेड़ उम्र के, तो चाचा के समान, और अगर जवान हो, तो मुंह बोले भाई के समान और जब तक मैं ज़िन्दा रहूंगी, मेरे सच्चे मित्र बने रहोगे।"

बहुत, बहुत अर्से तक जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे ने इन शब्दों की अवहेलना की, किन्तु अपनी इस सुन्दरी के अनुरोधों और आंसुओं का विरोध करते जाना उसके लिये सम्भव नहीं था। आख़िर उसने ये शब्द कहे:

"मैं इस कारण ही तुम्हारी बात नहीं टाल सकता कि तुम्हें अपनी ज़िन्दगी से ज़्यादा प्यार करता हूं। मैं तुम्हारी इच्छा पूरी कर देता हूं, यद्यपि यह जानता हूं कि अपने सुख का अन्त कर लूंगा और समय से पहले ही मर जाऊंगा। जंगल के पीछे सूरज के छिप जाने और झुटपुटा हो जाने पर तुम हरे-भरे बाग़ में आ जाना और यह कहना:

'मेरे वफ़ादार दोस्त, मेरे सामने आओ!' तब मैं तुम्हें अपना घृणित चेहरा और भोंडा शरीर दिखाऊंगा। अगर तुम्हारे लिये मेरे यहां और अधिक रहना असम्भव हो जाये तो मैं यह नहीं चाहूंगा कि तुम बन्दी की तरह और निरन्तर व्यथा सहते हुए यहां रहो। तुम्हें अपने सोने के कमरे में तकिये के नीचे मेरी सोने की अंगूठी मिल जायेगी। उसे तुम दायें हाथ की छोटी उंगली में पहन लेना, तब तुम अपने पिता के यहां पहुंच जाओगी और मेरे बारे में कभी कुछ नहीं सुनोगी।"

सौदागर की जवान, मूरत जैसी ख़ूबसूरत बेटी न डरी, न घबरायी, उसने अपने पर ही पूरा भरोसा किया। घड़ी भर की देर किये बिना वह मिलन के निश्चित क्षण की प्रतीक्षा करने के लिये उसी समय हरे-भरे बाग़ में चली गयी। जब झुटपुटा हुआ और लाल-लाल सूरज जंगल के पीछे डूब गया, तो उसने कहा: "मेरे वफ़ादार दोस्त, मेरे सामने आओ!" और उसे दूरी पर जंगली दरिन्दा, अजीब समुद्री बाशिन्दा दिखाई दिया। उसने केवल रास्ता लांघा और घनी झाड़ियों में जाकर ग़ायब हो गया। सौदागर की जवान, मूरत जैसी ख़ूबसूरत बेटी की आंखों के सामने अन्धेरा छा गया, उसने अपने गोरे-गोरे हाथ हवा में लहराये, हृदय-विदारक आवाज़ में चीख़ उठी और बेहोश होकर ज़मीन पर गिर पड़ी। हां, बहुत ही भयानक था जंगली दरिन्दा, अजीब समुद्री बाशिन्दा – हाथ टेढ़े-मेढ़े, जानवरों जैसे लम्बे-लम्बे नाख़ून, घोड़े जैसी टांगें, पीठ पर आगे-पीछे ऊंट जैसे कुबड़, सिर से पांव तक बालों से ढका हुआ, मुंह से जंगली सुअरों जैसे सुआ दांत बाहर निकले हुए, नाक उक़ाब जैसी हुकदार और आंखें उल्लुओं जैसी डरावनी।

बहुत देर या थोड़ी देर तक बेहोश पड़ी रहने के बाद सौदागर की जवान, मूरत जैसी ख़ूबसूरत बेटी होश में आई। उसे सुनाई दिया कि कोई उसके निकट ही रो रहा है, आंसुओं से मुंह धो रहा है और दर्द भरी आवाज़ में कह रहा है:

"मेरी प्यारी, रूप-रानी, तुमने मुझे मार डाला, मैं तुम्हारा यह चांद-सा मुखड़ा अब और अधिक नहीं देख पाऊंगा, तुम तो अब मेरी आवाज़ भी नहीं सुनना चाहोगी और इसलिये मुझे वक़्त से पहले ही मरना होगा।"

सौदागर की बेटी को दया और शर्म भी आई, उसने अपने डर और युवती के डरपोक दिल पर क़ाबू पाया तथा दृढ़ आवाज़ में बोली:

"मेरे दयालु और स्नेही मालिक, ऐसी किसी बात की चिन्ता नहीं करो। तुम्हारी भयानक सूरत से मैं अब नहीं डरूंगी, तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगी, तुम्हारी मेहरबानियों को नहीं भूलूंगी। तुम मुझे अब फिर से अपनी सूरत दिखाओ। मैं तो सिर्फ़ शुरू में ही डर गयी थी।"

जंगली दरिन्दा, अजीब समुद्री बाशिन्दा अपने भयानक, घृणित और भोंडे रूप में सामने आया, किन्तु बहुत बुलाने पर भी उसके निकट नहीं गया। रात का अन्धेरा गहराने तक वे दोनों घूमते रहे, पहले जैसी प्यारी-प्यारी और अच्छी-अच्छी बातें करते रहे। सौदागर की जवान, मूरत-सी ख़ूबसूरत बेटी ने किसी प्रकार का डर महसूस नहीं किया। अगले दिन उसने जंगल के दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे को सूरज की रोशनी में देखा, और यद्यपि शुरू में उसे देखने पर वह डर गयी, तथापि उसने अपना यह डर ज़ाहिर नहीं होने दिया। जल्द ही उसका यह भय पूरी तरह लुप्त हो गया। अब वे पहले से कहीं अधिक घुल-मिल गये – लगभग हर दिन साथ बिताते, दोपहर और शाम के खाने के वक़्त मिलकर मिष्टान्न-पकवान खाते, शहद के शरबत पीते, हरे-भरे बाग़-बगीचों में घूमते और घोड़ों के बिना बग्घियों में अंधेरे जंगलों में सैर-सपाटे करते।

इसी तरह बहुत समय बीत गया – क़िस्सा-कहानी सुनाने में देर नहीं लगती, काम करने में देर लगती है। एक दिन सौदागर की जवान और मूरत-सी ख़ूबसूरत बेटी को सपना आया कि उसके पिता जी बीमार हैं। वह हर वक़्त उदास रहने लगी। जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे ने उसे इसी तरह ग़म में घुलते और आंसू बहाते देखा, वह बेहद बेचैन हो गया और पूछने लगा कि वह इतनी उदास क्यों है, क्यों आंसू बहाती है? उसने उसे अपने बुरे सपने के बारे में बताया और पिता तथा स्नेहमयी बहनों से मिलने के लिये जाने की अनुमति मांगने लगी। जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे ने उससे कहा:

"क्या ज़रूरत है तुम्हें मेरी अनुमति की? मेरी सोने की अंगूठी तुम्हारे पास है, उसे अपनी छोटी उंगली में पहन लो और तुम अपने पिता जी के घर पहुंच जाओगी। जब तक तुम्हारा मन उदास न हो जाये, तुम वहीं रह सकती हो। मैं तो तुम्हें सिर्फ़ इतना कहना चाहता हूं – अगर तुम ठीक तीन दिन और तीन रातों के बाद यहां नहीं लौटोगी, तो मुझे इस दुनिया में जिन्दा नहीं पाओगी। मैं तो केवल इस कारण उसी

क्षण मर जाऊंगा कि तुम्हें अपनी ज़ान से भी ज़्यादा प्यार करता हूं और तुम्हारे बिना ज़िन्दा नहीं रह सकता हूं।"

सौदागर की बेटी धर्म-ईमान की दुहाई दे-देकर और क़समें खा-खाकर यक़ीन दिलाने लगी कि तीन दिन-रातें बीतने के एक घण्टा पहले ही उसके आलीशान कमरों में लौट आयेगी।

उसने अपने स्नेही और दयालु मालिक से विदा ली, दायें हाथ की छोटी उंगली में सोने की अंगूठी पहनी और अपने धनी-मानी पिता के पास तहुंच गयी। वह पत्थर से बनी उसकी शानदार हवेली के ऊंचे ओसारे पर चढ़ ही रही थी कि घर-द्वार के नौकर-चाकर भागते हुए उसके स्वागत को आ गये, शोर मच गया, प्यारी बहनें दौड़ती हुई आयीं और उसे देखकर, उसकी जवानी का अनूठा सौन्दर्य और शाही ठाठ-बाट देखकर दंग रह गयीं। उन्होंने उसकी गोरी-गोरी कलाइयां थामीं और प्यारे पिता के पास ले गयीं। पिता बीमार थे, बीमार और उदास थे, दिन-रात इसी बिटिया को याद करते थे, फूट-फूटकर रोते थे। और अपनी प्यारी, सुन्दर, सबसे छोटी और लाड़ली बेटी को देखकर उनकी ख़ुशी का कोई ठिकाना न रहा, उसका जवानी का अनूठा सौन्दर्य और शाही ठाठ-वाट देखकर दंग रह गये।

बहुत देर तक बाप-बेटी एक-दूसरे को चूमते रहे, लाड़-प्यार और मीठी-मीठी बातें करते रहे। उसने अपने पिता तथा बड़ी, प्यारी बहनों को जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे के यहां अपने रहन-सहन के बारे में सभी कुछ सही-सही कह सुनाया और कुछ भी नहीं छिपाया। धनी-मानी सौदागर अपनी बिटिया के ऐसे रईसी और शाही ठाठ-बाट से बहुत ख़ुश हुआ, उसे इस बात की हैरानी भी हुई कि कैसे वह भयानक मालिक को देखने की आदी हो गयी है, जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे से डरती नहीं है। ख़ुद तो उसके बारे में याद करके ही वह कांप उठा। बड़ी बहनों को छोटी बहन की बेशुमार दौलत और अपने मालिक पर उसके ऐसे अधिकार की बात सुनकर, मानो वह उसका ग़ुलाम हो, ईर्ष्या भी हुई।

एक दिन एक घण्टे की तरह बीत गया, दूसरा दिन क्षण-पल की तरह उड़ गया और तीसरे दिन बड़ी बहनें छोटी बहन से अनुरोध करने लगीं कि वह जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे के पास वापस न जाये। "मरता है तो मरने दो उसे..." किन्तु छोटी बहन, प्यारी अतिथि, बड़ी बहनों पर बिगड़ी और बोली:

"अगर मैं अपने दयालु और स्नेही मालिक को उसकी सारी मेहरबानियों और ऐसे दहकते, उमड़ते प्यार के बदले में, जिसका वर्णन भी सम्भव नहीं, भयानक मौत ही दूंगी, तो मैं इस दुनिया में ज़िन्दा रहने के लायक़ नहीं और मुझे चीर-फाड़ डालने के लिये दरिन्दों के सामने फेंक देना चाहिये।"

धनी-मानी सौदागर, उसके पिता ने ऐसे अच्छे शब्द कहने के लिये बेटी की तारीफ़ की और यह तय हुआ कि उसकी अच्छी, सुन्दर, छोटी और प्यारी बेटी नियत समय से एक घण्टा पहले ही अपने जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे के पास वापस चली जाये। बहनों को बड़ी खीझ आयी। उन्होंने एक चालाकी सोची, चालाकी और कपट की बुरी बात सोची। उन्होंने घर की सारी घड़ियां एक घण्टा पीछे कर दीं। धनी-मानी सौदागर और घर-द्वार के उसके नौकरों-चाकरों ने उन्हें ऐसा करते नहीं देखा।

सौदागर की ख़ूबसूरत बेटी के जाने का जब असली, ठीक वक़्त हुआ, तो उसका दिल टीसने-कसकने लगा मानो कोई उसे अपनी तरफ़ खींच रहा हो। वह रह-रहकर पिता के घर में अंग्रेज़ी और जर्मन घड़ियों पर नज़र डालती, लेकिन लम्बे सफ़र के लिये रवाना होने का अभी वक़्त नहीं हुआ था। और दोनों बड़ी बहनें उसे बातों में उलझाये थीं, इधर-उधर के सवाल पूछती थीं, उसे देर करवा रही थीं। किन्तु उसके दिल को चैन नहीं था। सबसे प्यारी और मूरत जैसी ख़ूबसूरत बेटी ने धनी-मानी सौदागर, अपने प्यारे पिता से विदा ली, आशीर्वाद लिया, अपनी बड़ी और स्नेही बहनों तथा घर-द्वार के वफ़ादार नौकरों-चाकरों से विदा ली और नियत समय से एक मिनट पहले ही दायें हाथ की सबसे छोटी उंगली में सोने की अंगूठी पहनी तथा जंगली दरिन्दे, अजीब समुद्री बाशिन्दे के सफ़ेद संगमरमर के महल, ऊंची-ऊंची छतोंवाले कमरों में पहुंच गयी। इस बात से हैरान होते हुए कि मालिक उसका स्वागत नहीं कर रहा है, वह बड़े ज़ोर से पुकार उठी:

"कहां हो तुम मेरे दयालु स्वामी, मेरे सच्चे मित्र? तुम मेरा स्वागत क्यों नहीं कर रहे हो? मैं तो नियत समय से एक घंटा और एक मिनट पहले लौट आयी हूं।"

लेकिन न कोई जवाब, न अदब-आदाब, गहरी ख़ामोशी छाई रही। हरे-भरे बाग-बगीचों में परिन्दे जन्नत जैसे मधुर तराने नहीं गाते थे, फ़व्वारे नहीं चल रहे थे, चश्मे शोर नहीं मचाते थे और ऊंची-ऊंची छतोंवाले कमरों में संगीत नहीं बज रहा था। सौदागर की मूरत जैसी ख़ूबसूरत बेटी का दिल धड़क उठा, उसे लगा कि कोई बुरी बात हो गयी है। उसने भागते हुए कमरों और हरे-भरे बाग-बगीचों का चक्कर लगाया, अपने मालिक को ऊंची आवाज़ में पुकारा, मगर न कोई जवाब, न अदब-आदाब और न सुनाई पड़ी कोई आवाज़। वह हरी घास से ढके हुए उस छोटे-से टीले की तरफ़ भाग गयी, जहां उसका प्यारा सुर्ख़ फूल अपनी छटा दिखा रहा था। वहां उसने क्या देखा कि जंगली दरिन्दा, अजीब समुद्री बाशिन्दा सुर्ख़ फूल को अपने भोंडे पंजों में थामे हुए छोटे-से टीले पर पड़ा है। उसे लगा कि उसी की राह देखते हुए वह ऊंघ गया और अब गहरी नींद सो रहा है। सौदागर की मूरत जैसी ख़ूबसूरत बेटी

उसे जगाने लगी – लेकिन वह जागा नहीं। वह अधिक ज़ोर से उसे जगाने लगी – उसने बालों से ढका हुआ उसका पंजा पकड़ लिया और देखा कि जंगली दरिन्दा, अजीब समुद्री बाशिन्दा बेजान, मुर्दा पड़ा हुआ है...

उसकी निर्मल आंखों के सामने अंधेरा छा गया, उसके चुस्त पांव लड़खड़ा गये, वह घुटनों के बल हो गयी, उसने अपने दयालु मालिक का सिर, भोंडा और घृणित सिर अपनी गोरी-गोरी बांहों में भर लिया और हृदय-विदारक स्वर में ऊंचे-ऊंचे विलाप करने लगी:

"तुम उठो, जागो, मेरे प्यारे दोस्त! मैं मनचाहे मंगेतर की तरह तुम्हें प्यार करती हूं!.."

उसके ऐसे शब्द कहते ही सभी ओर से बिजली कौंध उठी, भारी गरजन से धरती कांपी, वज्रपात हुआ और हरी घास से ढके छोटे-से टीले पर कड़कड़ाकर बिजली टूट गिरी। सौदागर की जवान, मूरत-सी ख़ूबसूरत बेटी बेहोश होकर गिर पड़ी।

वह बहुत देर या थोड़ी देर तक ऐसे बेहोश पड़ी रही – कहा नहीं जा सकता। हां, होश आने पर उसने अपने को सफ़ेद संगमरमर के ऊंची-ऊंची छतोंवाले कमरे में पाया, वह क़ीमती हीरों से जड़े सोने के तख़्त पर बैठी थी और तस्वीर-सा ख़ूबसूरत, जवान राजकुमार, जिसके सिर पर शाही ताज था और जो सोने की पोशाक पहने था, उसे बांहों में भरे हुए था। राजकुमार के सामने उसका सौदागर पिता तथा बहनें खड़ी थीं और सभी ओर सुनहरे तथा रुपहले किमख़ाब की पोशाकें पहने दरबारी घुटने टेके हुए थे। सिर पर शाही ताजवाले तस्वीर-से ख़ूबसूरत राजकुमार ने उससे कहा:

"प्यारी रूप-रानी, तुमने भयानक, बदसूरत और राक्षसी रूप में मेरी दयालु आत्मा तथा तुम्हारे प्रति प्यार के लिये मुझसे प्रेम किया और अब इन्सान की शक्ल में मुझसे मुहब्बत करो, मेरी मनचाही मंगेतर बनो। एक ज़ालिम जादूगरनी मेरे स्वर्गवासी पिता, यशस्वी और महाप्रतापी महाराजा से नाराज़ होकर बचपन में ही मुझे चुरा ले गयी थी। अपने शैतानी जादू और पापी-कपटी शक्ति से उसने मुझे ऐसा राक्षस बनाकर यह शाप दे दिया था कि मैं सभी लोगों, सभी प्राणियों के लिये तब तक ऐसे भोंडे, घृणित और भयानक रूप में जीता रहूंगा, जब तक कि किसी भी कुल-जाति की कोई सुन्दरी मुझे इस भयानक रूप में ही प्यार नहीं करेगी और मेरी क़ानूनी बीवी नहीं बनना चाहेगी। तब इस जादू-टोने का असर जाता रहेगा और मैं पहले की तरह जवान और सुन्दर इन्सान बन जाऊंगा। पूरे तीस साल तक मैं ऐसा भयानक और दहशत पैदा करनेवाला राक्षस बना रहा, जादू-टोने के असर से ग्यारह सुन्दरियों को अपने महल में घसीटकर लाया तथा तुम बारहवीं थीं। लेकिन उनमें से एक ने भी मुझे मेरे प्यार,

मेरी कृपा और मेरी आत्मा की उदारता के लिये मुझसे प्रेम नहीं किया। सिर्फ़ तुम्हीं ने मेरे प्यार, मेरी कृपा और मेरी आत्मा की उदारता, तुम्हारे प्रति मेरे सच्चे प्यार के लिये मुझसे, भयानक राक्षस से प्रेम किया। इसीलिये अब तुम प्रतापी महाराजा की पत्नी, बड़े शक्तिशाली राज्य की महारानी बनोगी।"

सभी यह सुनकर हैरान रह गये और दरबारियों ने ज़मीन तक झुककर प्रणाम किया। धनी-मानी सौदागर ने अपनी सबसे छोटी और लाड़ली बेटी तथा जवान राजकुमार को आशीर्वाद दिया। बड़ी, ईर्ष्यालु बहनों, सभी वफ़ादार नौकरों-चाकरों, बड़े रईसों और बहादुर घुड़सवारों ने दूल्हे-दुलहन को बधाई दी। ज़रा भी देर न करते हुए शादी का जशन मनाया जाने लगा, दावत उड़ायी जाने लगी। वे दोनों हंसी-ख़ुशी से रहने और सुख-समृद्धि का जीवन बिताने लगे। मैं ख़ुद भी वहां था, मैंने शहद का शरबत पिया, मूंछों से धारें बहीं, मगर गले तक नहीं पहुंचीं।



अन्तोनी पोगोरेल्स्की

काली मुर्ग़ी या भूमिगतवासी

बच्चों के लिये एक परी-कथा

चालीस साल पहले* पीटर्सबर्ग के वसील्येव्स्की द्वीप नामक हलक़े के छोर पर लड़कों के बोर्डिंग-स्कूल के मालिक यानी एक मास्टर जी रहते थे। बहुत संभव है कि बहुत-से लोगों को अभी तक इस स्कूल की याद हो, यद्यपि यहां दूसरा स्कूल बने भी काफ़ी वक़्त हो चुका है और यह स्कूल पहले से बहुत भिन्न है। हमारा पीटर्सबर्ग उस वक़्त ही अपनी ख़ूबसूरती के लिये सारे यूरोप में मशहूर था, गो उस समय वह इतना सुन्दर नहीं था जितना आज। उस वक़्त वसील्येव्स्की

---

* यह क़िस्सा १८२९ में लिखा गया था। – सं०

द्वीप की बड़ी-बड़ी सड़कों पर इतनी सुखद छायादार वीथियां नहीं थीं। इस समय की बढ़िया पटरियों की जगह तब वहां आम तौर पर गले हुए तख़्तों की पटरियां थीं। संकरा और टेढ़ा-मेढ़ा इसाकी पुल इस वक़्त के पुल की ज़रा भी बराबरी नहीं कर सकता था। थोड़े में यह कि उस वक़्त के पीटर्सबर्ग की आज जैसी शान नहीं थी। हां, लोगों की तुलना में शहर इस दृष्टि से बेहतर हैं कि कभी-कभी सालों के बीतने पर वे ज़्यादा सुन्दर हो जाते हैं। लेकिन ख़ैर, इस वक़्त इस मामले की चर्चा नहीं हो रही है। हो सकता है कि किसी दूसरे वक़्त और दूसरे मौक़े पर मैं आपको मेरी ज़िन्दगी के दौरान पीटर्सबर्ग में हुई तब्दीलियों के बारे में अधिक विस्तार से बताऊं। फ़िलहाल तो आइये, हम फिर से इस बोर्डिंग-स्कूल की तरफ़ ध्यान दें जो चालीस साल पहले वसील्येव्स्की द्वीप के छोर पर अवस्थित था।

यह घर, जो अब आपको वहां नहीं मिलेगा, दुमंज़िला था और उसकी छतें हॉलैंडी खपरैलों की थीं। उस घर में दाख़िल होने का ओसारा लकड़ी का बना हुआ था और उसका मुंह सड़क की तरफ़ था। ड्योढ़ी में से काफ़ी खड़ा हुआ ज़ीना दूसरी मंज़िल की तरफ़ ले जाता था जहां आठ या नौ कमरे थे। एक तरफ़ तो ख़ुद स्कूल के मालिक यानी मास्टर जी रहते थे तथा दूसरी ओर पढ़ाई के कमरे थे। लड़कों के सोने के कमरे पहली मंज़िल पर दायीं ओर थे तथा बायीं ओर दो हॉलैंडी बुढ़ियां रहती थीं। इनमें से प्रत्येक की उम्र सौ साल से ज़्यादा थी और इन्होंने पीटर महान को अपनी आंखों से देखा और उससे बातचीत भी की थी।

उस स्कूल के तीस या चालीस छात्रों में अल्योशा नाम का एक लड़का भी था जिसकी उम्र उस वक़्त नौ या दस साल से अधिक नहीं थी। पीटर्सबर्ग से बहुत दूर रहनेवाले उसके मां-बाप कोई दो साल पहले उसे लेकर राजधानी में आये थे, मास्टर जी को कई साल की फ़ीस पेशगी देकर और लड़के को स्कूल में दाख़िल करके घर लौट गये थे। अल्योशा बड़ा समझदार और प्यारा लड़का था, पढ़ने में होशियार था, सभी उसे चाहते और प्यार करते थे। लेकिन इस चीज़ के बावजूद उसे स्कूल में अक्सर अकेलापन महसूस होता और कभी-कभी तो वह उदास भी हो जाता। ख़ास तौर पर शुरू में तो वह अपने माता-पिता से दूर रहने का आदी ही नहीं हो पा रहा था। किन्तु बाद में उसने धीरे-धीरे अपने को इस स्थिति के अनुकूल बना लिया और अपने दोस्तों के साथ खेलते हुए वह कभी-कभी तो ऐसा भी सोचता कि माता-पिता के घर की तुलना में स्कूल की ज़िन्दगी कहीं अधिक दिलचस्प है।

कुल मिलाकर, पढ़ाई के दिन उसके लिये जल्दी-जल्दी और मधुर ढंग से बीत जाते, किन्तु जब शनिवार आता और उसके सभी साथी-सहपाठी अपने मां-बाप के यहां जाने की उतावली करते, तो अल्योशा को अपना अकेलापन बहुत अखरता। इतवारों

को और तीज-त्यौहारों के मौक़ों पर वह दिन भर अकेला रहता और उस वक़्त किताबें पढ़ने से ही, जो मास्टर जी उसे अपने छोटे-से पुस्तकालय से ले लेने देते थे, उसके दिल को चैन मिलता। उस समय के साहित्य में वीरों-सूरमाओं से संबंधित उपन्यासों और जादूई क़िस्से-कहानियों का बोल-बाला था। अल्योशा जिस पुस्तकालय से किताबें लेता था, उसमें अधिकतर इसी ढंग की किताबें थीं।

अल्योशा को, जिसकी उम्र उस वक़्त दस साल थी, जाने-माने वीरों-सूरमाओं के सभी कार्य-कलाप, जिस रूप में उनका उपन्यासों में वर्णन किया गया था, ज़बानी याद थे। जाड़े की लम्बी रातों, रविवारों और पर्व-त्यौहारों के दिनों में उसका सबसे प्यारा शौक़ यही होता कि वह मन ही मन पुरानी, बहुत पहले बीत चुकी सदियों की कल्पना करता ... छुट्टियों के दिनों में तो ख़ास तौर पर ऐसा होता, जब वह लम्बे अरसे के लिये अपने साथियों से बिछुड़ जाता और अक्सर दिन-दिन भर अकेला ही बैठा रहता। उस ममय उसके बालक मन की कल्पना वीरों-सूरमाओं के दुर्गों, भयानक खण्डहरों या घने, अंधेरे जंगलों में घूमती रहती।

मैं आपको यह बताना भूल गया कि इस घर के साथ काफ़ी बड़ा अहाता भी था जिसे नावों के तख़्तों की ऊंची बाड़ द्वारा कूचे से अलग कर दिया गया था। इस कूचे की ओर ले जानेवाला बड़ा और छोटा फाटक भी हमेशा बंद रहता और इसलिये अल्योशा को उस कूचे में जाने का कभी भी मौक़ा नहीं मिलता था। इससे कूचे के प्रति उसकी जिज्ञासा बहुत बढ़ती जाती थी। फ़ुरसत के वक़्त जब भी उसे अहाते में खेलने की इजाज़त दी जाती, तो सबसे पहले वह बाड़ की तरफ़ ही भागा हुआ जाता। वहां वह पंजों के बल उचककर उन गोल सुराख़ों में से, जिनकी बाड़ में भरमार थी, कूचे को टकटकी बांधकर देखता रहता। अल्योशा को यह मालूम नहीं था कि ये सुराख़ लकड़ी की उन कीलों के कारण बने थे जिनसे कभी इन तख़्तों से बनी नावों को जोड़ा गया था। उसे ऐसा प्रतीत होता मानो किसी दयालु जादूगरनी ने जान-बूझकर उसके लिये ये सुराख़ बनाये थे। वह इसी बात का इंतज़ार करता रहता कि कभी न कभी वह जादूगरनी उस कूचे में आयेगी और सुराख़ में से कोई खिलौना या तावीज़ या मां अथवा पिता जी का, जिनका उसे लंबे अरसे से कोई समाचार नहीं मिला था, कोई पत्र उसे दे देगी। लेकिन बड़े अफ़सोस की बात थी कि जादूगरनी ही नहीं, उससे मिलता-जुलता कोई अन्य व्यक्ति भी कभी उसके सामने नहीं आया था।

अल्योशा की दूसरी दिलचस्पी थी – मुर्ग़ियों को चुग्गा खिलाना जो बाड़ के नज़दीक बनाये गये मुर्ग़ीख़ाने में रहती थीं और दिन भर अहाते में मौज करती और इधर-उधर भागती रहती थीं। अल्योशा ने उन सभी के साथ बहुत अच्छी तरह जान-पहचान कर ली थी, वह सभी के नाम जानता था, उनकी लड़ाइयां ख़त्म करवाता था और

सबसे ज़्यादा लड़ाकू मुर्ग़ी को यह सज़ा देता कि कई-कई दिन तक उसे रोटी का छोटा-सा टुकड़ा भी न देता जो वह हमेशा खाने की मेज़ पर से जमा करता था। मुर्ग़ियों में उसे बड़ी कलगीवाली काली मुर्ग़ी, जिसे काली कहा जाता था, ख़ास तौर पर बहुत प्यारी थी। दूसरी मुर्ग़ियों की तुलना में काली मुर्ग़ी भी उसके प्रति अधिक स्नेहशील थी, वह तो कभी-कभी अल्योशा को अपनी पीठ भी सहला लेने देती और इसलिये अल्योशा रोटी के सबसे अच्छे टुकड़े उसी को देता। वह बड़े शान्त स्वभाव की थी, दूसरी मुर्ग़ियों से बहुत कम घुलती-मिलती और ऐसे प्रतीत होता था कि अपनी सहेलियों की तुलना में अल्योशा को ज़्यादा प्यार करती थी।

जाड़े की लम्बी छुट्टियों में एक बहुत ही सुहावने और असाधारण रूप से कम ठण्डे दिन का ज़िक्र है कि अल्योशा को अहाते में खेलने की इजाज़त दे दी गयी। उस दिन मास्टर जी और उनकी पत्नी बहुत ही दौड़-धूप कर रहे थे। वे स्कूलों के डायरेक्टर की दावत करनेवाले थे और एक दिन पहले ही सुबह से शाम तक घर में सभी जगह तख़्तों के फ़र्श धोये गये थे, धूल-मिट्टी झाड़ी-बुहारी गयी थी और मेज़ें तथा अलमारियां पालिश से चमकायी गयी थीं। दावत के लिये ज़रूरी सामान – बढ़िया गोश्त और मुरब्बा – मास्टर जी ख़ुद लाने गये थे। अपनी शक्ति के अनुसार अल्योशा भी इस तैयारी में हाथ बंटा रहा था। उसे गोश्त के लिये सफ़ेद काग़ज़ का सुन्दर जाल काटने और इस मौक़े के लिये ख़ास तौर पर ख़रीदी गयी छः मोमबत्तियों को काग़ज़ी नक़्क़ाशी से सजाने का काम सौंपा गया। दावत के दिन तड़के ही हज्जाम आ गया और उसने मास्टर जी के लम्बे-लम्बे बालों पर अपनी कला का प्रदर्शन किया। इसके बाद उसने मास्टर जी की बीवी के घुघराले बालों पर पामेड और पाउडर लगाया और सिर पर तरह-तरह के फूलों की वाटिका-सी बना दी। फूलों के बीच हीरों की दो अंगुठियां, जो मास्टर जी को कभी उनके छात्रों के माता-पिताओं ने भेंट की थीं, बड़े सुन्दर ढंग से चमक रही थीं। केश-विन्यास पूरा हो जाने के बाद घर की मालकिन ने एक पुराना-सा फ़ाक पहन लिया और घर के कामकाज में जुट गयी। ऐसा करते हुए वह इस बात का बेहद ध्यान रख रही थी कि उसका केश-विन्यास किसी तरह से ख़राब न हो जाये। इसी कारण वह ख़ुद रसोईघर में नहीं गयी, बल्कि दरवाज़े के पास ही खड़ी रहकर अपनी बावर्चिन को हिदायतें देती रही। ज़रूरत होने पर वह मास्टर जी को, जिनका केश-विन्यास इतना जटिल नहीं था, रसोईघर में भेज देती थी।

इन सभी चिंताओं में हमारे अल्योशा की किसी को सुध न रही और वह इस मौक़े का फ़ायदा उठाते हुए अधिक देर तक अहाते में खेलता रहा। हमेशा की तरह वह शुरू में तख़्तों की बाड़ के पास गया और देर तक सुराख़ में से बाहर झांकता रहा। लेकिन उस दिन कूचे में से कोई भी नहीं गुज़रा और वह आह भरकर अपनी

प्यारी मुर्ग़ियों के पास लौट गया। लकड़ी के कुंदे पर बैठकर वह मुर्ग़ियों को अपनी ओर बुलाने ही लगा था कि हाथ में बड़ी छुरी लिये हुए बावर्चिन अचानक उसे अपने नज़दीक दिखायी दी। तुनकमिज़ाज और बड़बड़ानेवाली यह बावर्चिन उसे कभी अच्छी नहीं लगी थी। लेकिन जब से उसने यह भी देखा कि कुछ-कुछ अरसे के बाद उसकी मुर्ग़ियों की संख्या के कम हो जाने का कारण भी वही है तो वह उसे और भी कम चाहने लगा। जब एक दिन अचानक ही उसने गर्दन कटे हुए एक सुन्दर और बहुत ही प्यारे मुर्ग़े को रसोईघर में लटकते देखा तो उसके दिल को धक्का-सा लगा और उसे बावर्चिन से नफ़रत हो गयी। इस वक़्त उसके हाथ में छुरी देखकर उसने फ़ौरन यह भांप लिया कि इसका क्या मतलब है और दुखी मन से यह महसूस करते हुए कि वह अपने प्यारे मुर्ग़े-मुर्ग़ियों की किसी तरह भी मदद नहीं कर सकता, उछलकर खड़ा हुआ और दूर भाग चला।

"अल्योशा, अल्योशा! मुर्ग़ी पकड़ने में मेरी मदद करो!" बावर्चिन चिल्लायी।

किन्तु अल्योशा और भी ज़ोर से भागने लगा, मुर्ग़ीख़ाने के पीछे बाड़ के पास जा छिपा और ख़ुद उसे भी पता नहीं चला कि कब एक के बाद एक आंसू की बूंदें उसकी आंखों से छलककर ज़मीन पर गिरने लगीं।

वह काफ़ी देर तक मुर्ग़ीख़ाने के पास खड़ा रहा, उसका दिल बहुत ज़ोर से धड़क रहा था और इसी बीच बावर्चिन अहाते में इधर-उधर दौड़ती हुई कभी तो मुर्ग़ियों को प्यार से अपने पास बुलाती और फिर कभी उन्हें कोसती।

अचानक अल्योशा का दिल और भी ज़्यादा ज़ोर से धड़क उठा – उसे अपनी प्यारी, काली मुर्ग़ी की आवाज़ सुनाई दी। वह बहुत ही ज़ोर से कुड़कुड़ कर रही थी। अल्योशा को ऐसे लगा मानो वह यह चिल्ला रही थी:

कुड़, कुड़, कुड़कुड़ा!
अल्योशा, काली मुर्ग़ी को बचा!
कुड़कुड़ा, कुड़कुड़ा
काली मुर्ग़ी को बचा, बचा!

अल्योशा अब किसी तरह भी अपनी जगह पर खड़ा न रह सका। बहुत ज़ोर से सिसकते हुए वह भागकर बावर्चिन के पास पहुंचा और ठीक उसी वक़्त उसकी गर्दन से जा लटका जब उसने काली मुर्ग़ी को पंख से पकड़ लिया था।

"मेरी प्यारी, मेरी अच्छी त्रीनूश्का!" आंसुओं से अपना मुंह धोते हुए वह चिल्लाया। "कृपया, मेरी इस काली मुर्ग़ी को छोड़ दो!"

अल्योशा ऐसे अचानक ही बावर्चिन की गर्दन से आ लटका था कि काली मुर्ग़ी उसके हाथों से निकल गयी। मुर्ग़ी ने इस मौके का फ़ायदा उठाया, डर के मारे उड़कर

सायबान की छत पर जा बैठी और वहीं कुड़-कुड़ करती रही। किन्तु अल्योशा को अब ऐसे सुनाई दिया मानो वह बावर्चिन का मुंह चिढ़ाती हुई यह चिल्ला रही हो:

कुड़, कुड़, कुड़कुड़ी!
नहीं पकड़ पायी तू काली मुर्ग़ी!
कुड़कुड़ी, कुड़कुड़ी,
काली मुर्ग़ी, काली मुर्ग़ी!

इसी वक़्त बावर्चिन गुस्से के कारण आपे से बाहर हो रही थी और शिकायत करने के लिये मास्टर जी के पास भाग जाना चाहती थी। लेकिन अल्योशा ने उसे जाने नहीं दिया। वह उसके फ़ाक के पल्लुओं से लिपट गया और ऐसे गिड़गिड़ाकर मिन्नत-समाजत करने लगा कि बावर्चिन वहीं खड़ी रह गयी।

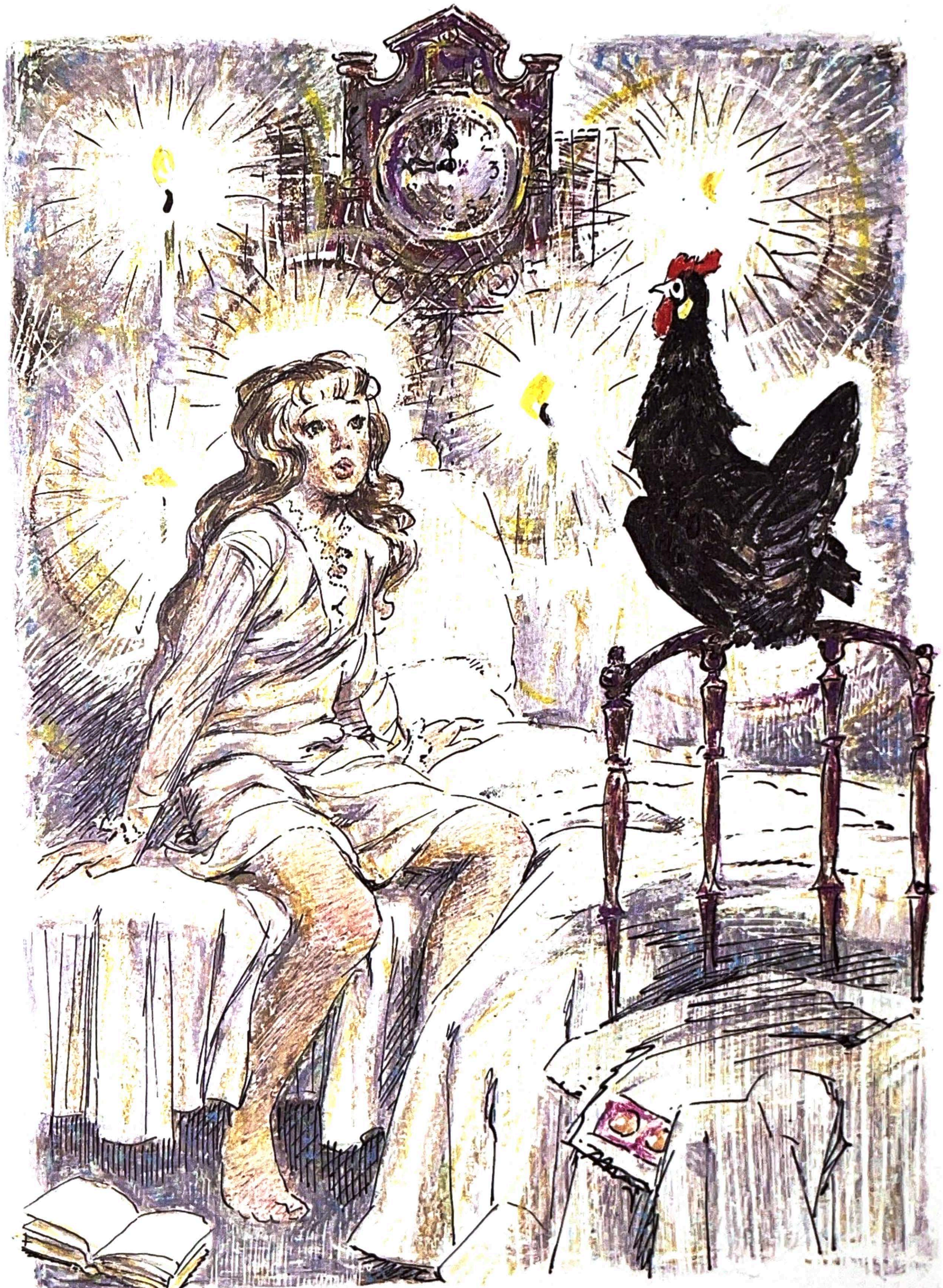
"प्यारी त्रीनूश्का!" अल्योशा ने कहा। "तुम इतनी अच्छी, इतनी साफ़-सुथरी और दयालु हो ... कृपया, मेरी काली मुर्ग़ी की जान बख़्श दो! अगर तुम रहम दिखाओगी, तो जानती हो, मैं तुम्हें क्या तोहफ़ा दूंगा!"

अल्योशा ने अपनी जेब से सोने की मुद्रा निकाली। यही उसकी एकमात्र दौलत थी जिसे वह आंख की पुतली की तरह सहेजकर रखता था, क्योंकि यह उसे अपनी दयालु दादी से उपहार में मिली थी। बावर्चिन ने सोने की मुद्रा को ग़ौर से देखा, यह विश्वास करने के लिये घर की खिड़कियों पर नज़र डाली कि कोई उनकी तरफ़ देख तो नहीं रहा और फिर मुद्रा लेने के लिये हाथ बढ़ा दिया। अल्योशा को सोने की मुद्रा देते हुए बहुत ही दुख हो रहा था, किन्तु उसे काली मुर्ग़ी की याद आयी और उसने बड़ी दृढ़ता से यह बहुमूल्य उपहार बावर्चिन को दे दिया।

इस तरह काली मुर्ग़ी को बड़ी क्रूर और अनिवार्य मृत्यु से बचा लिया गया।

बावर्चिन के घर में जाते ही काली मुर्ग़ी सायबान की छत से उड़कर नीचे आयी और भागती हुई अल्योशा के पास गयी। वह मानो यह जानती थी कि अल्योशा ने ही उसकी जान बचायी है। वह उसके आसपास चक्कर काटती रही, पंखों को फड़फड़ाती और ख़ुशी भरी आवाज़ में कुड़कुड़ करती रही। सारी सुबह वह कुत्ते की तरह अल्योशा के पीछे-पीछे अहाते में घूमती रही। ऐसा प्रतीत होता था मानो वह उससे कुछ कहना चाहती हो, लेकिन कह न पाती हो। कम से कम अल्योशा तो उसकी कुड़-कुड़ का मतलब नहीं समझ पाया।

दोपहर के भोजन के दो घंटे पहले मेहमान आने लगे। अल्योशा को ऊपर बुला लिया गया, उसे छोटी-छोटी चुन्नटों सहित किमरिक के कफ़ों और गोल कालरवाली कमीज़ तथा सफ़ेद शलवार पहना दी गयी और आसमानी रंग का रेशमी कमरबंद बांध दिया गया। कमर तक पहुंचनेवाले उसके हल्के सुनहरे बालों को अच्छी तरह से संवारकर



दो बराबर हिस्सों में बांट दिया गया और छाती पर दोनों ओर लटका दिया गया। उस ज़माने में लड़कों का इसी तरह से शृंगार किया जाता था।

इसके बाद उसे यह सिखाया गया कि डायरेक्टर जब कमरे में दाखिल हों तो वह किस तरह उनका अभिवादन करे और अगर उससे कुछ सवाल पूछे जायें, तो उसे किस तरह उनके जवाब देने चाहिये।

कोई और वक़्त होता तो अल्योशा को डायरेक्टर के आने से बहुत ख़ुशी हुई होती। कारण कि वह बहुत अरसे से उसे इसलिये देखना चाहता था कि मास्टर जी और उनकी पत्नी ने उसके प्रति जो मान-सम्मान दिखाया था, उसके आधार पर उसने वक्ष पर चमकता हुआ कवच पहने और सिर पर बड़े-बड़े पंखोंवाला शिरस्त्राण डाटे हुए किसी प्रसिद्ध सूरमा के रूप में उसकी कल्पना की थी। लेकिन इस समय तो काली मुर्ग़ी से संबंधित विचारों ने ही, जो पूरी तरह उसके दिल-दिमाग़ पर छाये हुए थे, इस जिज्ञासा का स्थान ले लिया था। उसकी आंखों के सामने तो यह तस्वीर घूम रही थी कि कैसे बावर्चिन छुरी लिये हुए उसके पीछे भागी थी और किस तरह काली मुर्ग़ी तरह-तरह की आवाज़ों में कुछ कहती रही थी। इसके अलावा उसे इस बात का भी बहुत अफ़सोस हो रहा था कि काली मुर्ग़ी उससे जो कुछ कहना चाहती थी, वह उसे समझ नहीं पाया था और उसका मन मुर्ग़ीख़ाने की तरफ़ ही खिंचा जा रहा था... लेकिन मजबूरी थी – दोपहर का भोजन ख़त्म होने तक इंतज़ार करना ज़रूरी था!

आख़िर डायरेक्टर आये। उनके आने की सूचना मास्टर जी की बीवी ने दी जो बहुत देर से खिड़की के पास बैठी हुई टकटकी बांधकर उसी तरफ़ देख रही थी जिधर से डायरेक्टर आनेवाले थे।

आन की आन में बड़ी हलचल मच गयी – मास्टर जी बहुत तेज़ी से दरवाज़ा लांघकर नीचे भागे, ताकि ओसारे के पास ही उनका स्वागत करें। मेहमान अपनी जगहों से उठकर खड़े हो गये। यहां तक कि अल्योशा भी क्षण भर को अपनी मुर्ग़ी के बारे में भूलकर खिड़की के पास आ गया ताकि यह देख सके कि सूरमा यानी डायरेक्टर अपने तेज़ फुर्तीले घोड़े से कैसे नीचे उतरते हैं। किन्तु उसे यह देख पाने का सौभाग्य न प्राप्त हुआ, क्योंकि डायरेक्टर घर में दाखिल हो चुके थे। ओसारे के पास तेज़ फुर्तीले घोड़े की जगह कोचवान द्वारा हांकी जानेवाली आम स्लेज खड़ी थी। अल्योशा को इससे बहुत हैरानी हुई। "अगर मैं सूरमा होता," उसने सोचा, "तो कभी भी कोचवान द्वारा हांकी जानेवाली स्लेज में न बैठता, हमेशा घोड़े पर ही सवारी करता!"

इसी बीच सभी दरवाज़े पूरी तरह से खोल दिये गये थे और अध्यापक की बीवी इतने सम्मानित अतिथि की प्रतीक्षा में, जो जल्द ही कमरे में आ गये, अभिवादन करने की मुद्रा में खड़ी हो गयी। शुरू में तो मास्टर जी की मोटी बीवी के कारण,

जो बिल्कुल दरवाज़े के बीच खड़ी थी, डायरेक्टर को देख पाना संभव नहीं था। लेकिन अपना लंबा अभिवादन पूरा करने के बाद जब वह सामान्य से कहीं अधिक नीचे झुक गयी, तो अल्योशा ने उसके पीछे से डायरेक्टर को देखा और उसे बड़ी हैरानी हुई... डायरेक्टर के सिर पर पंखोंवाला शिरस्त्राण नहीं था, बल्कि उसकी जगह पर पाउडर लगा हुआ छोटा-सा गंजा सिर था। उनके सिर का एकमात्र शृंगार, जैसा कि अल्योशा ने बाद में देखा, बालों का एक छोटा-सा गुच्छा था! डायरेक्टर के मेहमानखाने में आने पर अल्योशा को यह देखकर और भी ज़्यादा हैरत हुई कि यद्यपि वह चमकता हुआ कवच नहीं, बल्कि सलेटी रंग का मामूली फ़ाक-कोट पहने थे, फिर भी सभी लोग उनके प्रति असाधारण आदर-सत्कार दिखा रहे थे।

अल्योशा को यह सब कुछ बेशक बहुत अजीब लगा, बेशक किसी दूसरे वक़्त वह खाने की मेज़ के इतने बढ़िया ढंग से सजे होने पर बहुत ख़ुश हुआ होता, लेकिन आज उसने इसकी तरफ़ कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। उसके दिमाग़ में सुबह के वक़्त काली मुर्ग़ी के साथ घटनेवाली घटना ही अभी तक घूम रही थी। मेज़ पर तरह-तरह के मुरब्बे, सेब, नाशपातियां, खजूरें, इंजीर और अख़रोट रखे गये, लेकिन वह लगातार अपनी मुर्ग़ी के बारे में ही सोचता जा रहा था। मेहमान जैसे ही खाने की मेज़ से उठे, वैसे ही वह आशंका और आशा से धड़कता दिल लिये हुए मास्टर जी के पास गया और उनसे यह पूछा कि क्या वह खेलने के लिये अहाते में जा सकता है।

"जाइये," मास्टर जी ने जवाब दिया, "लेकिन बहुत देर तक वहां नहीं रहियेगा, जल्दी ही अंधेरा हो जायेगा।"

अल्योशा ने जल्दी से गिलहरी का फ़र लगा हुआ लाल रंग का कोट पहना, सेबल की फ़र से सजी हुई मख़मल की हरी टोपी ओढ़ी और बाड़ की ओर भाग गया। जब वह वहां पहुंचा तो मुर्ग़ियां सोने की तैयारी कर रही थीं, उनकी आंखों में नींद थी और इसलिये अल्योशा द्वारा लाये जानेवाले रोटी के टुकड़ों से उन्हें कोई ख़ास ख़ुशी नहीं हुई। ऐसा प्रतीत हुआ कि सिर्फ़ काली मुर्ग़ी ही मानो सोना नहीं चाह रही थी, वह ख़ुशी से भागकर उसके पास आयी, पंखों को फड़फड़ाने और फिर से कुड़-कुड़ करने लगी। अल्योशा देर तक उसके साथ खेलता रहा। आख़िर जब अन्धेरा और उसके घर जाने का वक़्त हो गया, तो ख़ुद उसी ने मुर्ग़ीख़ाने का दरवाज़ा बन्द कर दिया और ऐसा करने के पहले इस बात की जांच कर ली कि उसकी प्यारी मुर्ग़ी छड़ पर जा बैठी है। मुर्ग़ीख़ाने से बाहर आते समय उसे ऐसा लगा कि अन्धेरे में काली मुर्ग़ी की आंखें सितारों की तरह चमक रही थीं और वह धीरे से उससे कह रही थी:

"अल्योशा, अल्योशा! तुम मेरे साथ ही यहां रह जाओ!"

अल्योशा वापिस घर आ गया और उन कमरों में, जहां पढ़ाई होती थी, सारी शाम अकेला ही बैठा रहा। इसी बीच घर के दूसरे भाग में रात के ग्यारह बजे

तक मेहमान जमे रहे। उनके जाने के पहले ही अल्योशा नीचेवाली मंज़िल पर सोने के कमरे में गया, उसने कपड़े उतारे, बिस्तर पर चला गया और उसने बत्ती बुझा दी। बहुत देर तक उसे नींद नहीं आई। आख़िर नींद उस पर हावी हो गयी, सपने में उसने काली मुर्ग़ी से बातचीत की ही थी कि अफ़सोस, घरों को जाते हुए मेहमानों के शोर के कारण उसकी आंख खुल गयी।

मोमबत्ती हाथ में लेकर डायरेक्टर को विदा करने के कुछ देर बाद मास्टर जी उसके कमरे में आये, इस बात की जांच की कि सब कुछ ठीक-ठाक है और दरवाज़े को ताला लगाकर चले गये।

दूज का चांद निकला हुआ था और झिलमिलियों में से, जिन्हें कसकर बन्द नहीं किया गया था, हल्की-हल्की चांदनी कमरे में झांक रही थी। अल्योशा आंखें खोले हुए लेटा था और देर तक उसे अपने सिर के ऊपर, दूसरी मंज़िल के कमरों में लोगों के इधर-उधर आने-जाने और मेज़ों-कुर्सियों को ठीक-ठाक करने की आवाज़ें सुनाई देती रहीं।

आख़िर खामोशी छा गयी। उसने हल्की चांदनी में तनिक चमक रहे अपने पासवाले पलंग पर नज़र डाली और यह देखा कि लगभग फ़र्श तक लटक रही सफ़ेद चादर धीरे से हिली-डुली है। वह टकटकी बांधकर उसे देखने लगा... उसे सुनाई दिया मानो पलंग के नीचे कोई पंजों से उसे खुरच रहा है और कुछ क्षण बाद उसे प्रतीत हुआ कि धीमी-सी आवाज़ में कोई "अल्योशा, अल्योशा!" कहकर उसे पुकार रहा है।

अल्योशा डर गया। कमरे में वह अकेला था और उसके दिमाग़ में फ़ौरन यह ख़्याल कौंध गया कि हो न हो पलंग के नीचे कोई चोर है। लेकिन ज़रा यह विचार करने पर कि चोर उसका नाम लेकर उसे नहीं पुकारेगा, उसके दिल को कुछ तसल्ली हो गयी, यद्यपि वह धड़कता रहा। वह बिस्तर पर थोड़ा उचक गया और अब उसे चादर अधिक साफ़ तौर पर हिलती-डुलती दिखाई दी... उसने अधिक स्पष्ट रूप से सुना कि कोई "अल्योशा, अल्योशा!" कह रहा है।

सफ़ेद चादर अचानक ऊपर उठी और उसके नीचे से निकली... काली मुर्ग़ी!

"अरे! यह तुम हो, काली मुर्ग़ी!" अल्योशा अपने आप ही चिल्ला उठा। "तुम यहां कैसे आ गयीं?"

काली मुर्ग़ी ने पंख फड़फड़ाये, उड़कर उसके पलंग पर आ गयी और इन्सान की आवाज़ में बोली:

"अल्योशा, यह मैं ही हूं! तुम मुझसे डरते तो नहीं हो न?"

"तुम से भला मैं क्यों डरने लगा?" उसने जवाब दिया। "मैं तो तुम्हें प्यार करता हूं, लेकिन मेरे लिये यह अजीब बात है कि तुम इतने अच्छे ढंग से बातचीत कर सकती हो। मैं तो बिल्कुल नहीं जानता था कि तुम बोल सकती हो!"

"अगर तुम मुझसे डरते नहीं हो," मुर्ग़ी कहती गयी, "तो मेरे पीछे-पीछे आओ। जल्दी से कपड़े पहन लो!"

"तुम भी कैसी बुद्धू हो, काली मुर्ग़ी!" अल्योशा ने जवाब दिया। "अंधेरे में मैं कपड़े कैसे पहन सकता हूं? मुझे अपनी पोशाक नहीं मिलेगी। मैं तो तुम्हें ही बड़ी मुश्किल से देख पा रहा हूं।"

"मैं तुम्हारी मदद करने की कोशिश करती हूं," मुर्ग़ी ने उत्तर दिया।

इतना कहकर उसने अजीब-सी आवाज़ में कुड़-कुड़ की और अचानक, न जाने कहां से, चांदी के शमादानों में अल्योशा की कनिष्ठा जितनी छोटी-छोटी मोमबत्तियां सामने आ गयीं। ये शमादान फ़र्श पर, कुर्सियों, खिड़कियों के दासों, यहां तक कि हाथ-मुंह धोने की तिपाई पर भी प्रकट हो गये और कमरे में दिन का सा उजाला हो गया। अल्योशा कपड़े पहनने लगा, मुर्ग़ी उसके कपड़े उसकी तरफ़ बढ़ाने लगी और इस तरह वह बहुत जल्द ही कपड़े पहनकर पूरी तरह तैयार हो गया।

अल्योशा के तैयार हो जाने पर मुर्ग़ी ने फिर से कुड़-कुड़ की और सभी मोम-बत्तियां ग़ायब हो गयीं।

"मेरे पीछे-पीछे आओ!" मुर्ग़ी ने अल्योशा से कहा।

और अल्योशा बड़ी दिलेरी से उसके पीछे-पीछे चल दिया। मुर्ग़ी की आंखों से मानो किरणें निकल रही थीं जो इर्द-गिर्द की हर चीज़ को रोशन करती जा रही थीं, यद्यपि इनका प्रकाश छोटी-छोटी मोमबत्तियां जैसा तेज़ नहीं था। इन दोनों ने प्रवेश-कक्ष को लांघा।

"दरवाज़े पर ताला लगा हुआ है," अल्योशा ने कहा।

किन्तु मुर्ग़ी ने कोई जवाब नहीं दिया – उसने पंख फड़फड़ाये और दरवाज़ा अपने आप ही खुल गया। बाद में, ड्योढ़ी को लांघकर वे उन कमरों के पास पहुंचे, जहां सौ साल की उम्रवाली हॉलैंडी बुढ़ियां रहती थीं। अल्योशा इनके यहां कभी नहीं गया था, मगर उसने यह सुन रखा था कि उनके कमरे पुराने ढंग से सजे हुए हैं, कि उनमें से एक के यहां सलेटी रंग का तोता है और दूसरी के यहां बहुत ही समझदार भूरी बिल्ली है जो चक्र में से कूद सकती है और हाथ मिला सकती है। अल्योशा बहुत अरसे से यह सब कुछ देखना चाहता था और इसलिये उस वक़्त उसे बेहद खुशी हुई, जब मुर्ग़ी ने फिर से अपने पंख फड़फड़ाये और बुढ़ियों के घर का दरवाज़ा खुल गया।

पहले कमरे में अल्योशा को सभी तरह का पुराना फ़र्नीचर यानी नक़्क़ाशीवाली कुर्सियां, आराम-कुर्सियां, मेज़ें और अलमारियां नज़र आयीं। बड़ी अंगीठी हॉलैंडी टाइलों की थी और टाइलों पर नीले रंग से लोगों और जानवरों की तस्वीरें बनी हुई थीं। अल्योशा ने फ़र्नीचर, विशेषतः अंगीठी पर बनी आकृतियां देखने के लिये रुकना चाहा, लेकिन काली मुर्ग़ी ने उसे ऐसा नहीं करने दिया।

 Karki

वे दूसरे कमरे में दाखिल हुए और यहां तो अल्योशा की बाछें खिल गयीं। सोने के बहुत ही बढ़िया पिंजरे में लाल पूंछवाला सलेटी रंग का बहुत बड़ा तोता बैठा था। अल्योशा ने तुरंत उसकी तरफ़ भाग जाना चाहा। लेकिन काली मुर्ग़ी ने उसे फिर से ऐसा नहीं करने दिया।

"यहां किसी भी चीज़ को हाथ नहीं लगाओ," मुर्ग़ी ने कहा। "देखो, कहीं बुढ़ियों को नहीं जगा देना!"

इसी समय अल्योशा ने देखा कि तोते के पिंजरे के निकट ही एक पलंग था जिसके चारों ओर बारीक पर्दे लटके हुए थे। उनके पीछे उसे एक बुढ़िया पलंग पर सोती नज़र आई। उसे वह मोम की बनी-सी प्रतीत हुई। दूसरे कोने में वैसा ही दूसरा पलंग था जिस पर दूसरी बुढ़िया सो रही थी और उसके क़रीब ही भूरी बिल्ली अगले पंजों से अपना मुंह धो रही थी। बिल्ली के पास से गुज़रते हुए अल्योशा उससे हाथ मिलाने की अपनी प्रबल इच्छा पर क़ाबू नहीं पा सका... बिल्ली अचानक ज़ोर से म्याऊं-म्याऊं करने लगी, तोते के तेवर चढ़ गये और वह बड़े ज़ोर से "उल्लू! उल्लू!" चिल्लाने लगा। इसी समय बारीक पर्दों में से यह भी नज़र आया कि बुढ़ियां जागकर अपने बिस्तरों पर तनिक उचक गयी हैं। काली मुर्ग़ी तेज़ी से भाग चली, अल्योशा उसके पीछे-पीछे भागा और उनके पीछे फटाक से दरवाज़ा बन्द हो गया... बहुत देर तक तोते का "उल्लू! उल्लू!" चिल्लाना सुनाई देता रहा।

"तुम्हें शर्म आनी चाहिये!" बुढ़ियों के कमरे से बाहर भाग जाने पर काली मुर्ग़ी ने उससे कहा। "तुमने निश्चय ही योद्धाओं को जगा दिया है..."

"किन योद्धाओं को?" अल्योशा ने पूछा।

"ख़ुद देख लोगे," काली मुर्ग़ी ने जवाब दिया। "लेकिन कोई बात नहीं, तुम डरो नहीं, हिम्मत से मेरे पीछे-पीछे आते जाओ।"

वे सीढ़ियां उतरकर नीचे गये, मानो तहख़ाने में पहुंच गये हों और देर तक विभिन्न गलियारों और दालानों को लांघते रहे जिन्हें अल्योशा ने पहले कभी नहीं देखा था। ये दालान कभी-कभी इतने तंग और उनकी छतें इतनी नीची होतीं कि अल्योशा को झुकना पड़ता। अचानक वे तीन बिल्लौरी फ़ानूसों से रोशन हॉल में दाख़िल हुए। हॉल में खिड़कियां नहीं थीं और दोनों ओर की दीवारों पर चमकते कवच तथा बड़े-बड़े पंखोंवाले शिरस्त्राण पहने तथा लोहे के हाथों में बर्छियां तथा ढालें लिये हुए योद्धा लटक रहे थे।

काली मुर्ग़ी पंजों के बल आगे-आगे चल रही थी और उसने अल्योशा को दबे पांवों अपने पीछे-पीछे आने को कहा।

हॉल के सिरे पर तांबे का हल्के पीले रंग का बड़ा दरवाज़ा था। ये दोनों जैसे ही उसके निकट पहुंचे, वैसे ही दो योद्धा दीवारों से नीचे कूदे, उन्होंने ढालों पर

अपनी बर्छियां मारीं और काली मुर्ग़ी पर टूट पड़े। काली मुर्ग़ी ने अपनी कलगी ऊपर उठाई और पंख फुला लिये ... अचानक वह बहुत बड़ी हो गयी, योद्धाओं से भी ऊंची और उनसे लोहा लेने लगी! योद्धा उसपर ज़ोरदार वार करते थे और वह पंखों तथा चोंच से अपने को बचाती थी। अल्योशा का डर के मारे बुरा हाल हो गया, उसका दिल बहुत ज़ोर से धड़कने लगा और वह बेहोश हो गया।

जब उसे होश आया, तो सूरज झिलमिलियों में से कमरे को रोशन कर रहा था और वह अपने बिस्तर पर लेटा हुआ था। न तो काली मुर्ग़ी और न योद्धा ही नज़र आ रहे थे। बहुत देर तक अल्योशा के होश-हवास ठिकाने नहीं हुए। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि रात के वक़्त उसके साथ क्या हुआ था – उसने सपने में ही यह सब कुछ देखा था या वास्तव में ही ऐसा हुआ था? कपड़े पहनकर वह ऊपर चला गया, लेकिन पिछली रात को उसने जो कुछ देखा था, वह किसी तरह भी उसके दिमाग़ से निकल नहीं पा रहा था। वह बड़ी बेचैनी से उस क्षण का इन्तज़ार कर रहा था, जब उसके लिये अहाते में जाकर खेलना सम्भव होगा। लेकिन मानो उसी का मुंह चिढ़ाने के लिये पूरे दिन बहुत ज़ोर से बर्फ़ गिरती रही और उसके लिये घर से बाहर जाने की बात सोचना भी सम्भव नहीं हो सका।

दोपहर के भोजन के वक़्त मास्टर जी की बीवी ने इधर-उधर की बातचीत के दौरान अपने पति को यह भी बताया कि काली मुर्ग़ी न जाने कहां छिप गयी है।

"ख़ैर," उसने इतना और जोड़ दिया, "अगर वह न भी मिली, तो भी कोई ख़ास बात नहीं – उसे तो बहुत अरसे से पका लेने का फ़ैसला किया जा चुका है। तुम कल्पना तो करो, मेरे प्यारे, वह जब से हमारे घर में आई है, उसने एक भी अण्डा नहीं दिया।"

अल्योशा ने बड़ी मुश्किल से अपने आंसू रोके। उसने यही चाहा कि पका लिये जाने के बजाय तो यही ज़्यादा अच्छा होगा कि वह उन्हें कहीं मिले ही नहीं।

दोपहर के भोजन के बाद अल्योशा फिर से पाठ के कमरों में अकेला ही रह गया। पिछली रात को जो कुछ हुआ था, वह लगातार उसी के बारे में सोचता रहा और प्यारी मुर्ग़ी के खो जाने की ख़बर उसे किसी तरह से चैन नहीं लेने दे रही थी। कभी-कभी उसे ऐसे लगता कि काली मुर्ग़ी के मुर्ग़ीख़ाने से लापता हो जाने के बावजूद अगली रात को ज़रूर ही उसकी उससे भेंट होनी चाहिये। किन्तु कुछ देर बाद उसे ऐसा प्रतीत होता कि यह असम्भव-सी बात है और फिर से उसका मन दुखी हो जाता।

सोने का वक़्त हो गया और अल्योशा जल्दी-जल्दी कपड़े उतारकर बिस्तर पर चला गया। उसने पासवाले पलंग पर, जो हल्की चांदनी में कुछ-कुछ चमक रहा था, नज़र डाली ही थी कि पिछली रात की तरह सफ़ेद चादर फिर से हिली-डुली ... फिर से उसे किसी के "अल्योशा! अल्योशा!" कहकर बुलाने की आवाज़ सुनाई

दी। और कुछ क्षण बाद काली मुर्ग़ी पलंग के नीचे से उड़कर उसके पलंग पर आ बैठी।

"अरे! नमस्ते, काली मुर्ग़ी!" वह ख़ुशी से चिल्ला उठा। "मुझे शंका हो रही थी कि अब कभी तुमसे भेंट नहीं होगी। तुम्हारी तबीयत तो अच्छी है?"

"अच्छी है," मुर्ग़ी ने जवाब दिया, "लेकिन तुम्हारी बदौलत मेरी हालत बहुत बुरी होते-होते बची।"

"भला यह कैसे, काली मुर्ग़ी?" अल्योशा ने घबराकर पूछा।

"तुम दयालु, किंतु चंचल लड़के हो," मुर्ग़ी कहती गयी, "और तुमसे जो कुछ कहा जाता है, तुम फ़ौरन उसपर कान नहीं देते हो। यह अच्छी बात नहीं! कल मैंने तुमसे कहा था कि तुम बुढ़ियों के कमरे में किसी भी चीज़ को हाथ नहीं लगाना, लेकिन इसके बावजूद तुम बिल्ली से हाथ मिलाने का मोह नहीं छोड़ सके। बिल्ली ने तोते को जगा दिया, तोते ने बुढ़ियों को, बुढ़ियों ने योद्धाओं को – बड़ी मुश्किल से निपटी मैं उनसे!"

"मैं अपना क़ुसूर मानता हूं, प्यारी काली मुर्ग़ी, आगे ऐसा नहीं करूंगा! कृपया मुझे आज फिर वहां ले चलो। तुम देखोगी कि आज मैं तुम्हारी बात मानूंगा।"

"अच्छी बात है," मुर्ग़ी ने कहा, "देखेंगे।"

मुर्ग़ी ने पिछली रात की तरह कुड़-कुड़ की और चांदी के उन्हीं शमादानों में वही छोटी-छोटी मोमबत्तियां नमूदार हो गयीं। अल्योशा ने उसी तरह कपड़े पहने और मुर्ग़ी के पीछे-पीछे चल दिया। फिर से वे बुढ़ियों के घर में दाख़िल हुए, लेकिन इस बार अल्योशा ने किसी भी चीज़ को नहीं छुआ।

जब वे पहले कमरे में से गुज़र रहे थे, तो उसे ऐसे लगा मानो बड़ी अंगीठी पर चित्रित इन्सानों और जानवरों की आकृतियां तरह-तरह के हास्यास्पद मुंह बनाती हैं और उसे अपनी ओर बुलाती हैं। किन्तु उसने जान-बूझकर उनकी तरफ़ से मुंह फेर लिया। दूसरे कमरे में हॉलैंडी बुढ़ियां पिछली रात की तरह ही अपने पलंगों पर सो रही थीं और मानो मोम की बनी लग रही थीं। तोता अल्योशा की ओर देखता हुआ आंखें मिचमिचा रहा था, भूरी बिल्ली भी पंजों से मुंह धो रही थी। अल्योशा को दर्पण के सामने मेज़ पर चीनी मिट्टी की बनी दो चीनी गुड़ियां दिखाई दीं जो उसे पिछली रात को नज़र नहीं आयी थीं। गुड़ियों ने उसकी तरफ़ सिर झुकाया, लेकिन अल्योशा को काली मुर्ग़ी का आदेश याद था और इसलिये वह रुके बिना आगे बढ़ता चला गया। फिर भी वह चलते-चलते ही उनकी ओर सिर झुकाये बिना न रह सका। गुड़ियां उसी क्षण मेज़ से नीचे कुदीं और लगातार सिर झुकाती हुई उसके पीछे-पीछे भागने लगीं। वे उसे इतनी दिलचस्प लगीं कि रुकने को हुआ, लेकिन इसी वक़्त काली मुर्ग़ी ने ऐसी कड़ी नज़र से उसकी तरफ़ देखा कि वह सम्भल गया। गुड़ियां दरवाज़े

तक उनके पीछे-पीछे आयीं और यह देखकर कि अल्योशा उनकी तरफ़ ध्यान नहीं दे रहा है, अपनी जगह पर वापस चली गयीं।

ये दोनों पिछली रात की तरह फिर सीढ़ियों से नीचे उतरे, इन्होंने कई संकरे रास्ते और दालान लांघे तथा उसी हॉल में पहुंच गये जो तीन बिल्लौरी फ़ानूसों से रोशन था। पिछली रात जैसे योद्धा दीवारों पर लटके हुए थे और जब वे पीले तांबे के दरवाज़े के निकट पहुंचे, तो दो योद्धा दीवार से उतरे और उनका रास्ता रोककर खड़े हो गये। किन्तु इस समय वे पिछली रात की तरह बहुत गुस्से में नज़र नहीं आ रहे थे। वे पतझर की मक्खियों की तरह बड़ी मुश्किल से ही चल रहे थे और साफ़ दिखायी दे रहा था कि बड़ी कठिनाई से अपनी बर्छियों को हाथों में सम्भाले हुए हैं।

काली मुर्ग़ी बहुत बड़ी हो गयी और उसके तेवर चढ़ गये। किन्तु जैसे ही उसने अपने पंखों से योद्धाओं पर चोट की, वे टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गये और अल्योशा ने देखा कि वे तो खाली कवच ही थे। तांबे का दरवाज़ा अपने आप ही खुल गया और मुर्ग़ी तथा अल्योशा आगे बढ़ चले।

कुछ देर बाद वे एक अधिक बड़े, किन्तु बहुत कम ऊंची छतवाले हॉल में दाखिल हुए। अल्योशा इसकी छत को हाथ से छू सकता था। यह हॉल भी उसी तरह की छोटी-छोटी मोमबत्तियों से रोशन था जैसी उसने अपने कमरे में देखी थीं। लेकिन इनके शमादान चांदी के नहीं, सोने के थे।

काली मुर्ग़ी ने अल्योशा को इसी हॉल में छोड़ते हुए कहा :

"कुछ देर यहीं रहो, मैं जल्द ही वापस आ जाऊंगी। आज तुमने समझदारी से काम लिया, यद्यपि चीनी मिट्टी की गुड़ियों की तरफ़ सिर झुकाकर कुछ असावधानी दिखाई। अगर तुम उनका अभिवादन न करते, तो योद्धा दीवार पर ही लटके रहते। कुल मिलाकर यह कि तुमने आज बुढ़ियों को नहीं जगाया और इसीलिये योद्धाओं में शक्ति नहीं थी।" काली मुर्ग़ी यह कहकर हॉल से बाहर चली गयी।

अकेला रह जाने पर अल्योशा बहुत ध्यान से हॉल को देखने लगा जो बहुत ही बढ़िया ढंग से सजा हुआ था। उसे लगा कि उसकी दीवारें वैसे ही संगमरमर से बनी हुई हैं जैसा उसने स्कूल के उस कमरे में देखा था जहां खनिज रखे हुए थे। पैनल और दरवाज़े असली सोने के थे। हॉल के सिरे पर हरी छोलदारी के नीचे तनिक ऊंचे स्थान पर सोने की आराम-कुर्सियां रखी हुई थीं। अल्योशा मुग्ध होकर इस सजावट को देखता रहा, किन्तु उसे यह बहुत अजीब लगा कि सभी चीज़ें बहुत छोटी-छोटी थीं मानो गुड़ियों के लिये हों।

वह बड़ी जिज्ञासा से इन सब चीज़ों को देख ही रहा था कि इसी बीच बग़लवाला वह दरवाज़ा खुल गया जिसकी ओर उसका ध्यान नहीं गया था और तरह-तरह की रंग-बिरंगी पोशाकें पहने हुए अनेक छोटे-छोटे लोग, जिनका क़द आध गज़ से अधिक नहीं

था, कमरे में दाख़िल हुए। वे बड़े रोबीले थे, उनमें से कुछ फ़ौजी वर्दियां पहने थे और दूसरे ग़ैरफ़ौजी कर्मचारियों की पोशाकें। सभी के सिरों पर स्पेनियों जैसी पंखोंवाली गोल टोपियां थीं। उन्होंने अल्योशा की तरफ़ कोई ध्यान नहीं दिया, वे बड़ी शान से कमरों में इधर-उधर आते-जाते हुए ऊंचे-ऊंचे बोलते-बतियाते रहे, लेकिन उनकी बातें अल्योशा की समझ में नहीं आ रही थीं।

वह देर तक उन्हें चुपचाप देखता रहा और उनमें से एक से कुछ पूछने ही को था कि हॉल के सिरे पर बड़ा दरवाज़ा खुल गया... सभी ख़ामोश हो गये और दो क़तारों में दीवारों के पास खड़े होकर उन्होंने टोपियां उतार लीं।

आन की आन में हॉल और अधिक रोशन हो गया, छोटी-छोटी मोमबत्तियां और ज़्यादा रोशनी देने लगीं और अल्योशा ने देखा कि सोने के कवच और लाल पंखों-वाले शिरस्त्राण पहने छोटे-छोटे बीस योद्धा धीरे-धीरे मार्च करते हुए हॉल में दाख़िल हो रहे हैं। इसके बाद वे चुप्पी साधकर आराम-कुर्सियों के दोनों ओर खड़े हो गये। कुछ क्षण बीतने पर बड़ी प्रभावपूर्ण आकृतिवाले एक व्यक्ति ने हॉल में प्रवेश किया। उसके सिर पर हीरों से चमकता हुआ मुकुट था। वह हल्के हरे रंग का लबादा पहने था जिसके नीचे चूहों के फर का अस्तर लगा था और लाल पोशाकें पहने हुए छोटे-छोटे बीस नौकर उसके लम्बे छोर को उठाये हुए थे।

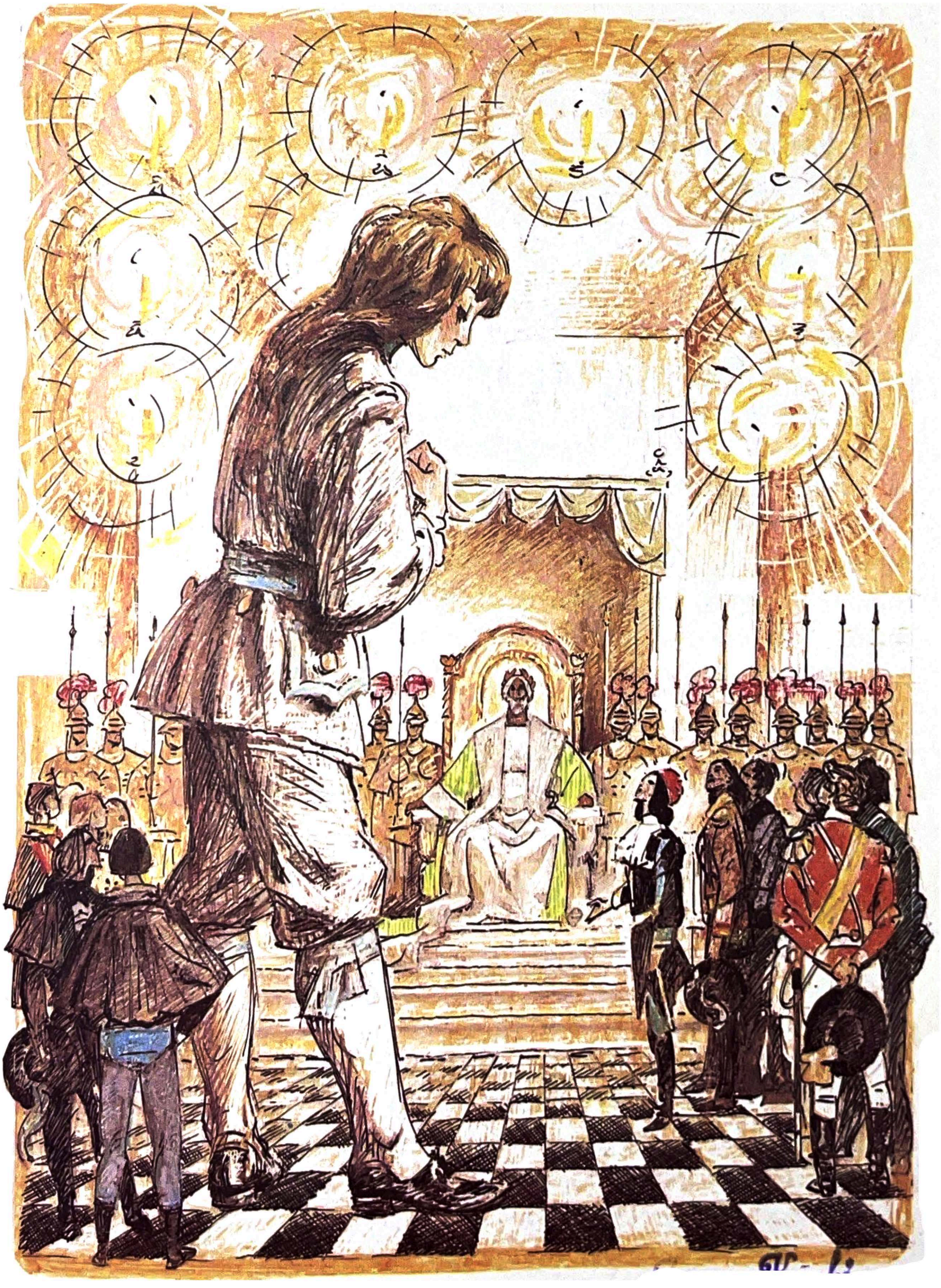
अल्योशा ने फ़ौरन अनुमान लगा लिया कि यह बादशाह है। उसने बहुत झुककर अभिवादन किया। बादशाह ने बड़े स्नेह से उसके अभिवादन का उत्तर दिया और सोने की आराम-कुर्सी पर बैठ गया। इसके बाद उसने अपने निकट खड़े सूरमाओं में से एक को कुछ आदेश दिया जिसने अल्योशा के पास आकर उससे आराम-कुर्सियों के नज़दीक हो जाने को कहा। अल्योशा ने ऐसा ही किया।

"मुझे बहुत अरसे से यह मालूम था कि तुम बड़े दयालु लड़के हो," बादशाह ने कहा, "लेकिन तीन दिन पहले तुमने मेरी जनता की बहुत बड़ी सेवा की और इसलिये तुम्हें इनाम मिलना चाहिये। मेरे बड़े वज़ीर ने मुझे सूचित किया है कि तुमने अनिवार्य और बड़ी क्रूर मृत्यु से उसकी जान बचाई है।"

"कब?" अल्योशा ने हैरान होकर पूछा।

"तीन दिन पहले अहाते में," बादशाह ने जवाब दिया। "यह देखो, यह है वह जिसकी तुमने जान बचाई थी।"

बादशाह ने जिसकी तरफ़ इशारा किया था, अल्योशा ने ग़ौर से उसे देखा और इसी वक़्त इस बात की ओर उसका ध्यान गया कि राजदरबारियों के बीच ऊपर से नीचे तक काली पोशाक पहने एक छोटा-सा आदमी खड़ा है। वह लाल रंग की विशेष टोपी, जो ऊपर से दांतेदार थी कुछ तिरछी-सी अपने सिर पर ओढ़े था और गले पर बेहद कलफ़ लगा हुआ और इसी कारण कुछ कुछ नीला प्रतीत होनेवाला सफ़ेद



रूमाल बांधे था। अल्योशा की तरफ़ देखकर वह स्नेहपूर्वक मुस्कराया। अल्योशा को वह परिचित-सा प्रतीत हुआ, यद्यपि उसे यह याद नहीं आ रहा था कि उसने उसे कहां देखा है।

अल्योशा के लिये यह बेशक बड़ी प्रशंसा की बात थी कि उसे ऐसे नेक काम का श्रेय दिया जा रहा था, किन्तु उसे सचाई से प्यार था और इसलिये उसने बड़े अदब से सिर झुकाकर कहा:

"बादशाह सलामत! जो कुछ मैंने कभी किया ही नहीं, उसका श्रेय भला मैं कैसे ले सकता हूं। तीन दिन पहले मुझे आपके बड़े वज़ीर की नहीं, बल्कि अपनी काली मुर्ग़ी की जान बचाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था जिसे बावर्चिन इसलिये नहीं चाहती थी कि उसने एक भी अण्डा नहीं दिया था..."

"यह तुम क्या कह रहे हो!" बादशाह ने ग़ुस्से से उसको रोका। "मेरा वज़ीर मुर्ग़ी नहीं, बल्कि सम्मानित राजदरबारी है!"

इसी वक़्त वज़ीर अल्योशा के निकट आ गया और उसने देखा कि वह वास्तव में ही उसकी प्यारी मुर्ग़ी था। उसे बेहद ख़ुशी हुई और उसने बादशाह से माफ़ी मांगी, गो वह किसी तरह भी इस सब का मतलब नहीं समझ पा रहा था।

"मुझे बताओ कि तुम क्या इनाम चाहते हो?" बादशाह ने अपनी बात आगे बढ़ाई। "अगर मेरे लिये मुमकिन होगा, तो ज़रूर ही तुम्हारी इच्छा पूरी करूंगा।"

"बेधड़क अपनी बात कहो, अल्योशा!" वज़ीर उसके कान में फुसफुसाया।

अल्योशा सोच में डूब गया। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या मांगे। अगर उसे ज़्यादा वक़्त दिया जाता, तो शायद वह कोई अच्छी चीज़ सोच लेता लेकिन चूंकि बादशाह को इन्तज़ार करवाना उसे वाजिब नहीं लगा, इसलिये उसने झटपट जवाब दिया।

"मैं चाहता हूं," उसने कहा, "कि मुझे जो पाठ दिये जायें, वे सब पढ़ाई किये बिना ही याद हो जायें।"

"मैंने तो यह नहीं सोचा था कि तुम इतने काहिल हो," बादशाह ने अफ़सोस से सिर हिलाते हुए कहा। "लेकिन कोई चारा नहीं, मुझे अपना वादा पूरा करना होगा।"

बादशाह ने हाथ हिलाया और उसी वक़्त एक नौकर सोने की तश्तरी में पटुए का एक बीज लिये हुए हाज़िर हो गया।

"इस बीज को ले लो," बादशाह ने कहा, "जब तक यह तुम्हारे पास रहेगा, तुम्हें जो भी पाठ दिये जायेंगे, तुम हमेशा उनके सही उत्तर दे पाओगे, लेकिन एक शर्त है कि तुम इसके बारे में, जो तुमने यहां देखा है या आगे देखोगे, किसी भी हालत में कभी किसी से एक भी शब्द नहीं कहोगे। ज़रा-सी शान दिखाने पर तुम हमेशा के

लिये हमारी मेहरबानी खो बैठोगे और हमारे लिये बहुत-सी मुश्किलें और परेशानियां पैदा कर दोगे।"

अल्योशा ने वह बीज लेकर काग़ज़ में लपेटा और जेब में रख लिया तथा यह वचन दिया कि कभी किसी से कोई चर्चा नहीं करेगा तथा विनम्र बना रहेगा। इसके बाद बादशाह आराम-कुर्सी से उठा और जैसे हॉल में आया था, वैसे ही बाहर चला गया तथा जाने से पहले उसने बड़े वज़ीर को यह हुक्म दिया कि अल्योशा की ख़ूब अच्छी तरह से ख़ातिरदारी की जाये।

बादशाह के जाते ही दरबारियों ने अल्योशा को घेर लिया। वे तरह-तरह से उसके प्रति अपना प्यार जताने और इस बात के लिये धन्यवाद देने लगे कि उसने बड़े वज़ीर की जान बचाई थी। सभी ने अपनी सेवायें प्रस्तुत कीं – कुछ ने पूछा कि क्या वह बाग़ में सैर करना और बादशाह का चिड़ियाघर देखना चाहेगा, दूसरों ने उसे शिकार पर चलने के लिये निमन्त्रित किया। अल्योशा की समझ में नहीं आ रहा था कि वह किस चीज़ के लिये हां करे। आख़िर वज़ीर ने कहा कि प्यारे मेहमान को वह ख़ुद ही भूमिगत दुनिया की अनूठी चीज़ें दिखायेगा।

शुरू में वह उसे बाग़ में ले गया। वहां रास्ते पर तरह-तरह के रंग-बिरंगे बड़े-बड़े पत्थर बिछे हुए थे जो वृक्षों पर लटके हुए असंख्य छोटे-छोटे लैम्पों की रोशनी में जगमगा रहे थे। अल्योशा को यह चमक बहुत अच्छी लगी।

"तुम्हारे यहां इन पत्थरों को रत्न कहा जाता है," वज़ीर ने बताया। "ये सभी हीरे, लाल, मरकत और एमेथिस्ट हैं।"

"काश, हमारे रास्तों पर भी ऐसे ही पत्थर बिछे होते!" अल्योशा ने बड़े उछाह से कहा।

"तब यहां की तरह वहां भी इनकी बहुत कम क़ीमत होती," वज़ीर ने जवाब दिया।

अल्योशा को पेड़ भी बहुत सुन्दर, यद्यपि बड़े अजीब लगे। वे लाल, हरे, कत्थई, सफ़ेद, आसमानी और बैंगनी यानी अनेक रंगों के थे। उन्हें बहुत ध्यान से देखने पर अल्योशा समझ गया कि वह दूसरी क़िस्म की काई के सिवा कुछ नहीं जो आम काई से ऊंची और अधिक मोटी है। वज़ीर ने उसे बताया कि बादशाह ने बड़ी ऊंची क़ीमत चुकाकर बहुत दूर के देशों और पृथ्वी की गहराई से यह काई मंगवाई है।

बाग़ से वे चिड़ियाघर में गये। वहां अल्योशा को जंगली दरिन्दे दिखाये गये जो सोने की ज़ंजीरों से बंधे हुए थे। ग़ौर से देखने पर अल्योशा को हैरानी हुई कि ये जंगली दरिन्दे बड़े-बड़े चूहे, छछूंदर, गन्धमार्जार और ऐसे ही अन्य जानवर थे जो पृथ्वी की ज़्यादा या कम गहराई में रहते हैं। अल्योशा को यह बहुत हास्यास्पद प्रतीत हुआ, किन्तु उसने शिष्टतावश कुछ कहा नहीं।

सैर के बाद बड़े हॉल में लौटने पर अल्योशा को मेज़ लगी दिखाई दी जिस पर तरह-तरह की टाफ़ियां, पेस्ट्रियां, मांस की पेस्टें और फल रखे हुए थे, सभी तश्तरियां असली सोने की थीं और बोतलें तथा गिलास बड़े-बड़े हीरों, लालों और मरकतों को काटकर बनाये गये थे।

"जो भी चाहो, खा सकते हो," वज़ीर ने कहा, "लेकिन तुम्हें अपने साथ कुछ भी नहीं ले जाने दिया जायेगा।"

अल्योशा ने उस दिन रात का भोजन बहुत पेट भरकर किया था, इसलिये उसने कुछ भी नहीं खाना चाहा।

"आपने मुझे अपने साथ शिकार पर ले चलने का वादा किया था," उसने वज़ीर से कहा।

"बड़ी ख़ुशी से," वज़ीर ने जवाब दिया। "मेरे ख़्याल में घोड़े तैयार खड़े हैं।"

इतना कहकर उसने सीटी बजाई। डंडों को लगामों से थामे हुए सईस भीतर आये। डंडों पर बढ़िया नक़्क़ाशी की हुई थी और वे घोड़ों के सिरों जैसे थे। वज़ीर बड़ी फुर्ती से अपने घोड़े पर सवार हो गया। अल्योशा को दूसरे डंडों की तुलना में कहीं अधिक बड़ा डंडा दिया गया।

"सावधानी से," वज़ीर ने कहा, "घोड़ा कहीं तुम्हें नीचे न गिरा दे, यह काफ़ी उद्दंड है।"

अल्योशा मन ही मन हंस रहा था, लेकिन जब उसने डंडे को टांगों के बीच दबाया, तो महसूस किया कि वज़ीर की सलाह बेमानी नहीं थी। डंडा असली घोड़े की तरह उसके नीचे दायें-बायें होने और उछलने-कूदने लगा और वह बड़ी मुश्किल से ही उस पर बैठा रह सका।

इसी बीच नरसिंघे बजा दिये गये और शिकारी विभिन्न संकरे रास्तों और दालानों में सरपट घोड़े दौड़ाने लगे। बहुत देर तक वे इसी तरह घोड़े दौड़ाते रहे और अल्योशा उनसे पीछे नहीं रहा, यद्यपि बड़ी मुश्किल से ही अपने उन्मादी डंडे को क़ाबू में रख पा रहा था।

अचानक बग़लवाले एक दालान से ऐसे बड़े-बड़े जंगली चूहे, जैसे कि अल्योशा ने पहले कभी नहीं देखे थे, उछलकर सामने आ गये। उन्होंने पास से निकल भागना चाहा, लेकिन वज़ीर ने जब उन्हें घेरने का हुक्म दिया, तो वे बड़ी दिलेरी से अपनी रक्षा करने लगे। किन्तु इसके बावजूद शिकारियों की मर्दानगी और दक्षता से उन पर विजय पा ली गयी। आठ जंगली चूहे तो वहीं खेत रहे, तीन निकल भागे और एक, जो बहुत बुरी तरह घायल हो गया था, वज़ीर ने उसका इलाज करके उसे चिड़ियाघर में पहुंचा देने का हुक्म दिया।

शिकार ख़त्म होने पर अल्योशा इतना अधिक थक गया था कि उसकी आंखें बरबस नींद से बन्द हुई जा रही थीं। इसके बावजूद वह काली मुर्ग़ी से बहुत-सी बातें करना चाहता था और इसलिये उसने उसी हॉल में लौट चलने की अनुमति चाही, जहां से वे शिकार को रवाना हुए थे। वज़ीर इसके लिये राज़ी हो गया।

बड़ी तेज़ी से घोड़े दौड़ाते हुए वे लौट चले और हॉल में पहुंचकर उन्होंने घोड़े सईसों के हवाले किये, दरबारियों और शिकारियों से विदा ली और उनके लिये लाई गयी कुर्सियों पर एक-दूसरे के पास बैठ गये।

"कृपया, यह बताओ," अल्योशा ने कहना शुरू किया, "आप लोगों ने अभी बेचारे जंगली चूहों को क्यों मार डाला जो आप लोगों को किसी तरह परेशान नहीं करते, और आपके रहने की जगह से इतनी दूर रहते हैं?"

"अगर हम उन्हें न मारते," वज़ीर ने जवाब दिया, "तो कुछ अरसे बाद इन्होंने हमें हमारे कमरों से निकाल बाहर किया होता और हमारी सारी रसद हड़प गये होते। इसके अलावा हल्की और मुलायम होने के कारण हमारे यहां चूहों और जंगली चूहों की फ़र बड़ी महंगी है। सिर्फ़ जाने-माने और विशेष महानुभावों को ही उनके उपयोग की इजाज़त दी जाती है।"

"कृपया मुझे यह बताओ कि तुम लोग हो कौन?" अल्योशा ने अगला प्रश्न किया।

"क्या तुमने कभी यह नहीं सुना कि धरती के नीचे हमारी जनता रहती है?" वज़ीर ने पूछा। "हां, यह सच है कि बहुत लोग हमें देख नहीं पाते हैं, फिर भी ऐसे मौक़े हुए हैं, ख़ास तौर पर अतीत में, जब हम लोगों के सामने धरती पर आये हैं। अब यह बहुत कम होता है, क्योंकि लोगों में विनम्रता नहीं रही और हमारे यहां ऐसा नियम है कि हम जिसके सामने आते हैं, वह अगर इस बात को गुप्त नहीं रखता है, तो हमें फ़ौरन अपनी वह जगह छोड़कर कहीं बहुत दूर, किसी दूसरी जगह पर जाना पड़ता है। तुम तो आसानी से ही कल्पना कर सकते हो कि हमारे बादशाह के लिये यह कितने दुख की बात होगी कि वह यहां का अपना सारा ठाठ-बाट छोड़कर सारी जनता को साथ लिये हुए किसी अजनबी धरती पर जाकर बसे। इसलिये तुमसे बहुत-बहुत अनुरोध करता हूं कि जहां तक हो सके, तुम विनम्र रहना, शान नहीं दिखाना। तुम्हारे ऐसा न करने पर हम सभी, ख़ास तौर पर मैं, बदक़िस्मती के शिकार हो जायेंगे। तुम्हारे प्रति कृतज्ञता अनुभव करते हुए ही मैंने बादशाह से तुम्हें यहां बुलाने की अनुमति ली थी। अगर तुम्हारी शानबाज़ी के कारण हमें यह जगह छोड़ने को मजबूर होना पड़ेगा, तो बादशाह मुझे कभी माफ़ नहीं करेगा..."

"मैं क़सम खाता हूं कि तुम्हारे लोगों की कभी किसी से चर्चा नहीं करूंगा," अल्योशा ने उसको टोकते हुए कहा। "मुझे अब याद आ गया है कि मैंने एक किताब

में बौनों के बारे में पढ़ा था, जो धरती के नीचे रहते हैं। उसमें लिखा था कि किसी शहर में एक मोची बहुत ही थोड़े अरसे में बहुत अमीर हो गया था। उसके पास इतनी दौलत कहां से आ गयी, किसी की समझ में यह बात नहीं आ रही थी। आख़िर किसी तरह यह पता चला लिया गया कि वह बौनों के लिये घुटनों और टख़नों तक के बूट बनाता था जिनके लिये बौने बहुत पैसे देते थे।"

"सम्भव है कि यह सच हो," वज़ीर ने जवाब दिया।

"लेकिन मेरी प्यारी, काली मुर्ग़ी," अल्योशा ने कहा, "मुझे यह बताओ कि वज़ीर होते हुए भी तुम मुर्ग़ी की शक्ल में धरती पर क्यों सामने आती हो और हॉलैंडी बुढ़ियों के साथ तुम लोगों का क्या सम्बन्ध है?"

अल्योशा की जिज्ञासा को शान्त करने के लिये काली मुर्ग़ी ने उसे विस्तारपूर्वक बहुत कुछ बताना चाहा, किन्तु उसके शुरू करते ही अल्योशा की आंखें मुंद गयीं और वह गहरी नींद सो गया। अगली सुबह को आंख खुलने पर उसने अपने को बिस्तर पर पाया।

बहुत देर तक उसके होश-हवास ठिकाने नहीं हुए और उसकी समझ में नहीं आया कि वह रात के क़िस्से के बारे में क्या सोचे। काली मुर्ग़ी और वज़ीर, बादशाह और योद्धा, हॉलैंडी बुढ़ियां और जंगली चूहे – उसके दिमाग़ में यह सब कुछ गड्डमड्ड हो गया और पिछली रात को उसने जो कुछ देखा था, बड़ी मुश्किल से उसे मन ही मन व्यवस्थित किया। यह याद आने पर कि बादशाह ने उसे पटुए का बीज दिया था वह झटपट अपनी पोशाक की ओर लपका और उसे अपनी जेब में सचमुच ही वह काग़ज़ मिल गया जिसमें वह लिपटा हुआ था। "देखेंगे," उसने साचा, "बादशाह अपनी बात पूरी करता है या नहीं! कल पढ़ाई शुरू हो जायेगी और मैंने अभी तक अपने सभी पाठ तैयार नहीं किये हैं।"

इतिहास के पाठ के बारे में वह विशेष रूप से चिंतित था। उसे विश्व-इतिहास के कुछ पृष्ठ ज़बानी याद करने को कहा गया था, लेकिन उसे अभी तक एक भी शब्द याद नहीं था!

सोमवार का दिन आया, सभी छात्र स्कूल में वापस आ गये और पढ़ाई शुरू हुई। दम बजे से बारह बजे तक स्कूल का संचालन करनेवाले मास्टर जी ख़ुद इतिहास पढ़ाते थे।

अल्योशा का दिल बहुत ज़ोर से धड़क रहा था... उसकी बारी आने तक उसने कई बार अपनी जेब में उस काग़ज़ को छुआ जिसमें पटुए का बीज लिपटा हुआ था... आख़िर पाठ सुनाने की उसकी बारी आयी। वह धड़कते हुए दिल से मास्टर जी के निकट गया, स्वयं यह न जानते हुए कि क्या कहे उसने मुंह खोला और किसी ग़लती तथा एक बार भी रुके बिना सारा पाठ सुना दिया। मास्टर जी ने उसकी बड़ी प्रशंसा



की, किन्तु अल्योशा को इस प्रशंसा से वैसी ही ख़ुशी हासिल नहीं हुई जैसी इसी तरह से पाठ सुना देने पर उसे पहले हुआ करती थी। उसके दिल की आवाज़ उससे कह रही थी कि वह इस प्रशंसा के योग्य नहीं है, क्योंकि इस पाठ के लिये उसे ज़रा भी मेहनत नहीं करनी पड़ी थी।

कुछ सप्ताहों के दौरान अध्यापकगण अल्योशा की प्रशंसा करते हुए ही नहीं थकते थे। किसी अपवाद के बिना उसे सभी पाठ बहुत ही अच्छी तरह से याद होते थे, एक भी ग़लती के बिना वह एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करता था और इसलिये वे उसकी असाधारण सफलताओं पर इतने हैरान होते थे कि बयान से बाहर। अपनी ऐसी प्रशंसा से अल्योशा को मन ही मन शर्म आती, वह इस बात से लज्जित होता कि उसे सहपाठियों के सामने मिसाल के तौर पर पेश किया जाता है, जबकि वह इसके बिल्कुल योग्य नहीं है।

इस सारे वक़्त में काली मुर्ग़ी उसके सामने नहीं आयी, यद्यपि पटुए का बीज पाने के बाद कुछ सप्ताहों तक वह हर रात को ही, जब सोने के लिये लेटता, उसे बुलाता। शुरू में उसे इस बात से बहुत दुख होता रहा, लेकिन बाद में वह यह सोचकर शांत हो गया कि अपने ऊंचे पद के अनुसार शायद वह बहुत ज़रूरी कामों में व्यस्त रहती है। कुछ अरसे के बाद उस प्रशंसा से, जिसकी उसपर झड़ी-सी लगी रहती थी, वह इतना ख़ुश रहने लगा कि बहुत कम ही काली मुर्ग़ी को याद करता।

इसी बीच सारे पीटर्सबर्ग में उसकी असाधारण योग्यता की ख़बर फैल गयी। स्कूलों के डायरेक्टर स्वयं कई बार स्कूल में आये और अल्योशा को मुग्ध भाव से देखते रहे। अध्यापक तो उसे सिर आंखों पर रखते थे, क्योंकि उसी की बदौलत स्कूल मशहूर हुआ था। शहर के हर हिस्से से मां-बाप मास्टर जी के पास आते और यह आशा करते हुए कि उनके बच्चे भी अल्योशा के समान बुद्धिमान हो जायेंगे, उन्हें स्कूल में दाख़िल कर लेने का अनुरोध करते।

जल्द ही स्कूल में नये छात्रों को दाख़िल करने के लिये जगह नहीं रही और मास्टर जी तथा उनकी पत्नी यह सोचने लगे कि उन्हें इस घर से, जिसमें वे इस वक़्त रहते थे, कहीं अधिक बड़ा घर किराये पर लेना चाहिये।

जैसा कि मैं ऊपर कह चुका हूं, शुरू में अल्योशा को अपनी तारीफ़ से यह महसूस करते हुए शर्म आती कि वह उसका बिल्कुल हक़दार नहीं है, लेकिन धीरे-धीरे वह इसका आदी होता गया और आख़िर उसका अहंभाव इस सीमा तक बढ़ गया कि वह तनिक भी लज्जा अनुभव किये बिना अपनी प्रशंसा को स्वीकार करने लगा। वह अपने बारे में ग़लतफ़हमी का शिकार होने लगा, दूसरे लड़कों के सामने अपनी शान दिखाने और यह सोचने लगा कि वह अन्य सभी से बेहतर और अधिक बुद्धिमान है। अल्योशा का स्वभाव इससे बिल्कुल ख़राब हो गया – दयालु, मधुर और विनम्र लड़के की जगह

वह घमण्डी तथा मनमानी करनेवाला बन गया। उसकी अन्तरात्मा बहुधा उसकी भर्त्सना करती थी, उसके अन्तर की आवाज़ उससे कहती: "अल्योशा, घमण्ड नहीं करो! तुम जिस चीज़ के हक़दार नहीं हो, उसे अपना नहीं मानो। क़िस्मत को इस बात के लिये धन्यवाद दो कि उसने दूसरे बालकों की तुलना में तुम्हें अधिक अनुकूल स्थिति प्रदान की है, लेकिन यह नहीं सोचो कि तुम सभी से बढ़-चढ़कर हो। अगर तुम अपने को नहीं सुधारोगे, तो सारी बुद्धिमत्ता के बावजूद कोई भी तुम्हें प्यार नहीं करेगा और तुम सबसे ज़्यादा बदक़िस्मत लड़के हो जाओगे!"

कभी-कभी वह अपने को सुधारने का इरादा बनाता, लेकिन, दुर्भाग्य से, उसका अहंभाव इतना अधिक बढ़ गया था कि वह उसकी अन्तरात्मा की आवाज़ को दबा देता, वह दिन-ब-दिन अधिक बुरा लड़का बनता गया और उसके साथी-सहपाठी उसे अधिकाधिक कम प्यार करने लगे।

इतना ही नहीं, अल्योशा बेहद शरारती भी हो गया। चूंकि उसे दिये गये पाठों को याद करने की ज़रूरत नहीं होती थी, जबकि दूसरे बालक उन्हें तैयार करने में जुटे रहते, अल्योशा शरारतें करता रहता और इस काहिली से उसका चरित्र और भी ज़्यादा बिगड़ता गया।

आखिर अपनी बुरी आदतों से उसने सभी के नाक में ऐसा दम कर दिया कि मास्टर जी ऐसे बुरे लड़के को सुधारने के उपाय ढूंढ़ने के बारे में गम्भीरतापूर्वक सोचने लगे और इसलिये दूसरे छात्रों की तुलना में उसे दुगने-तिगुने पाठ तैयार करने को देने लगे। लेकिन इससे भी कोई फ़ायदा नहीं हुआ। अल्योशा ज़रा भी पढ़ाई न करता, फिर भी मामूली-सी ग़लती के बिना उसे शुरू से आखिर तक सारा पाठ बहुत अच्छी तरह याद होता।

यह न समझ पाते हुए कि अल्योशा को कैसे सुधारा जाये, मास्टर जी ने एक दिन उसे अगली सुबह तक बीस पृष्ठ ज़बानी याद करने को कहा और यह आशा की कि कम से कम इस दिन तो वह शान्त रहेगा।

लेकिन इससे क्या फ़र्क़ पड़ता था! हमारे अल्योशा ने तो पाठ के बारे में सोचा भी नहीं! इस दिन उसने दूसरे दिनों के मुक़ाबले में और भी ज़्यादा शरारतें कीं और मास्टर जी ने व्यर्थ ही उसे यह धमकी दी कि अगली सुबह को अगर वह पाठ नहीं सुनायेगा, तो उसे सज़ा दी जायेगी। अल्योशा को चूंकि इस बात का यक़ीन था कि पटुए का बीज अवश्य ही उसकी मदद करेगा, इसलिये वह मास्टर जी की धमकी पर मन ही मन हंसता रहा।

अगले दिन पाठ का वक़्त आने पर मास्टर जी ने वह किताब हाथ में ली जिससे पाठ दिया था, अल्योशा को अपने पास बुलाया और पाठ सुनाने को कहा। सभी छात्र जिज्ञासा से उसकी ओर देखने लगे, मास्टर जी भी यह नहीं समझ पा रहे थे कि क्या

नतीजा सामने आता है, जब अल्योशा पिछली शाम को पाठ दोहराये बिना ही बड़े विश्वास से डेस्क से उठा और मास्टर जी के पास गया। अल्योशा को तनिक भी सन्देह नहीं था कि इस बार भी वह अपनी असाधारण योग्यता का परिचय दे सकेगा। उसने मुंह खोला... लेकिन एक भी शब्द नहीं बोल सका।

"आप चुप क्यों हैं?" मास्टर जी ने कहा। "पाठ सुनाइये।"

अल्योशा के चेहरे पर लाली दौड़ गयी, फिर उसका रंग उड़ा, फिर से लाली आई, वह हाथ मलने लगा, डर-घबराहट के मारे उसकी आंखें छलछला आयीं... सब व्यर्थ रहा! वह एक भी शब्द नहीं बोल पाया, क्योंकि पटुए के बीज पर भरोसा करते हुए उसने किताब को खोलकर भी नहीं देखा था।

"इस चुप्पी का क्या मतलब है, अल्योशा?" मास्टर जी चिल्ला उठे। "आप बोलना क्यों नहीं चाहते?"

खुद अल्योशा की समझ में भी नहीं आ रहा था कि ऐसी अजीब स्थिति का क्या कारण है। उसने बीज को छूने के लिये जेब में हाथ डाला... किन्तु उसकी हताशा का कैसे वर्णन किया जाये, जब उसे वह जेब में नहीं मिला! उसकी आंखों से आंसुओं की धार बह चली... वह फूट-फूटकर रोने लगा, मगर फिर भी एक शब्द नहीं कह पाया।

इसी बीच मास्टर जी के सब्र का प्याला छलक गया। वह इस चीज़ के आदी हो चुके थे कि अल्योशा हमेशा कोई ग़लती किये बिना और रुके बिना अपना पाठ सुनाता था, इसलिये उन्हें यह असम्भव प्रतीत हुआ कि अल्योशा को यदि अधिक नहीं, तो पाठ का आरम्भ भी याद न हो। उन्होंने अल्योशा की ख़ामोशी को उसकी ज़िद्द माना।

"सोने के कमरे में जाइये," मास्टर जी ने कहा, "और जब तक बिल्कुल अच्छी तरह से पाठ याद न हो जाये, वहीं रहिये।"

अल्योशा को नीचेवाली मंज़िल पर ले जाकर पुस्तक दे दी गयी और कमरे को ताला लगाकर बन्द कर दिया गया।

अकेला रह जाते ही वह हर जगह पर पटुए के बीज को ढूंढ़ने लगा। देर तक वह अपनी जेबें टटोलता रहा, फ़र्श पर रेंगा, उसने उसे पलंग के नीचे खोजा और कम्बल, तकियों तथा चादर को झाड़ा – लेकिन सब बेकार! प्यारे बीज का तो कहीं अता-पता ही नहीं था! उसने याद करने की कोशिश की कि वह उसे कहां खो सकता था और आख़िर इस नतीजे पर पहुंचा कि पिछली शाम को अहाते में खेलते हुए उसे कहीं गिरा बैठा है।

लेकिन अब उसे कैसे ढूंढ़े? वह कमरे में बन्द था और अगर उसे अहाते में जाने की इजाज़त भी मिल जाये, तो भी शायद कोई फ़ायदा नहीं होगा, क्योंकि जानता था कि मुर्ग़ियां पटुए के बीज को बहुत पसन्द करती हैं और निश्चय ही किसी

ने उसे खा लिया होगा! उसे ढूंढ़ने के मामले में हताश हो जाने पर उसने काली मुर्ग़ी को अपनी मदद के लिये बुलाने की सोची।

"प्यारी काली मुर्ग़ी!" उसने कहा। "मेहरबान वज़ीर! कृपया प्रकट होकर मुझे दूसरा बीज दे दो! सच कहता हूं कि आगे मैं बहुत सावधान रहूंगा।"

लेकिन किसी ने भी उसकी इस मिन्नत-समाजत का जवाब नहीं दिया और आख़िर वह कुर्सी पर बैठकर फिर से ज़ार-ज़ार रोने लगा।

इसी बीच दोपहर के भोजन का वक़्त हो गया, दरवाज़ा खुला और मास्टर जी भीतर आये।

"अब तो याद हो गया न आपको पाठ?" मास्टर जी ने अल्योशा से पूछा। बहुत ज़ोर से सिसकते हुए अल्योशा को यही जवाब देना पड़ा कि उसे याद नहीं है।

"तो जब तक याद न हो जाये, यहीं बैठे रहिये!" मास्टर जी ने कहा और थोड़ी-सी रोटी तथा पानी का गिलास देने का आदेश देकर उसे फिर से अकेले ही बन्द कर दिया।

अल्योशा पाठ याद करने लगा, लेकिन वह उसके दिमाग़ में टिकता ही नहीं था। उसे पाठ याद करने की आदत ही नहीं रही थी और फिर छपे हुए बीस पृष्ठों को भला कैसे याद करता! उसने चाहे कितनी ही मेहनत क्यों न की, अपने दिमाग़ पर चाहे कितना ही ज़ोर क्यों न डाला, लेकिन शाम होने पर उसे दो या तीन पृष्ठ याद हुए और वे भी अच्छी तरह से नहीं।

जब दूसरे छात्रों के सोने का वक़्त हुआ, तो वे सभी एकसाथ कमरे में आये और उनके साथ मास्टर जी ने भी प्रवेश किया।

"अल्योशा! आपको पाठ याद हुआ?" मास्टर जी ने पूछा।

और बेचारे अल्योशा ने रोते हुए जवाब दिया:

"केवल दो पृष्ठ याद हुए हैं।"

"तो लगता है कि कल भी आप रोटी और पानी पर यहीं बन्द रहेंगे," मास्टर जी ने कहा, दूसरे लड़कों के लिये शुभरात्रि की कामना करके वह बाहर चले गये।

अल्योशा अपने सहपाठियों के साथ रह गया। जब वह दयालु और विनम्र लड़का था, तो सभी उसे प्यार करते थे और अगर कभी उसे सज़ा भी मिलती थी, तो सभी को उस पर रहम आता था और इससे उसके मन को चैन मिलता था। लेकिन अब तो कोई भी उसकी तरफ़ ध्यान नहीं दे रहा था – सभी उसे तिरस्कार की दृष्टि से देखते थे और उसके साथ बोलते तक नहीं थे।

उसने खुद ही एक लड़के के साथ, जो पहले उसका बहुत पक्का दोस्त होता था, बातचीत करने की कोशिश की, लेकिन उसने भी उसकी बात का कोई जवाब न देकर मुंह मोड़ लिया। अल्योशा ने दूसरे लड़के को सम्बोधित किया, किन्तु उसने

भी उससे बात नहीं करनी चाही और दूसरी बार बात करने पर उसने अल्योशा को अपने से दूर धकेल दिया। अभागे अल्योशा ने अब यह अनुभव किया कि वह साथियों के ऐसे ही व्यवहार के योग्य है। आंसू बहाते हुए वह अपने बिस्तर पर जा लेटा, मगर किसी तरह भी सो नहीं पाया। बहुत देर तक वह ऐसे ही लेटा रहा और बड़े दुखी मन से बीते हुए सुखी दिनों को याद करता रहा। सभी लड़के मीठी नींद सो रहे थे, सिर्फ़ वह अकेला ही सो नहीं पा रहा था। "और मेरी काली मुर्ग़ी ने भी मुझे भुला दिया," अल्योशा ने सोचा और पुनः उसकी आंखों से अश्रु-धार बहने लगी।

अचानक... पास के पलंग की चादर उसी तरह से हिली-डुली जिस तरह उस दिन हिली थी, जब काली मुर्ग़ी पहली बार उसके सामने आई थी।

उसका दिल बहुत ज़ोर से धड़कने लगा... वह चाहता था कि मुर्ग़ी फिर पलंग के नीचे से निकलकर सामने आये, लेकिन यह उम्मीद करने की हिम्मत नहीं कर पा रहा था कि उसकी चाह पूरी हो जायेगी।

"काली मुर्ग़ी, काली मुर्ग़ी!" आख़िर उसने बहुत धीरे-धीरे कहा।

चादर ऊपर उठी और काली मुर्ग़ी उड़कर उसके पलंग पर आ गयी।

"अरे, काली मुर्ग़ी!" अल्योशा ने ख़ुशी से बाग़-बाग़ होते हुए कहा। "मैं यह उम्मीद करने की हिम्मत नहीं कर पा रहा था कि तुमसे मुलाक़ात होगी! तुम मुझे भूल तो नहीं गयीं?"

"नहीं," मुर्ग़ी ने जवाब दिया, "तुमने मुझ पर जो एहसान किया था, मैं उसे नहीं भूल सकती, यद्यपि मेरी जान बचानेवाला अल्योशा बिल्कुल वैसा नहीं था जैसा मैं अब अपने सामने देख रही हूं। तुम उस वक़्त दयालु, विनम्र और शिष्ट थे तथा सभी तुम्हें प्यार करते थे, किन्तु अब... अब तुम बिल्कुल बदल गये हो!"

अल्योशा फूट फूटकर रोने लगा और काली मुर्ग़ी उसे नसीहतें देती रही। वह बहुत देर तक उससे बातें करती और आंसू बहाते हुए यह अनुरोध करती रही कि वह अपने को सुधार ले। आखिर जब दिन का उजाला होने लगा, तो मुर्ग़ी ने उससे कहा:

"अब मुझे जाना होगा, अल्योशा! यह लो पटुए का वह बीज जो तुमने अहाते में गिरा दिया था। व्यर्थ ही तुमने यह सोचा कि हमेशा के लिये उसे खो बैठे हो। हमारा बादशाह बहुत दरियादिल है और तुम्हारी असावधानी के लिये तुम्हें इस वरदान से वंचित नहीं करेगा। हां, किन्तु यह याद रखना कि तुमने वह सब गुप्त रखने का वचन दिया है जो तुम्हें हमारे बारे में मालूम है... अल्योशा, अपने अवगुणों में तुम एक अन्य बुराई यानी कृतघ्नता की वृद्धि नहीं करना!"

अल्योशा ने बहुत ख़ुश होते हुए मुर्ग़ी के पंजे से अपना प्यारा बीज ले लिया और यह वादा किया कि अपने को सुधारने की पूरी कोशिश करेगा।

"तुम देखोगी, मेरी प्यारी मुर्ग़ी," उसने कहा, "कि मैं आज ही बहुत अच्छा बन जाऊंगा।"

"ऐसा नहीं समझो कि हम अपनी बुराइयों से, जब वे हम पर हावी हो जाती हैं, बहुत आसानी से निजात पा सकते हैं," काली मुर्ग़ी ने जवाब दिया। "बुराइयां तो हमारे भीतर सामान्यतः खुले द्वार से प्रवेश करती हैं और बाहर निकलती हैं छोटी-सी दरार से। इसलिये अगर तुम अपने को सुधारना चाहते हो तो तुम्हें अपनी ओर लगातार और बड़ी कड़ाई से ध्यान देना चाहिये। लेकिन अब नमस्ते, हमारे अलग होने का वक़्त हो गया।"

अकेला रह जाने पर अल्योशा बीज को देखने लगा और उसे देखते हुए उसका मन ही नहीं भरता था। पाठ के बारे में अब वह पूरी तरह निश्चिन्त था और पिछले दिन के दुख-क्लेश का लेशमात्र भी उसके दिल में शेष नहीं रहा था। वह बहुत ख़ुश होते हुए यह सोच रहा था कि जब किसी ग़लती के बिना बीस के बीस पृष्ठ सुना देगा तो सभी को कितनी अधिक हैरानी होगी और यह विचार कि अपने उन साथियों पर, जो उससे बात नहीं करना चाहते थे, फिर से अपनी विजय-पताका फहरा देगा, उसके अहंभाव को सन्तुष्ट कर रहा था। अपने को सुधारने की बात बेशक वह भूला नहीं था, किन्तु ऐसा सोचता था कि यह इतना कठिन नहीं होगा जितना कठिन काली मुर्ग़ी इसे मानती थी। "मानो अपने को सुधारना मुझ पर ही निर्भर न हो!" वह मन ही मन तर्क करता था। "बस, मेरे चाहने भर की देर है और फिर से सभी मुझे प्यार करने लगेंगे।" उफ़, बेचारा अल्योशा यह नहीं जानता था कि अपने को सुधारने के लिये यह ज़रूरी है कि आदमी अहंभाव और आवश्यकता से अधिक आत्म-विश्वास के त्याग से ही इसका आरम्भ करे।

सुबह को जब सभी छात्र कक्षा में आ गये तो अल्योशा को ऊपर बुलवाया गया। वह बहुत ख़ुश-ख़ुश और यह ज़ाहिर करता हुआ क्लास में आया कि बाज़ी उसके हाथ रहेगी। "आपको अपना पाठ याद है?" अल्योशा को कड़ी नज़र से देखते हुए मास्टर जी ने पूछा।

"याद है," अल्योशा ने दिलेरी से जवाब दिया।

वह पाठ सुनाने लगा और ज़रा-सी भी भूल किये बिना और तनिक भी रुके बिना उसने बीस के बीस पृष्ठ सुना दिये। मास्टर जी की हैरानी का पारावार नहीं था और अल्योशा ने बड़े गर्व से अपने साथियों की ओर देखा।

अल्योशा अपनी शान दिखा रहा है, यह चीज़ मास्टर जी की नज़र से छिपी न रह सकी।

"यह सही है कि आपको अपना पाठ याद है," मास्टर जी ने कहा, "लेकिन कल आपने उसे क्यों सुनाना नहीं चाहा था?"

"कल मुझे वह याद नहीं था," अल्योशा ने जवाब दिया।

"ऐसा नहीं हो सकता," मास्टर जी ने उसकी बात काटी। "कल शाम को आपने मुझसे यह कहा था कि आपको केवल दो पृष्ठ याद हैं और सो भी अच्छी तरह नहीं! और अब आपने एक भी ग़लती के बिना बीस के बीस पृष्ठ सुना दिये! कब याद किया आपने उन्हें?"

अल्योशा चुप रहा। आख़िर कांपती आवाज़ में बोला:

"मैंने आज सुबह उन्हें याद किया है!"

उसके ऐसा कहते ही अचानक सभी लड़के, जो उसके घमण्ड के कारण खीझे हुए थे, एकसाथ चिल्ला उठे:

"वह झूठ बोल रहा है, आज सुबह तो उसने किताब ही हाथ में नहीं ली!"

अल्योशा सिहरा, उसकी आंखें झुक गयीं और उसके मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला।

"जवाब दीजिये न!" मास्टर जी ने पूछना जारी रखा। "कब याद किया आपने अपना पाठ?"

किन्तु अल्योशा मौन साधे रहा। इस अप्रत्याशित प्रश्न और सभी सहपाठियों द्वारा दिखाये गये शत्रुभाव से वह ऐसे स्तम्भित हो गया कि सम्भल पाने में असमर्थ था।

इसी बीच मास्टर जी ने यह मानते हुए कि पिछले दिन उसने केवल ज़िद्द के कारण पाठ नहीं सुनाना चाहा था, यह ज़रूरी समझा कि उसे कड़ी सज़ा दी जाये।

"आपको तो प्रकृति ने ही ऐसी योग्यता और गुण दिया है," मास्टर जी ने अल्योशा से कहा, "इसलिये आपको तो और भी ज़्यादा विनम्र और आज्ञाकारी होना चाहिये। आपको इसीलिये तो बुद्धि नहीं दी गयी है कि आप उसका दुरुपयोग करें। कल की हठधर्मी के लिये आपको सज़ा मिलनी चाहिये और आज आपने झूठ बोलकर अपना कुसूर और बढ़ा लिया है। महानुभावो!" मास्टर जी ने छात्रों को सम्बोधित करते हुए अपनी बात जारी रखी। "अल्योशा जब तक अपने को पूरी तरह से न सुधार ले, मैं आप सबको उससे बोलने-चालने से मना करता हूं। और चूंकि उसके लिये शायद यह बहुत बड़ी सज़ा नहीं है, इसलिये बेंत लाने को कहिये।"

बेंत लाये गये.. अल्योशा का बुरा हाल था! जब से यह स्कूल बना था, आज पहली बार उसमें बेंत से सज़ा दी जा रही थी और वह भी किसे – अल्योशा को, जो अपने को इतना अधिक महत्त्व देता था और ख़ुद को सबसे बेहतर और बुद्धिमान मानता था! कितनी शर्म की बात थी!..

अल्योशा सिसकते हुए लपककर मास्टर जी के पास गया और उन्हें यह वचन दिया कि वह अपने को बिल्कुल सुधार लेगा।

"तो ऐसा पहले ही सोचना चाहिये था," मास्टर जी ने जवाब दिया।

अल्योशा के आंसुओं और प्रायश्चित्त ने उसके सहपाठियों के दिलों को छू लिया और वे मास्टर जी से उसे क्षमा करने की प्रार्थना करने लगे। अल्योशा यह अनुभव करते हुए कि वह उनकी सहानुभूति के योग्य नहीं है और भी ज़्यादा ज़ोर से रोने लगा।

"अच्छी बात है!" मास्टर जी ने कहा। "आपके साथियों की प्रार्थना को ध्यान में रखते हुए मैं आपको क्षमा कर दूंगा, लेकिन इस शर्त पर कि आप अपना क़ुसूर मान लें और यह बता दें कि आपने अपना पाठ कब याद किया।"

अल्योशा का दिमाग़ बिल्कुल चकरा गया... उसने भूमिगत बादशाह और उसके वज़ीर को जो वचन दिया था, उसे पूरी तरह भूलकर वह काली मुर्ग़ी, योद्धाओं और बौनों के बारे में बताने लगा...

मास्टर जी ने उसे अपनी बात पूरी नहीं करने दी।

"यह सब क्या है!" वह ग़ुस्से से चिल्ला उठे। "अपनी बुरी हरकतों के लिये पछताने के बजाय आप काली मुर्ग़ी का क़िस्सा बयान करके मेरा उल्लू भी बनाना चाहते हैं?.. यह तो हद ही हो गयी। नहीं, नहीं, छात्रो, जैसा कि आप ख़ुद देख रहे हैं, इसे सज़ा मिलनी ही चाहिये!"

और बेचारे अल्योशा को बेंत लगाये गये।

अल्योशा सिर झुकाये हुए नीचे की मंज़िल पर, सोने के कमरों में गया। उसके होश-हवास गुम थे... शर्म और पश्चात्ताप की भावना उसकी आत्मा पर हावी थी। कुछ घण्टों के बाद जब वह कुछ शान्त हुआ और उसने जेब में हाथ डाला... पटुए का बीज ग़ायब था। अल्योशा यह अनुभव करते हुए कि अब वह उसे हमेशा के लिये खो बैठा है, फूट-फूटकर रोने लगा।

रात को जब सभी लड़के सोने के लिये बिस्तरों पर चले गये, तो वह भी अपने पलंग पर जा लेटा, किन्तु उसे किसी तरह भी नींद नहीं आई। अपने बुरे रंग-ढंग के लिये कितना अधिक पश्चात्ताप हो रहा था उसे! उसने अपने को सुधारने का पक्का इरादा बना लिया, यद्यपि वह यह अनुभव कर रहा था कि पटुए के बीज को अब फिर से पाना किसी तरह भी सम्भव नहीं।

आधी रात के क़रीब पास के पलंग की चादर फिर से हिली-डुली। पिछली रात को ऐसा होने पर अल्योशा को बेहद ख़ुशी हुई थी, लेकिन अब उसने आंखें मूंद लीं। काली मुर्ग़ी से मिलते हुए वह डर महसूस कर रहा था! उसकी आत्मा उसे धिक्कार रही थी। पिछली ही रात को उसने बड़ा विश्वास दिलाते हुए काली मुर्ग़ी से यह कहा था कि वह अपने को अवश्य सुधार लेगा और ऐसा करने के बजाय उसने... अब वह क्या जवाब देगा उसे?

कुछ देर तक वह आंखें मूंदे लेटा रहा। उसे ऊपर को उठाई जा रही चादर की सरसराहट सुनाई दी...' कोई उसके पलंग के पास आया और जानी-पहचानी आवाज़ में किसी ने उसका नाम लिया:

"अल्योशा, अल्योशा!"

किन्तु उसे आंखें खोलते हुए शर्म आई, जबकि उसके गाल आंसुओं से तर हो रहे थे...

अचानक किसी ने उसका कम्बल खींचा। अल्योशा को मजबूरन आंखें खोलकर देखना पड़ा – उसके सामने काली मुर्ग़ी खड़ी थी – मुर्ग़ी की शक्ल में नहीं, बल्कि काली पोशाक और दांतेदार लाल टोपी पहने तथा गले पर कलफ़ लगा सफ़ेद रूमाल बांधे वज़ीर के रूप में ठीक वैसे ही, जैसे उसने उसे भूमिगत हॉल में देखा था।

"अल्योशा!" वज़ीर ने कहा, "मैं देख रहा हूं कि तुम सो नहीं रहे हो... तो विदा! मैं तुमसे विदा लेने आया हूं, हम अब फिर कभी नहीं मिलेंगे!"

अल्योशा की हिचकी बंध गयी।

"विदा!" उसने भावुकता से कहा। "विदा! और अगर क्षमा कर सकते हो, तो कर दो! मैं जानता हूं कि तुम्हारे सामने अपराधी हूं!"

"अल्योशा!" वज़ीर ने आंसू बहाते हुए कहा। "मैं तुम्हें क्षमा करता हूं, यह नहीं भूल सकता कि तुमने मेरी जान बचाई थी। मैं तो अभी भी तुम्हें प्यार करता हूं, यद्यपि तुमने मुझे अभागा व्यक्ति बना दिया है और वह भी शायद हमेशा के लिये!.. तो विदा! मुझे बहुत थोड़ी-सी देर के लिये ही तुमसे मिलने की इजाज़त दी गयी है। हमारे बादशाह को आज रात के दौरान ही अपनी पूरी प्रजा के साथ यहां से कहीं बहुत दूर जा बसना होगा। सभी बहुत हताश हैं, सभी रो रहे हैं। हम अनेक सदियों से यहां बड़ा सुखी और चैन का जीवन बिता रहे थे!"

अल्योशा वज़ीर के छोटे-छोटे हाथों को चूमने के लिये आगे बढ़ा। उसका हाथ अपने हाथ में लेने पर उसे उसपर कुछ चमकता-सा दिखाई दिया और इसी समय एक अनूठी आवाज़ ने उसे चकित कर दिया।

"यह क्या है?" उसने हैरान होकर पूछा।

वज़ीर ने दोनों हाथ ऊपर उठाये और अल्योशा ने देखा कि उनमें सोने की हथकड़ी लगी हुई है। अल्योशा के दिल को धक्का-सा लगा।

"तुम्हारा घमण्ड ही इस चीज़ के लिये ज़िम्मेदार है कि मुझे हथकड़ी पहननी पड़ रही है," वज़ीर ने गहरी आह भरकर कहा। "लेकिन तुम रोओ नहीं, अल्योशा! तुम्हारे आंसुओं से मेरा कुछ भी भला नहीं होगा। मेरे इस दुर्भाग्य में तुम केवल एक ही चीज़ से मेरे दिल को तसल्ली दे सकते हो – अपने को सुधारने की कोशिश करो और पहले की तरह ही दयालु लड़के बन जाओ। तो अब सदा के लिये विदा लेता हूं!"

वज़ीर ने अल्योशा से हाथ मिलाया और पलंग के नीचे ग़ायब हो गया।

"काली मुर्ग़ी, काली मुर्ग़ी!" अल्योशा चिल्लाया, मगर काली मुर्ग़ी ने कोई जवाब नहीं दिया।

रात भर एक पल को भी उसकी आंख नहीं लगी। पौ फटने के एक घंटा पहले उसे फ़र्श के नीचे कुछ शोर-सा सुनायी दिया। वह पलंग से नीचे उतरा, उसने फ़र्श के साथ अपना कान लगा दिया और बहुत देर तक छोटे-छोटे पहियों की खड़खड़ और शोर सुनता रहा मानो फ़र्श के नीचे अनेक छोटे-छोटे लोग चले जा रहे हों। इस शोर में उसे नारियों और बच्चों का रोना-धोना तथा काली मुर्ग़ी या वज़ीर की आवाज़ भी सुनायी दे रही थी जो चिल्ला-चिल्लाकर उससे कह रहा था:

"विदा, अल्योशा! सदा-सदा के लिये विदा!"

अगली सुबह को आंख खुलने पर लड़कों ने अल्योशा को फ़र्श पर बेहोश पड़े पाया। उन्होंने उसे उठाकर बिस्तर पर लिटाया और डाक्टर को बुलवा भेजा जिसने यह बताया कि उसे बहुत ज़ोर का बुख़ार है।

छः हफ़्ते बाद अल्योशा स्वस्थ हुआ और बीमारी से पहले जो कुछ हुआ था, उसे वह एक भयानक स्वप्न-सा लगा। न तो मास्टर जी और न ही उसके सहपाठियों ने उससे काली मुर्ग़ी और न ही उस सज़ा की कोई चर्चा की जो उसे दी गयी थी। खुद अल्योशा को भी इसका ज़िक्र करते हुए शर्म आती थी और अब वह आज्ञाकारी, दयालु, विनम्र और लगनशील बनने का प्रयत्न करता था। सभी उसको फिर से प्यार करने और चाहने लगे और अपने साथियों के लिये वह फिर से आदर्श बन गया, यद्यपि आन की आन में बीस पृष्ठ ज़बानी याद नहीं कर सकता था और कोई उससे ऐसा करने को कहता भी नहीं था।



व्लादीमिर ओदोयेव्स्की

नासदानी में नगरी



पापा ने नासदानी मेज़ पर रख दी।

"मीशा, यहां आकर इसे देखो तो," पापा ने कहा।

मीशा आज्ञाकारी लड़का था। उसने उसी क्षण अपने खिलौने वहीं छोड़े और पापा के पास गया। और सचमुच वहां देखने लायक़ कुछ था भी! कितनी सुन्दर नासदानी थी! रंग-बिरंगी, कछुए की बनी हुई! और उसके ढक्कन पर क्या था! फाटक, मीनारें, छोटा-सा घर, दूसरा, तीसरा, चौथा, इतने घर कि गिनती करना असम्भव, सभी अधिकाधिक छोटे होते हुए और सभी सुनहरे। वृक्ष भी सुनहरे थे और

उनके पत्ते थे रुपहले। वृक्षों के पीछे से सूर्योदय हो रहा था, उसकी गुलाबी किरणें सारे आकाश में फैल रही थीं।

"यह कौन-सी नगरी है?" मीशा ने पूछा।

"यह है टन-टन नगरी," पापा ने जवाब दिया और स्प्रिंग को छू दिया...

बस, क्या था? अचानक कहीं से संगीत सुनाई देने लगा। कहां से आ रहा था यह संगीत, मीशा समझ पाने में असमर्थ था। वह दरवाज़े के पास गया – कहीं दूसरे कमरे से तो नहीं आ रही थीं ये स्वर-लहरियां? वह घड़ी के निकट गया – उसमें से तो नहीं आ रहा था यह संगीत? मेज़ और शीशे की अलमारी के पास भी गया, यहां, वहां कान लगाया, मेज़ के नीचे भी झांककर देखा... आख़िर मीशा को यक़ीन हो गया कि संगीत नासदानी में से आ रहा था। वह उसके नज़दीक गया – क्या देखा कि वृक्षों के पीछे से सूरज निकल रहा है; धीरे-धीरे आकाश में बढ़ता जा रहा है और आकाश तथा नगरी अधिकाधिक रोशन होते जाते हैं। खिड़कियां तेज़ रोशनी से जगमगा रही थीं और मीनारों से मानो प्रकाश छन रहा था। यह लो, सारे आकाश को लांघकर सूरज दूसरी दिशा में पहुंच गया, नीचे ही नीचे होता गया और आख़िर टीले के पीछे जाकर पूरी तरह छिप गया। अब क्या था, नगरी पर अन्धेरा छा गया, झिलमिलियां बन्द हो गयीं, मीनारें धुंधला-सी गयीं, किन्तु थोड़ी देर को ही। यह लो, एक सितारा झिलमिलाने लगा, दूसरा सितारा जगमगा उठा, वृक्षों के पीछे से हंसिये जैसा चांद झांकने लगा, नगरी में फिर से प्रकाश हो गया, खिड़कियों में रुपहली चांदनी छिटक गयी और मीनारों में से कुछ नीली-नीली आभा लिये हुए किरणें बाहर बिखरने लगीं।

"पापा जी! पापा जी! क्या मैं इस नगरी में जा नहीं सकता? बहुत मन हो रहा है मेरा इसमें जाने को!"

"यह मुश्किल है, बेटा। यह नगरी तुम्हारे मुक़ाबले में बहुत छोटी है।"

"कोई बात नहीं, पापा जी, मैं भी इतना छोटा-सा हूं। बस, आप मुझे वहां जाने दें – मैं बहुत ही उत्सुक हूं यह जानने को कि वहां क्या हो रहा है..."

"भैया मेरे, वहां तो तुम्हारे बिना ही बहुत घिचपिच है।"

"वहां रहता कौन है?"

"कौन रहता है वहां? घंटियां रहती हैं वहां।"

मीशा के ऐसे सवाल सुनकर पापा ने नासदानी का ढक्कन उठा दिया और वहां क्या देखा मीशा ने? घंटियां, छोटी-छोटी हथौड़ियां, रोलर और पहिये... मीशा को बड़ी हैरानी हुई।

"किसलिये हैं ये घंटियां? किसलिये हैं ये हथौड़ियां? इनको सहित किसलिये है यह रोलर?" मीशा ने पापा से पूछा।

पापा ने जवाब दिया:

"यह मैं तुम्हें नहीं बताऊंगा, मीशा! खुद ही ध्यान से देखो और अपनी अक़्ल लड़ाओ – शायद समझ जाओ। सिर्फ़ इस स्प्रिंग को न छेड़ना वरना सब कुछ टूट जायेगा।"

पापा कमरे से बाहर चले गये और मीशा नासदानी पर झुका रह गया। वह झुका रहा, झुका रहा, बहुत ग़ौर से देखता रहा, सोचता रहा, सोचता रहा – घंटियां कैसे बजती हैं?

इस बीच संगीत बजता रहा, बजता रहा, अधिकाधिक धीमा होता गया मानो हर स्वर में कोई बाधा आ रही हो, मानो एक ध्वनि दूसरी को दूर धकेल रही हो। अचानक मीशा ने क्या देखा – नासदानी के नीचे छोटा-सा दरवाज़ा खुलता है, उस में से रुपहला स्कर्ट पहने सुनहरे बालोंवाला एक लड़का भागता हुआ बाहर आता है, दहलीज़ पर रुकता है और मीशा को इशारे से अपनी तरफ़ बुलाता है।

"पापा जी ने भला यह क्यों कहा था कि इस नगरी में मेरे बिना ही बहुत घिचपिच है? नहीं, लगता है कि वहां भले लोग रहते हैं। देखिये न, वह मुझे अपने यहां बुला रहा है।"

"हां, हां, बड़ी ख़ुशी से, बड़ी ख़ुशी से!"

मीशा भागकर छोटे-से दरवाज़े के पास गया और उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि दरवाज़ा ठीक उसके क़द के मुताबिक़ था। एक शिष्ट लड़के के नाते उसने सबसे पहले यही अपना कर्त्तव्य माना कि अपने मार्ग-दर्शक को सम्बोधित करे।

"मुझे किससे बात करने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है?" मीशा ने पूछा।

"मैं हूं टन-टन-टन," अपरिचित ने उत्तर दिया। "मैं इस नगरी में रहनेवाला 'घंटी-लड़का-टनटन बजता' हूं। हमने सुना है कि आप हमारे यहां आने को बहुत उत्सुक हैं और इसलिये हमने यह निर्णय किया है कि आपको अपने यहां निमन्त्रित करें और यह कि आप हमारा मान बढ़ायें। टन-टन-टन, टन-टन-टन!"

मीशा ने शिष्टता से सिर झुकाया। 'घंटी-लड़का-टनटन बजता' ने उसका हाथ थामा और वे दोनों चल दिये। इसी समय मीशा ने यह देखा कि उनके ऊपर सुनहरे हाशिये और रंग-बिरंगे तथा बेल-बूटोंवाले काग़ज़ की मेहराब बनी हुई है। उनके सामने एक और मेहराब थी, लेकिन इससे छोटी। उसके बाद तीसरी तथा फिर चौथी मेहराब और भी छोटी थी। इस तरह जो मेहराबें जितनी अधिक दूर थीं, वे उतनी ही अधिक छोटी होती जाती थीं तथा अन्तिम मेहराब तो इतनी छोटी प्रतीत हुई कि मीशा के मार्ग-दर्शक का सिर ही मुश्किल से उसमें से गुज़र सकता था।

"आपके निमन्त्रण के लिये मैं आपका बहुत आभारी हूं," मीशा ने उससे कहा, "लेकिन मालूम नहीं मैं इसका सदुपयोग भी कर पाऊंगा या नहीं। यह सही है कि इस मेहराब के नीचे से तो मैं बड़ी आसानी से गुज़र सकता हूं, किन्तु वहां आगे देखिये

तो – आपकी मेहराबें कितनी नीची हैं। मुझे साफ़-साफ़ कहने की अनुमति दीजिये, उन्हें तो मैं रेंगकर भी नहीं लांघ सकूंगा। मुझे हैरानी हो रही है कि आप भी उनके नीचे से कैसे गुज़र पाते हैं।"

"टन-टन-टन!" लड़के ने जवाब दिया। "चलिये, कोई चिन्ता नहीं कीजिये। बस, मेरे पीछे-पीछे चले आइये।"

मीशा ने ऐसा ही किया। और वास्तव में ही ऐसा लगा कि उनका हर क़दम बढ़ने के साथ मेहराबें ऊंची होती जाती थीं और दोनों लड़के बड़े मज़े से उनके नीचे से गुज़र जाते थे। आख़िरी मेहराब तक पहुंचने पर 'घंटी-लड़का-टनटन बजता' ने मीशा से मुड़कर देखने को कहा। मीशा ने मुड़कर देखा। और क्या दिखाई दिया उसे? अब पहली मेहराब, जिसके निकट वह दरवाज़ा लांघकर पहुंचा था, उसे बहुत छोटी प्रतीत हुई मानो जब तक वे आगे बढ़े, इसी बीच वह नीची हो गयी। मीशा को बड़ा आश्चर्य हुआ।

"इसका क्या कारण है?" उसने अपने मार्ग-दर्शक से पूछा।

"टन-टन-टन!" मार्ग-दर्शक ने हंसते हुए जवाब दिया। "दूरी से हमेशा ऐसा ही प्रतीत होता है। ज़ाहिर है कि आपने दूरी पर कभी किसी चीज़ को बहुत ग़ौर से नहीं देखा। दूरी पर सब कुछ छोटा लगता है, नज़दीक पहुंचने पर वही बड़ा हो जाता है।"

"हां, यह ठीक है," मीशा ने जवाब दिया। "मैंने अभी तक इसके बारे में नहीं सोचा था और इसीलिये मेरे साथ यह बात हुई थी – आज से तीन दिन पहले मैंने इस तरह का एक चित्र बनाना चाहा कि अम्मां मेरे निकट पियानो बजा रही हैं और पापा कमरे के दूसरे सिरे पर बैठे हुए पुस्तक पढ़ रहे हैं। लेकिन मुझे यह चित्र बनाने में किसी तरह भी सफलता नहीं मिली। बड़ी लगन से उस काम में जुटा रहा, ज़्यादा से ज़्यादा सही तौर पर चित्र बनाने की कोशिश करता रहा, लेकिन काग़ज़ पर यही तस्वीर बनती कि पापा अम्मां के नज़दीक बैठे हैं और उनकी आरामकुर्सी पियानो के पास है, जबकि मुझे बहुत अच्छी तरह से यह नज़र आ रहा था कि पियानो मेरे नज़दीक सटा हुआ है तथा पापा अंगीठी के पास दूसरे सिरे पर बैठे हैं। अम्मां ने कहा कि पापा को छोटा-सा चित्रित करना चाहिये, लेकिन मैंने सोचा कि वह मज़ाक़ कर रही हैं, क्योंकि पापा तो उनसे कहीं अधिक लम्बे हैं। हां, अब देख रहा हूं कि अम्मां ठीक कह रही थीं – पापा को छोटा-सा चित्रित करना चाहिये था, क्योंकि वह दूर बैठे थे। यह बात स्पष्ट करने के लिये बहुत कृतज्ञ हूं, बहुत ही कृतज्ञ हूं।"

'घंटी-लड़का-टनटन बजता' ख़ूब ज़ोर से हंसा: "टन-टन-टन, यह कितनी हंसी की बात है! टन-टन-टन, कितनी हंसी की बात है! पापा और अम्मां का चित्र नहीं बना सकता! टन-टन-टन, टन-टन-टन!"

मीशा को यह बुरा लगा कि 'घंटी-लड़का-टनटन बजता' ऐसी निर्दयता से उसका मज़ाक़ उड़ा रहा है। उसने बड़ी शालीनता से उससे कहा :

"मैं यह पूछने की इजाज़त चाहता हूं कि आप हर शब्द के साथ टन-टन-टन क्यों कहते रहते हैं?"

"हमारे यहां तो ऐसा तकिया कलाम है।"

"तकिया कलाम?" मीशा ने दोहराया। "लेकिन मेरे पापा का कहना है कि तकिया कलामों का आदी होना अच्छी बात नहीं।"

'घंटी-लड़का-टनटन बजता' ने फ़ौरन चुप्पी साध ली और एक भी शब्द नहीं कहा।

अब छोटे-छोटे दरवाज़े इनके सामने आये, वे खुले तथा उन्हें लांघने के बाद मीशा ने अपने को सड़क पर पाया। ख़ूब सड़क है यह भी! ख़ूब नगरी है यह भी! सड़क सीपियों से बनी हुई, आकाश रंग-बिरंगा, कछुए का। आकाश में सुनहरा सूरज चल रहा था, उसे अपनी ओर आकर्षित करो, वह आकाश से उतर आयेगा, हाथों के गिर्द चक्कर लगायेगा और फिर से ऊपर चला जायेगा। छोटे-छोटे घर इस्पात के हैं, उनपर पालिश की गयी है और वे चमक रहे हैं, उनपर रंग-बिरंगे घोंघे जड़े हुए हैं। हर घर में रुपहला स्कर्ट पहने सुनहरे बालोंवाला एक 'घंटी-लड़का-टनटन बजता' बैठा था, बहुत बड़ी संख्या थी उनकी और प्रत्येक दूसरे की तुलना में कुछ-कुछ छोटा था।

"नहीं, अब मेरी आंखों में धूल नहीं झोंकी जा सकेगी," मीशा ने कहा, "यह तो मुझे ही दूर से ऐसा लगता है और वास्तव में सभी घंटियां एक जैसी हैं।"

"नहीं, ऐसा नहीं है," मार्ग-दर्शक ने कहा, "अगर हम एक जैसे घंटी-लड़के होते तो हमारी आवाज़ में भी कोई अन्तर न होता, सभी एक तरह से टनटन बजते। लेकिन तुम तो सुनते हो कि हम किस तरह के गीत प्रस्तुत करते हैं। ऐसा इसलिये है कि हममें जो बड़ा है, उसकी आवाज़ भी ऊंची है। क्या तुम इतना भी नहीं जानते? तो देखा, मीशा, तुम्हारे लिये यह अच्छा सबक़ है – भविष्य में तुम उनपर नहीं हंसना जिनका तकिया कलाम अच्छा नहीं। तकिया कलाम का आदी होने पर भी दूसरे के मुक़ाबले में उसकी जानकारी ज़्यादा हो सकती है और उससे भी कुछ सीखा जा सकता है।"

अब मीशा का मुंह बन्द हो गया।

इसी बीच बहुत-से 'घंटी-लड़का-टनटन बजता' ने इन दोनों को घेर लिया, वे मीशा की पोशाक का पल्लू खींचते, टनटन करते, उछलते-कूदते, दौड़ते-भागते।

"बड़े मज़े की ज़िन्दगी है आपकी," मीशा ने कहा। "ख़ुशी से हमेशा आपके साथ ही रहता। दिन भर आप कुछ भी तो नहीं करते। आपको न तो पढ़ना-लिखना पड़ता है, यहां न अध्यापक ही हैं और फिर आप सारा दिन संगीत भी सुनते हैं।"

"टन-टन-टन!" घंटी-लड़के चिल्ला उठे। "वाह, बड़े मज़े की ज़िन्दगी पायी है तुमने हमारी। नहीं, मीशा, ख़ासी बुरी ज़िन्दगी है हमारी। यह सही है कि हमें लिखना-पढ़ना नहीं पड़ता, लेकिन इससे क्या फ़ायदा है? हम लिखने-पढ़ने से ज़रा भी नहीं घबराते। हमारी सबसे बड़ी मुसीबत यह है कि हम बेचारों के लिये करने-धरने को कुछ नहीं है। न तो किताबें हैं, न तस्वीरें, न हमारे माता-पिता हैं, हमें कोई भी तो काम नहीं है। दिन भर खेलते रहो, खेलते रहो, लेकिन मीशा, यह तो बड़ी उबानेवाली बात है। जाने, तुम यक़ीन करोगे या नहीं? कछुए की खाल का हमारा आकाश बहुत अच्छा है, सुनहरा सूरज और सुनहरे पेड़ भी बड़े सुन्दर हैं, लेकिन हम एक मुद्दत से उन्हें देख रहे हैं, मन ऊब गया है हमारा इन सब से। इस नगरी से एक क़दम भी बाहर नहीं जा सकते और तुम कल्पना कर सकते हो कि सारी उम्र नासदानी में निठल्ले बैठे रहने से, बेशक उसमें संगीत भी बजता हो, कैसी भारी गुज़रती होगी हम पर।"

"हां," मीशा बोला, "ठीक कह रहे हैं आप। मेरे साथ भी ऐसा हुआ करता है – पढ़ाई के बाद जब खिलौने हाथ में लेता हूं तो बड़ा आनन्द आता है, किन्तु पर्व-त्योहार की छुट्टी होने पर दिन भर खेलता रहता हूं, तो शाम होते न होते मन ऊबने लगता है। कभी एक, तो कभी दूसरा खिलौना हाथ में लेने पर उकताहट महसूस होता है। बहुत अर्से तक मैं इसका कारण नही समझ पाया, लेकिन अब समझ गया हूं।"

"और हां, हमारे लिये तो एक अन्य मुसीबत भी है, मीशा। हमारे तो कमांडर भी हैं।"

"कैसे कमांडर?"

"कमांडर-हथौड़े," उन्होंने जवाब दिया। उफ़, कैसे गुस्सैल हैं वे! नगरी में आते-जाते हमारी ठुकाई करते रहते हैं। हममें से जो बड़े हैं उन पर कम ठुक-ठुक होती है, लेकिन छोटों की शामत आयी रहती है।"

वास्तव में ही मीशा ने देखा कि सड़क पर पतले-पतले पैरों और लम्बी-लम्बी नाकोंवाले कुछ महानुभाव घूमते रहते हैं, आपस में "ठुक-ठुक-ठुक! ठुक-ठुक-ठुक! ऊपर उठो! चोट करो! ठुक-ठुक-ठुक! ठुक-ठुक-ठुक!" फुसफुसाते रहते हैं।

कमांडर-हथौड़े सचमुच ही कभी एक, तो कभी दूसरे घंटी-लड़के पर चोट करते थे। बेचारे मीशा को तो घंटी-लड़कों पर दया भी आई। वह इन महानुभावों के पास गया, बड़े अदब से इन्हें सिर झुकाया और नम्रता से पूछा कि वे ऐसी निर्दयता से बेचारे लड़कों की पिटाई क्यों करते रहते हैं? हथौड़ों ने उसे जवाब दिया:

"दूर जाओ, आड़े नहीं आओ! वहां, कमरे में, गाउन पहने इन्स्पेक्टर लेटा है, वही हमें ऐसे ठुक-ठुक करने का हुक्म देता है। लगातार हिलता-डुलता है, उलझता-चिपकता है। ठुक-ठुक-ठुक! ठुक-ठुक-ठुक!"

"कौन है यह आपका इन्स्पेक्टर?" मीशा ने घंटी-लड़कों से पूछा।

"यह श्रीमान रोलर है," वे सभी टनटना उठे, "बड़ा ही दयालु व्यक्ति है, दिन-रात सोफ़े पर ही लेटा रहता है। उसके ख़िलाफ़ हमें कोई शिकायत नहीं है।"

मीशा इन्स्पेक्टर के पास पहुंचा। क्या देखता कि वास्तव में ही वह गाउन पहने लेटा हुआ है, दायें-बायें करवटें बदलता है, लेकिन मुंह ऊपर उठाये हुए। और उसके गाउन पर बेशुमार सुइयां तथा हुकें लगी हुई थीं। कोई हथौड़ा ज्योंही उसके निकट आता है, वह पहले तो उसे हुक से फांस लेता और फिर छोड़ देता। हथौड़ा घंटी-लड़के पर चोट करता था।

मीशा के नज़दीक पहुंचते ही इन्स्पेक्टर चिल्ला उठा:

"हा, हा, हो! कौन यहां पर चलता? चहलक़दमी करता? अरे-रे! कौन यहां से नहीं जाता? मुझे सोने नहीं देता? हा, हा, हो!"

"यह मैं हूं, मीशा," उसने दिलेरी से जवाब दिया।

"क्या चाहिये तुम्हें?" इन्स्पेक्टर ने पूछा।

"मुझे बेचारे घंटी-लड़कों पर तरस आ रहा है। वे सभी इतने समझदार, दयालु और अच्छे वादक हैं, किन्तु आपके हुक्म के मुताबिक़ कमांडर-हथौड़े लगातार उन पर चोट करते रहते हैं..."

"मेरी बला से, हा, हा, हो! मैं ही यहां सबसे बड़ा नहीं हूं। कमांडर अगर छोकरों की पिटाई करते हैं, तो करते रहें! मेरी बला से! मैं हूं दयालु इन्स्पेक्टर, हर वक़्त सोफ़े पर लेटा रहता हूं और किसी पर भी नज़र नहीं रखता हूं। हा, हा, हो! हा, हा, हो..."

"इस नगरी में बहुत कुछ सीखा है मैंने!" मीशा ने मन ही मन सोचा। "कभी-कभी मुझे इस बात से झल्लाहट होती है कि इन्स्पेक्टर मुझ पर नज़र क्यों टिकाये रहता है। 'दुष्ट कहीं का, दुष्ट कहीं का!' मैं सोचा करता हूं। 'आख़िर वह तो न मेरा पापा है और न अम्मां। अगर मैं शरारत करता हूं, तो उसे क्या? बैठा रहे चैन से अपने कमरे में।' नहीं, लेकिन अब देख रहा हूं कि बेचारे उन लड़कों का कैसा बुरा हाल होता है जिनकी कोई देख-भाल नहीं करता।"

इसी बीच मीशा आगे जाकर रुक गया। क्या देखा उसने कि मोतियों की झालर-वाला सोने का तम्बू है और उसके ऊपर पवन-चक्की की तरह सोने का वात-दर्शक घूम रहा है। तम्बू के नीचे स्प्रिंग बादशाह लेटा हुआ था और वह कभी तो सांप की तरह गुड़मुड़ी हो जाता, तो कभी फैल जाता तथा लगातार इन्स्पेक्टर को बग़ल में टहोकता जाता था। मीशा को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ और उसने स्प्रिंग बादशाह से कहा:

"बादशाह सलामत! आप इन्स्पेक्टर की बग़ल में टहोकते क्यों हैं?"

"छिः-छिः-छिः," स्प्रिंग बादशाह ने जवाब दिया। "तुम बुद्धू लड़के हो, बेसमझ लड़के हो! सब कुछ देखते हुए भी कुछ नहीं देखते हो! अगर मैं रोलर को धकेलूं नहीं,

तो वह घूमेगा नहीं। अगर वह घूमेगा नहीं तो हथौड़ों को अपनी हुकों में फंसाये और छोड़ेगा नहीं और हथौड़े चोट नहीं करेंगे। अगर हथौड़े चोट नहीं करेंगे तो घंटी-लड़के बजेंगे नहीं और अगर वे बजेंगे नहीं तो संगीत पैदा नहीं होगा। छि:-छि: छि: ! "

मीशा ने यह जानना चाहा कि स्प्रिंग बादशाह सच बोल रहा है या नहीं। उसने झुककर उसे उंगली से दबा दिया – और तभी क्या हुआ? पलक झपकते में ही स्प्रिंग बहुत ज़ोर से फैल गया, रोलर बहुत तेज़ी से घूमने लगा, हथौड़े बड़ी जल्दी-जल्दी चोटें करने लगे, घंटी-लड़के बड़ी द्रुत गति से टन-टनाने लगे और अचानक स्प्रिंग टूट गया। सब कुछ शांत हो गया, रोलर ने घूमना बन्द कर दिया, हथौड़े नीचे गिर गये, घंटी-लड़के एक ओर को लुढ़क गये, सूरज नीचे लटक गया, छोटे-छोटे घर टूट गये ... मीशा को इसी वक़्त यह याद आया कि पापा ने स्प्रिंग को छेड़ने की मनाही की थी, वह डर गया और ... उसकी आंख खुल गयी।

"सपने में क्या देखा, मीशा?" पापा ने पूछा।

मीशा काफ़ी देर तक कुछ नहीं समझ पाया। वह देख रहा था कि वही पापा का कमरा था, वही नासदानी सामने रखी थी तथा पापा और अम्मां उसके नज़दीक बैठे हंस रहे थे।

"कहां हैं घंटी-लड़के? कहां हैं हथौड़े-कमांडर? कहां है स्प्रिंग-बादशाह?" मीशा ने पूछा। "तो क्या यह सपना ही था?"

"हां, मीशा, संगीत ने लोरी दे देकर तुम्हें सुला दिया था और तुम यहां काफ़ी देर तक सोये रहे हो। कम से कम हमें यह तो बताओ कि तुमने सपने में क्या देखा?"

"बात यह है, पापा जी," मीशा ने छोटी-छोटी आंखें मलते हुए जवाब दिया, "मुझे यह जानने की बड़ी कुरेद थी कि नासदानी में संगीत क्यों बजता है। इसलिये मैं बड़े ध्यान से इसे देखने और यह समझने की कोशिश करने लगा कि उसमें क्या घूमता है और क्यों घूमता है। सोचता रहा, सोचता रहा और यह समझनेवाला ही था कि अचानक क्या देखता हूं – नासदानी का दरवाज़ा खुल गया ..." उसके बाद मीशा ने सारा सपना ढंग से कह सुनाया।

"अब मैं देख रहा हूं," पापा बोले, "तुम सचमुच यह बात लगभग समझ गये हो कि नासदानी में संगीत किस तरह बजता है। किन्तु जब यन्त्र-विद्या सीखोगे, तो इस चीज़ को और भी अच्छी तरह समझ जाओगे।"



मिख़ाईल लेर्मोन्तोव

आशिक़-ग़रीब

बहुत पुरानी बात है कि तिफ़लिस शहर में एक अमीर तुर्क रहता था। अल्लाह ने उसे बहुत दौलत दी थी, मगर दौलत से भी ज़्यादा प्यारी थी उसे अपनी इकलौती बेटी मगुल-मेगेरी। आसमान में सितारे सुन्दर लगते हैं, लेकिन सितारों से आगे फ़रिश्ते रहते हैं और वे सितारों से भी ज़्यादा प्यारे हैं। ऐसे ही मगुल-मेगेरी तिफ़लिस की सभी लड़कियों में बढ़-चढ़कर थी।

आशिक़-ग़रीब भी तिफ़लिस में रहता था। क़िस्मत ने उसे बड़े दिल और सुरीली आवाज़ के सिवा कुछ भी नहीं दिया था। वह ब्याह-शादियों में साज़ बजाता और तुर्केस्तान के पुराने सूरमाओं की तारीफ़ों के

गाने गाता, अमीरों और खुशक़िस्मत लोगों के दिल बहलाता हुआ जहां-तहां घूमता रहता। एक शादी में उसने मगुल-मेगेरी को देखा और पहली ही नज़र में उन्हें एक-दूसरे से मुहब्बत हो गयी। बेचारे ग़रीब आदमी को इस बात की बहुत ही कम उम्मीद थी कि वह अपनी महबूबा से शादी कर पायेगा और इसलिये वह जाड़े के आसमान की तरह उदास रहने लगा।

एक दिन क्या हुआ कि वह अंगूरों की बेलों के साये में लेटा हुआ था और ऐसे लेटे-लेटे ही उसकी आंख लग गयी। इसी वक़्त अपनी सहेलियों के साथ मगुल-मेगेरी उसके पास से गुज़री। एक सहेली की नज़र सोये हुए आशिक़ पर पड़ गयी, वह जान-बूझकर पीछे रह गयी और आशिक़ के पास गयी।

"अंगूरों की बेलों के साये में सोनेवाले," वह गाने लगी, "उठो, उठो, बुद्धू, तुम्हारी हिरनी देखो, यहीं पास से गुज़र रही है।"

आशिक़-ग़रीब जाग गया – लड़की तो परिन्दे की तरह झटपट वहां से ग़ायब हो गयी। मगुल-मेगेरी ने उसका गाना सुन लिया था और वह उसे भला-बुरा कहने लगी।

"अगर तुम्हें यह मालूम होता कि किसके लिये गा रही थी मैं यह गाना," सहेली ने जवाब दिया, "तो तुम मेरी बहुत शुक्रगुज़ार होतीं – मैं तो तुम्हारे आशिक़-ग़रीब को ही सुना रही थी यह गाना।"

"मुझे उसके पास ले चलो," मगुल-मेगेरी ने कहा।

और वे दोनों उसके पास पहुंचीं। आशिक़-ग़रीब का उदास चेहरा देखकर मगुल-मेगेरी उसकी उदासी का कारण पूछने और उसे तसल्ली देने लगी।

"मैं कैसे उदास न होऊं," आशिक़-ग़रीब ने जवाब दिया। "मैं तुमसे मुहब्बत करता हूं, लेकिन तुम कभी मेरी नहीं बन सकोगी।"

"मेरे अब्बा से इसकी इल्तिजा करो," उसने कहा, "वह अपने ख़र्च से हमारी शादी कर देंगे और मुझे इतनी दौलत दे देंगे कि हम दोनों के लिये काफ़ी होगी।"

"यह तो किया जा सकता है," उसने जवाब दिया, "मान लो कि तुम्हारे अब्बा, आयाक-आगा, अपनी बेटी के लिये किसी तरह की कोई कसर नहीं उठा रखेंगे, लेकिन कौन कह सकता है कि बाद में तुम मुझे ये उलाहने नहीं दोगी कि मैं तो बिल्कुल भूखा-नंगा था और तुम्हारी बदौलत ही मेरे ऐसे ठाट-बाट हैं। नहीं, प्यारी मगुल-मेगेरी, मैंने अपने दिल में पक्का इरादा बना लिया है – सात साल तक जगह-जगह की ख़ाक छानूंगा और बहुत-सी दौलत कमाऊंगा या फिर कहीं दूर-दराज़ के रेगिस्तानों में अपनी जान गंवा दूंगा। अगर तुम इसके लिये राज़ी हो, तो सात साल बीतने पर तुम मेरी बीवी बन जाओगी।"

मगुल-मेगेरी राज़ी हो गयी, लेकिन साथ ही उसने यह भी कह दिया कि अगर

सात साल बीतते ही वह वापस नहीं आयेगा तो वह ख़ुरशीद-बेग की बीवी बन जायेगी जो बहुत अर्से से उसके साथ सगाई करना चाहता है।

आशिक़-ग़रीब अपनी मां के पास गया, सफ़र पर रवाना होने से पहले उसका आशीर्वाद लिया, छोटी बहन को प्यार किया, कंधे पर थैला डाला, हाथ में सफ़र की साथी यानी लाठी ली और तिफ़लिस से रवाना हो गया। कुछ दूर जाने पर उसे एक घुड़सवार अपने नज़दीक आता सुनाई दिया। उसने मुड़कर देखा – ख़ुरशीद-बेग था।

"तुम्हारा सफ़र अच्छा रहे!" ख़ुरशीद-बेग ने ऊंची आवाज़ में कहा। "मुसाफ़िर, तुम जहां भी जाओगे मैं तुम्हारा साथ दूंगा।"

अपने इस साथी से आशिक़ को ख़ुशी नहीं हुई, लेकिन कोई चारा भी नहीं था। बहुत देर तक दोनों साथ-साथ चलते रहे और आख़िर उन्हें अपने सामने एक दरिया दिखाई दिया। उस पर न कोई पुल था, न कहीं कोई उतारा था।

"तुम आगे-आगे तैरो," ख़ुरशीद-बेग ने कहा, "मैं तुम्हारे पीछे-पीछे आता हूं।"

आशिक़ ने कपड़े उतारे और तैर चला। पार जाकर उसने पीछे नज़र डाली – "ओह, मुसीबत! हाय, अल्लाह!" ख़ुरशीद-बेग उसके कपड़े लेकर अपने घोड़े को सरपट तिफ़लिस वापस दौड़ाये लिये जा रहा था। हमवार मैदान में सिर्फ़ धूल ही सांप की तरह टेढ़े-मेढ़े बल खा रही थी।

तिफ़लिस पहुंचकर ख़ुरशीद-बेग आशिक़-ग़रीब के कपड़े लिये हुए उसकी बूढ़ी मां के पास गया।

"तुम्हारा बेटा गहरे दरिया में डूब गया है," उसने कहा, "यह देखो, ये रहे उसके कपड़े।"

दुख से बुरी तरह निढाल मां बेटे के कपड़ों पर गिर पड़ी और उन्हें अपने दहकते आंसुओं से तर करने लगी। कुछ देर बाद इन कपड़ों को लेकर वह बेटे की मंगेतर मगुल-मेगेरी के पास गयी।

"मेरा बेटा डूब गया," उसने मगुल-मेगेरी से कहा। "ख़ुरशीद-बेग उसके ये कपड़े लाया है। तुम अब किसी से भी शादी कर सकती हो।"

मगुल-मेगेरी मुस्करायी और बोली:

"तुम इस बात पर यक़ीन नहीं करो। यह सब ख़ुरशीद-बेग की तिकड़मबाज़ी है। सात साल पूरे होने के पहले मैं किसी की भी बीवी नहीं बनूंगी।"

उसने दीवार से साज़ उतारा और शान्त मन से आशिक़-ग़रीब का मनपसन्द गीत गाने लगी।

इसी बीच हमारा मुसाफ़िर नंगे पांव और नंगे बदन एक गांव में पहुंचा। भले लोगों ने उसे कपड़े दिये, खाना खिलाया और बदले में आशिक़-ग़रीब ने उन्हें अनूठे गाने सुनाये। इसी तरह गाता हुआ वह गांव-गांव और शहर-शहर घूमता और चारों

तरफ़ उसकी शोहरत फैल गयी। आख़िर वह ख़ालाफ़ में पहुंचा। घूमता-घामता एक भटियारख़ाने में जा निकला और साज़ मांगकर गाने लगा। ख़ालाफ़ में उस वक़्त बढ़िया गानेवालों का दीवाना पाशा रहता था। अनेक गवैये उसके पास लाये गये, लेकिन उसे एक भी नहीं जंचा। उसके हरकारे, नौकर-चाकर शहर भर में दौड़ते-भागते तंग आ चुके थे। अचानक भटियारख़ाने के क़रीब से गुज़रते हुए उन्हें बहुत ही सुरीली आवाज़ सुनायी दी। वे वहां जा घुसे।

"चलो, हमारे मालिक, हमारे पाशा के पास," वे चिल्लाये, "वरना हम तुम्हारा सिर क़लम कर देंगे।"

"मैं हूं आज़ाद आदमी, तिफ़लिस से आनेवाला मुसाफ़िर," आशिक़-ग़रीब ने जवाब दिया, "चाहूंगा तो जाऊंगा, नहीं चाहूंगा, तो नहीं जाऊंगा। जब दिल चाहता है, तभी गाता हूं और तुम्हारा पाशा मेरा कोई अफ़सर नहीं है।"

लेकिन इसके बावजूद वे उसे पकड़कर पाशा के पास ले गये।

"गाओ," पाशा ने कहा।

और वह गाने लगा। अपने इस गाने में उसने अपनी प्यारी मगुल-मेगेरी की तारीफ़ की। घमण्डी पाशा को यह गाना इतना ज़्यादा पसन्द आया कि उसने कंगाल आशिक़ को अपने यहां ही रख लिया। अब क्या था, उस पर चांदी-सोना बरसने लगा, उसके बदन पर बढ़िया पोशाकें चमचमाने लगीं। आशिक़-ग़रीब हंसी-ख़ुशी की मज़ेदार ज़िन्दगी बिताने लगा और बहुत ही अमीर हो गया। अपनी मगुल-मेगेरी को वह भूल गया या नहीं, कह नहीं सकता, लेकिन वक़्त गुज़रता गया। आख़िरी, यानी सातवां साल जल्द ही ख़त्म होनेवाला था और वह वापिस जाने की तैयारी भी नहीं कर रहा था।

बड़ी ख़ूबसूरत मगुल-मेगेरी हताश होने लगी। इसी वक़्त एक सौदागर चालीस ऊंटों का कारवां और अस्सी ग़ुलाम साथ लेकर तिफ़लिस से रवाना होनेवाला था। मगुल-मेगेरी ने सौदागर को अपने पास बुलवाया और उसे सोने की तश्तरी देते हुए बोली:

"यह तश्तरी तुम अपने साथ ले जाओ। जिस भी शहर में पहुंचो, वहां अपने माल के साथ इसे भी दिखाते हुए यह ऐलान करते रहना कि जो कोई भी अपने को इस तश्तरी का मालिक बतायेगा और साबित भी कर देगा, उसे यह तश्तरी और इसके तोल के बराबर सोना भी मिलेगा।"

सौदागर रवाना हो गया, हर जगह वह मगुल-मेगेरी के सन्देश का ऐलान करता, मगर किसी ने भी अपने को सोने की तश्तरी का मालिक नहीं बताया। उसने लगभग सारा माल बेच दिया और बचा-बचाया माल लेकर ख़ालाफ़ पहुंचा। उसने सभी जगह पर मगुल-मेगेरी के सन्देश की घोषणा करवाई। आशिक़-ग़रीब यह ऐलान सुनते ही भागता हुआ उस कारवां सराय में पहुंचा। उसने तिफ़लिस के सौदागर की दुकान पर सोने की उस तश्तरी को देखा। "यह मेरी है!" उसने उसे झपटते हुए कहा।

"बिल्कुल तुम्हारी है," सौदागर ने जवाब दिया। "मैंने तुम्हें पहचान लिया है, आशिक़-ग़रीब। जल्दी से तिफ़लिस जाओ, तुम्हारी मगुल-मेगेरी ने तुम्हें यह बता देने को कहा है कि तुम्हारे लौटने की मियाद पूरी हो रही है और अगर तुम तय किये हुए दिन तक नहीं पहुंचोगे तो वह दूसरे से शादी कर लेगी।"

आशिक़-ग़रीब ने बुरी तरह परेशान होते हुए सिर थाम लिया। सिर्फ़ तीन दिन बाक़ी रह गये थे उस भयानक पल के। फिर भी वह घोड़े पर सवार हुआ, सोने के सिक्कों की थैली उसने अपने साथ ली और घोड़े पर ज़रा भी रहम न करते हुए उसे सरपट दौड़ाने लगा। आख़िर बुरी तरह थके-हारे घोड़े ने अर्ज़ीन्यान और अर्ज़ेरूम शहरों के बीच अर्ज़ींगान पहाड़ पर दम तोड़ दिया। अब वह करता तो क्या – अर्ज़ीन्यान से तिफ़लिस तक सवारी से दो महीने का रास्ता था और उसके पास सिर्फ़ दो दिन बाक़ी थे।

"हे अल्लाह, हे दीन-दुनिया के मालिक!" वह कह उठा। "अगर तुम मेरी मदद नहीं करोगे, तो मेरे लिये इस दुनिया में जीने का कोई मतलब नहीं!" और उसने एक ऊंची चट्टान से गिरकर जान देनी चाही। अचानक उसे सफ़ेद घोड़े पर सवार एक आदमी नीचे दिखाई दिया और उसकी गूंजती आवाज़ सुनाई दी:

"ऐ नौजवान, तुम वहां क्या कर रहे हो?"

"मैं मरना चाहता हूं," आशिक़-ग़रीब ने जवाब दिया।

"नीचे उतर आओ। अगर मरना ही चाहते हो, तो मैं तुम्हारा काम तमाम कर दूंगा।" आशिक़-ग़रीब किसी तरह चट्टान से नीचे उतरा।

"मेरे पीछे-पीछे आते जाओ," घुड़सवार ने उसे धमकाते हुए कहा।

"तुम्हारे पीछे-पीछे मैं कैसे आ सकता हूं," आशिक़ ने जवाब दिया, "तुम्हारा घोड़ा तो हवा की तरह उड़ता है और थैली का बोझ मेरे लिये चलना मुश्किल कर देता है।"

"यह सही है। तुम थैली को मेरे ज़ीन के साथ लटका दो और घोड़े के पीछे-पीछे आते जाओ।"

आशिक़-ग़रीब तेज़ दौड़ने की बहुत कोशिश करने पर भी पीछे रह जाता।

"तुम पीछे क्यों रह जाते हो?" घुड़सवार ने पूछा।

"मैं कैसे साथ रह सकता हूं, तुम्हारा घोड़ा तो ख़्याल से भी ज़्यादा तेज़ दौड़ता है और मैं बुरी तरह थक चुका हूं।"

"यह भी सही है। मेरे पीछे घोड़े पर सवार हो जाओ और मुझे सब कुछ सच-सच बताओ – तुम्हें कहां जाना है?"

"काश, आज तो अर्ज़ेरूम ही पहुंच जाऊं," आशिक़ ने जवाब दिया।

"आंखें बन्द करो।" (उसने आंखें बन्द कर लीं।) "अब खोल लो।"

आशिक़ ने आंखें खोलीं तो क्या देखा – उसके सामने अर्ज़ेरूम की सफ़ेद दीवारें हैं और ऊंची-ऊंची मीनारें चमक रही हैं।



"माफ़ी चाहता हूं, बड़े मियां," आशिक़ ने कहा, "मुझसे ग़लती हो गयी, मैं यह कहना चाहता था कि मुझे कार्स जाना है।"

"यही तो बात है," घुड़सवार ने जवाब दिया। "मैंने तुम्हें आगाह किया था कि तुम मुझसे सब कुछ सच-सच कहना। फिर से आंखें मूंदो। अब खोलो।"

आशिक़-ग़रीब को यक़ीन नहीं हो रहा था कि उसके सामने कार्स ही था। वह घुड़सवार के पैरों पर गिर पड़ा और बोला:

"माफ़ी चाहता हूं, बड़े मियां, बहुत-बहुत माफ़ी चाहता हूं, मैं तुम्हारा ग़ुलाम आशिक़-ग़रीब। लेकिन तुम तो जानते ही हो कि अगर आदमी सुबह से झूठ बोलने का फ़ैसला कर लेता है, तो शाम तक उसे झूठ ही बोलना चाहिये – असल में तो मुझे तिफ़लिस जाना है।"

"अरे, कैसे झूठे हो तुम!" घुड़सवार ने झल्लाकर कहा। "लेकिन अब हो ही क्या सकता है, माफ़ करता हूं तुम्हें। आंखें मूंद लो। अब खोलो," घुड़सवार ने एक मिनट के बाद कहा।

आशिक़-ग़रीब तो ख़ुशी से चिल्ला उठा – वे तिफ़लिस के फाटक के सामने खड़े थे। सच्चे दिल से शुक्रिया अदा करने और ज़ीन से अपनी थैली उतार लेने के बाद आशिक़-ग़रीब ने घुड़सवार से कहा:

"दादा, सचमुच बहुत बड़ी मेहरबानी की है तुमने मुझ पर, लेकिन थोड़ी मेहरबानी और कर दो। बात यह है कि अगर मैं किसी से यह कहूंगा कि एक दिन में ही अर्ज़ीन्यान से तिफ़लिस पहुंच गया हूं तो कोई भी इस पर यक़ीन नहीं करेगा। कुछ ऐसा करो कि मैं इसका सबूत पेश कर सकूं।"

"झुककर मेरे घोड़े के सुम के नीचे से मिट्टी का गोला ले लो और उसे अपनी जेब में रख लो," घुड़सवार ने मुस्कराकर कहा। "अगर वे तुम्हारे लफ़्ज़ों की सचाई पर यक़ीन न करें, तो उनसे कहना कि वे सात साल से अंधी किसी औरत को तुम्हारे सामने लायें। तुम उसकी आंखों पर इस मिट्टी का लेप कर देना और उसकी आंखों की रोशनी वापिस आ जायेगी।"

आशिक़ ने सफ़ेद घोड़े के सुम के नीचे से कुछ मिट्टी ले ली। लेकिन जैसे ही उसने सिर ऊपर उठाया, घुड़सवार और घोड़े को ग़ायब पाया। तब उसे दिल में यक़ीन हो गया कि उस पर इतनी मेहरबानी करनेवाला ख़ुदा का भेजा हुआ कोई फ़रिश्ता ही था।

काफ़ी देर गये रात को वह अपना घर ढूंढ़ पाया। उसने कांपते हाथों से और यह कहते हुए दरवाज़े पर दस्तक दी:

"अम्मां, अम्मां, दरवाज़ा खोलो – मैं अल्लाह का भेजा हुआ मेहमान हूं, ठण्ड से ठिठरा हुआ और भूख से बेहाल। सफ़र पर गये हुए अपने बेटे के नाम पर मुझे भीतर आ जाने दो।"

बुढ़िया की धीमी-सी आवाज़ सुनाई दी:

"राहगीरों के रैन-बसेरे के लिये अमीरों और बड़े लोगों के घर हैं। इसके अलावा शहर में शादियां भी हो रही हैं – वहां जाओ! वहां तुम ख़ूब मज़े से रात बिता सकोगे।"

"अम्मां," उसने जवाब दिया, "यहां मेरी जान-पहचान का कोई नहीं है और इसलिये फिर से इल्तिजा करता हूं कि सफ़र पर गये हुए अपने बेटे के नाम पर मुझे भीतर आ जाने दो।" तब आशिक़ की बहन ने अपनी मां से कहा:

"अम्मां, मैं उठकर दरवाज़ा खोल देती हूं।"

"अरी निगोड़ी!" उसकी मां ने जवाब दिया। "भला तुम क्यों अपने घर में जवान लोगों को घुसेड़कर उनकी ख़ातिर करना पसन्द न करोगी! इधर मैं तो आंसू बहा-बहाकर सात साल से अंधी जो हुई बैठी हूं।"

लेकिन मां के ताने-बोली की परवाह न करते हुए बेटी उठी और उसने दरवाज़ा खोलकर आशिक़-गरीब को भीतर आ जाने दिया। सलाम-दुआ के बाद वह बैठ गया और दिल में भारी बेचैनी महसूस करते हुए इधर-उधर नज़र दौड़ाने लगा। उसने देखा कि बड़ी मधुर आवाज़वाला उसका साज़, जिसके गिलाफ़ पर धूल जमी थी, दीवार पर लटका हुआ है। वह मां से पूछने लगा:

"तुम्हारे यहां दीवार पर यह क्या लटका हुआ है?"

"बड़ी कुरेद रखनेवाले हो तुम मेहमान," मां ने कहा, "इतना ही बहुत है कि तुम्हें पेट भरने के लिये रोटी दे दी जायेगी और कल सुबह तुम अपनी राह चल दोगे।"

"मैं तो तुम से कह चुका हूं कि तुम मेरी सगी मां हो," उसने बात काटी, "और यह मेरी सगी बहन है। इसलिये यह बताने की दरख़्वास्त करता हूं कि दीवार पर यह क्या लटका हुआ है?"

"यह साज़ है," बुढ़िया ने उस पर एतबार न करते हुए खीझकर जवाब दिया।

"क्या होता है यह साज़?"

"साज़ वह होता है जिसे बजाया और जिसके साथ गाया जाता है।"

आशिक़-ग़रीब ने अनुरोध किया कि वह उसकी बहन को दीवार से साज़ उतारने और उसे दिखाने की इजाज़त दे दे।

"नहीं, ऐसा नहीं हो सकता," बुढ़िया ने जवाब दिया। "यह क़िस्मत के मारे मेरे बेटे का साज़ है। सात सालों से वह दीवार पर लटका हुआ है और कभी किसी ने इसे छुआ नहीं है।"

लेकिन उसकी बहन उठी, उसने दीवार से साज़ उतारकर उसे दे दिया। तब उसने आसमान की तरफ़ नज़रें उठाकर यह दुआ की:

"हे अल्लाह, हे दीन-दुनिया के मालिक! अगर मुझे मेरे दिली मक़सद में कामयाबी हासिल होनी है, तो सात तारोंवाला मेरा यह साज़ उसी तरह से सुर में हो

जैसे उस दिन था, जब मैंने इसे आखिरी बार बजाया था!" इतना कहकर उसने तांबे के तारों को छेड़ा, वे सुर में बज उठे और वह गाने लगा: "मैं हूं ग़रीब और मेरे लफ़्ज़ भी मामूली हैं। लेकिन ख़ुदा के भेजे फ़रिश्ते ने मुझे खड़ी चट्टान से नीचे उतरने में मदद दी। बेशक मैं ग़रीब हूं और मेरे लफ़्ज़ भी मामूली हैं, फिर भी पहचान लो मुझे अम्मां, अपने मुसाफ़िर बेटे को।"

यह गाना सुनकर उसकी मां सिसकने लगी और उसने उससे पूछा:

"क्या नाम है तुम्हारा?"

"रशीद," उसने जवाब दिया।

"अपनी कह चुके, अब मेरी सुनो," उसने कहा। "अपनी बातों से तुमने मेरा कलेजा टुकड़े-टुकड़े कर दिया है। पिछली रात मैंने ख़्वाब में देखा कि मेरे बाल सफ़ेद हो गये हैं और सात साल हो चुके हैं मुझे आंसू बहाकर अंधी हुए। मेरे बेटे जैसी आवाज़ रखनेवाले, मुझे यह बताओ कि मेरा बेटा कब आयेगा?"

मां ने आंखों में आंसू भर-भरकर दो बार उससे यही अनुरोध किया। व्यर्थ ही उसने यह कहा कि वह उसका बेटा है, लेकिन बूढ़ी मां ने यक़ीन नहीं किया। कुछ देर बाद आशिक़-ग़रीब ने मां से यह अनुरोध किया:

"अम्मां, मुझे यह साज़ लेकर जाने की इजाज़त दे दो। मैंने सुना है कि यहां नज़दीक ही कोई शादी हो रही है। बहन मुझे वहां पहुंचा देगी। मैं वहां साज़ बजाऊंगा और गाऊंगा। इसके बदले में मुझे जो कुछ मिलेगा मैं यहां ले आऊंगा और तुम दोनों के साथ बांट लूंगा।"

"नहीं, मैं इसकी इजाज़त नहीं दूंगी," बुढ़िया ने उत्तर दिया, "जब से मेरा बेटा यहां नहीं है, उसका साज़ घर से बाहर नहीं गया।"

तब आशिक़-ग़रीब क़समें खा-खाकर उसे यक़ीन दिलाने लगा कि वह साज़ का एक भी तार नहीं टूटने देगा।

"अगर एक भी तार टूट जाये," उसने कहा, "तो मेरे पास जो कुछ है, वह सब मैं तुम्हें दे दूंगा।"

बुढ़िया ने उसकी थैली को छूकर देखा और यह यक़ीन हो जाने पर कि वह सिक्कों से भरी है, उसने साज़ ले जाने की इजाज़त दे दी। उसे रईस के घर तक पहुंचाकर, जहां शादी की दावत का धूम-धड़ाका था, उसकी बहन यह सुनने के लिये कि आगे क्या होता है, दरवाज़े के पास खड़ी हो गयी।

इस घर में मगुल-मेगेरी रहती थी और इस रात वह ख़ुरशीद-बेग की बीवी बननेवाली थी। ख़ुरशीद-बेग अपने रिश्तेदारों और दोस्तों के साथ दावत के मज़े ले रहा था और मगुल-मेगेरी अपनी सहेलियों के साथ बढ़िया पर्दे के पीछे बैठी हुई थी। उसके एक हाथ में ज़हर से भरा प्याला था और दूसरे में तेज़ ख़ंजर। इससे पहले कि ख़ुरशीद-बेग के

पलंग पर उसका सिर टिके उसने मर जाने की क़सम खाई थी। पर्दे के पीछे से उसे सुनाई दिया कि कोई अजनबी आया है जो यह कह रहा है :

"सलाम-अलैकम! आप लोग तो यहां जशन मना रहे हैं और दावत उड़ा रहे हैं। मेहरबानी करके मुझ ग़रीब मुसाफ़िर को भी अपने साथ बैठने की इजाज़त दें और इसके बदले में मैं आपको गाना सुना दूंगा।"

"इसमें एतराज़ ही क्या हो सकता है," ख़ुरशीद-बेग ने कहा। "गाने-बजाने और नाचनेवालों को तो यहां आने की छूट होनी ही चाहिए, क्योंकि यहां शादी है। तो कुछ गाओ, मैं इनाम में तुम्हें मुट्ठी भरकर सोना दूंगा।"

इतना कहकर ख़ुरशीद-बेग ने उससे पूछा :

"क्या नाम है तुम्हारा, मुसाफ़िर?"

"शिंदी-गेरूरसेज़" (जल्द ही मालूम हो जायेगा)।

"यह क्या नाम हुआ?" वह हंसकर बोला। "पहली बार सुन रहा हूं ऐसा नाम।"

"बात यह है कि मेरी मां जब मुझे जन्म देनेवाली थी और दर्द से तड़प रही थी, तो बहुत-से पड़ोसी दरवाज़े के पास आकर यह पूछते थे कि अल्लाह ने बेटा दिया है या बेटी। तब उन्हें जवाब दिया जाता था – शिंदी गेरूरसेज़ (जल्द ही मालूम हो जायेगा), इसीलिये जब मैं पैदा हुआ, तो मुझे यही नाम दे दिया गया।" इसके बाद वह साज़ लेकर गाने लगा – "ख़ालाफ़ शहर में मैंने मिस्र की शराब पी, लेकिन ख़ुदा ने मुझे पंख दिये और मैं उड़कर एक ही दिन में यहां आ गया।"

ख़ुरशीद-बेग का भाई मोटी अक़्ल का आदमी था, उसने झटपट ख़ंजर निकाला और चिल्लाया :

"झूठ बोलते हो तुम! कैसे कोई एक ही दिन में ख़ालाफ़ से यहां पहुंच सकता है?"

"किसलिये तुम मेरी जान लेना चाहते हो?" आशिक़ ने पूछा। "गानेवाले तो दुनिया के सभी कोनों से एक जगह पर इकट्ठे होते हैं। आप लोगों से मैं तो कुछ ले नहीं रहा हूं, मेरी बात का यक़ीन करें या न करें, मर्ज़ी आपकी।"

"गाने दो इसे," दूल्हे ने कहा। और आशिक़-ग़रीब फिर से गाने लगा :

"सुबह की नमाज़ मैंने अर्ज़ीन्यान की घाटी में अदा की, दोपहर की अर्ज़ेरूम शहर में, तीसरे पहर की कार्स में और शाम की तिफ़लिस में। अल्लाह ने मुझे पंख दिये और मैं उड़कर यहां पहुंच गया। अगर मैं झूठ बोलूं तो ख़ुदा करे कि सफ़ेद घोड़ा मेरी जान ले ले, वह रस्से पर नाचनेवाले बाज़ीगर की तरह तेज़ी से दौड़ा जाता था पहाड़ से खड्ड में, खड्ड से पहाड़ पर। ख़ुदा के फ़रिश्ते ने आशिक़ को पंख दिये और वह उड़ आया मगुल-मेगेरी की शादी में।"

मगुल-मेगेरी ने अब उसकी आवाज़ पहचानकर ज़हर का प्याला एक तरफ़ फेंका और ख़ंजर दूसरी तरफ़।

"तो तुमने जो क़सम खाई थी, तुम उसे ऐसे ही पूरा कर रही हो?" उसकी सहेलियों ने कहा। "मतलब यह कि आज तुम ख़ुरशीद-बेग की बीवी बन जाओगी?"

"तुम नहीं पहचान सकीं, लेकिन मैंने यह आवाज़ पहचान ली, जो मुझे बेहद प्यारी है," मगुल-मेगेरी ने जवाब दिया और कैंची लेकर पर्दा काट डाला। जब उसने आशिक़-ग़रीब को अच्छी तरह से पहचान लिया कि वही है तो चीख़ मारकर उसके गले से जा लिपटी और दोनों बेहोश होकर गिर पड़े।

ख़ुरशीद-बेग का भाई इन दोनों को मार डालने के इरादे से ख़ंजर लेकर उन पर झपटा, लेकिन ख़ुरशीद-बेग ने यह कहते हुए उसे रोका:

"सब्र से काम लो और इस बात को समझो – इन्सान की तक़दीर में जो कुछ लिख दिया गया है वह होकर रहता है।"

होश आने पर मगुल-मेगेरी शर्म से लाल हो गयी, उसने हाथ से मुंह ढांप लिया और पर्दे के पीछे जा छिपी।

"अब तो बिल्कुल साफ़ है कि तुम आशिक़-ग़रीब हो," दूल्हे ने कहा, "लेकिन यह बताओ कि इतने थोड़े वक़्त में तुमने इतना लम्बा फ़ासला कैसे तय किया?"

"सचाई का सबूत पेश करने के लिये मेरी तलवार पत्थर को भी काट डालेगी," आशिक़ ने कहा, "और अगर मैं झूठ बोल रहा हूं तो मेरी गर्दन ऐसे कटकर गिर जाये जैसे बाल। लेकिन ज़्यादा अच्छा तो यही होगा कि तुम लोग किसी ऐसी अन्धी औरत को मेरे पास लाओ जिसे सात साल से कुछ भी नज़र न आता हो और मैं उसकी आंखों की रोशनी लौटा दूंगा।"

दरवाज़े के पास खड़ी आशिक़-ग़रीब की बहन ने ये शब्द सुने और भागती हुई अपनी मां के पास पहुंची।

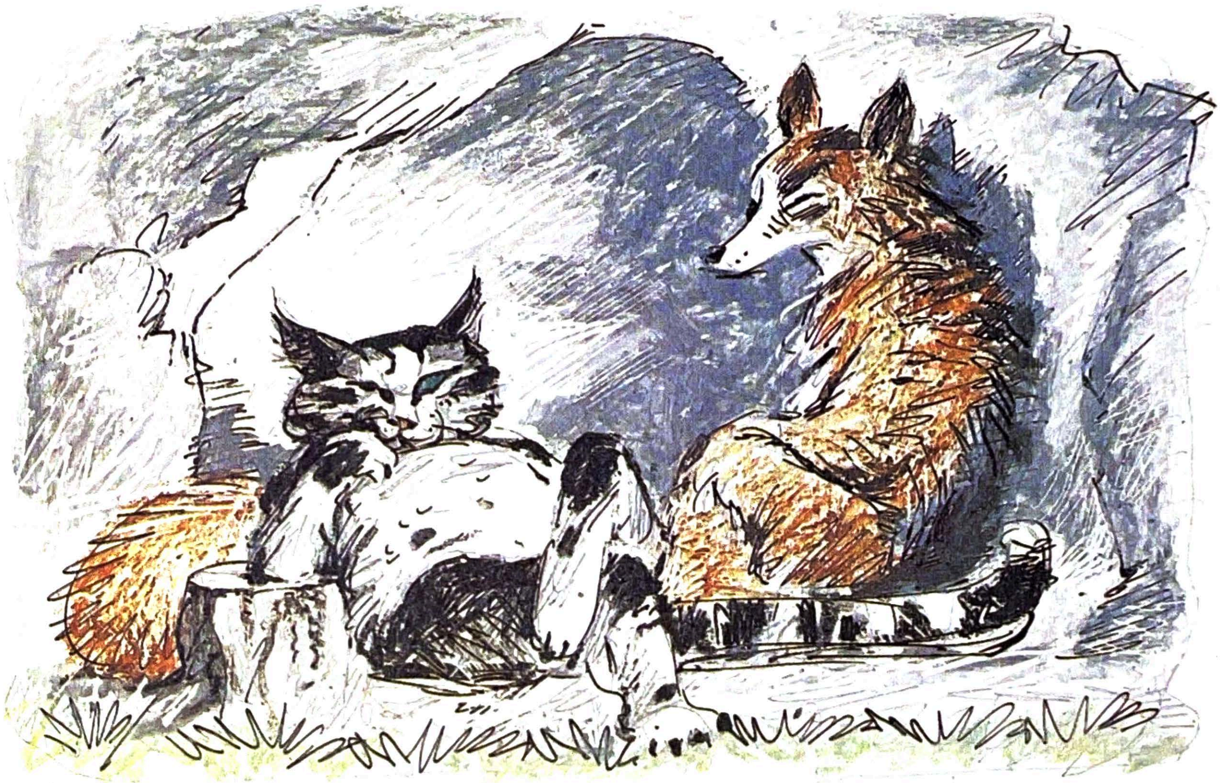
"अम्मां!" उसने चिल्लाकर कहा। "वह तो सचमुच मेरा भाई और तुम्हारा बेटा आशिक़-ग़रीब है!" और मां का हाथ थामकर वह उसे शादी की दावत में ले आई।

तब आशिक़ ने अपनी जेब से मिट्टी का ढेला निकाला, उसे पानी में घोला और मां की आंखों पर लेप कर दिया। ऐसा करते वक़्त वह यह भी कहता गया:

"लोगो, याद रखो, बड़े करिश्मे कर सकता है अल्लाह!"

और उसकी मां की आंखों की रोशनी लौट आई। इसके बाद तो किसी को भी उसकी बात की सचाई के बारे में शक नहीं रहा और ख़ुरशीद-बेग ने ख़ूबसूरत मगुल-मेगेरी को चुपचाप उसके हवाले कर दिया। तब आशिक़-ग़रीब ने ख़ुशी के रंग में कहा:

"सुनो, ख़ुरशीद-बेग, मैं तुम्हें भी ख़ुश देखना चाहता हूं – मेरी बहन भी तुम्हारी पहले की मंगेतर से कुछ कम नहीं है, मैं काफ़ी अमीर हूं – उसके पास भी कुछ कम सोना-चांदी नहीं होगा। तो तुम उससे शादी कर लो और तुम्हारी ज़िंदगी भी वैसे ही सुखी हो जैसे प्यारी मगुल-मेगेरी के साथ मेरी।"



व्लादीमिर डाल

बिल्ला और लोमड़ी

किसी किसान के यहां एक बिल्ला था जो जवानी के दिनों में चूहों का शिकार करता था, मगर कुछ बुढ़ा जाने पर काहिल हो गया; या फिर उसकी कमर में दर्द रहने लगा। नतीजा यह हुआ कि वह घर-गिरस्ती के लिये किसी काम-काज का नहीं रहा। इसलिये मालिकों ने उसे खिलाना-पिलाना बन्द कर दिया। चुनांचे वह खुद ही अपना पेट भरने लगा, सो भी पहले की तरह चूहों से नहीं, बल्कि दूध, क्रीम, मक्खन और छेने से जो शायद उसे कहीं ज़्यादा मज़ेदार लगते थे। तो एक दिन घर की मालकिन अपने मियां पर बरस पड़ी – कुछ देखते-भालते भी हो या नहीं, किसलिये घर

में ऐसा बिल्ला रखा हुआ है जो बिल्कुल बिगड़ गया है। सारे साल में किसी चूहे की पूंछ तक भी नहीं चबाई और हर दिन कोई न कोई मुसीबत पैदा करता रहता है।

"पहली बात तो यह है," उसने कहा, "मैंने सुना है कि हम पर चूहे भी हंसते हैं। दूसरे यह कि इस बिल्ले की वजह से हमारा अपना जीना हराम हो गया है – किस-किस चीज़ का ध्यान रखा जाये!"

"तो तुम मुझ पर किसलिये बरस रही हो? जैसे भी चाहो, उससे निपट लो। वह कौन-सा मेरा बेटा है?"

बीवी ने जवाब दिया कि यह औरतों का काम नहीं है, जब वह लकड़ी लाने के लिये जंगल में जाये तो उसे बोरी में डालकर अपने साथ ले जाये और वहां छोड़ दे। तो हमारे इस किसान ने ऐसा ही किया – वह लकड़ी लाने के लिये जंगल में गया, बिल्ले को बोरी में डालकर अपने साथ ले गया, सूखी टहनियां जमा कीं और काम ख़त्म हो जाने पर बोरी का मुंह खोलकर बेचारे बिल्ले को गढ़े में छोड़ा और ख़ुद घोड़ा-गाड़ी में वापिस चल दिया। "अगर मैं कुत्ता होता," बिल्ले ने सोचा, "जो बेशक मेरा दुश्मन है, तो मैं अब घोड़ा-गाड़ी के पीछे-पीछे भागने लगता। लेकिन मेरा स्वभाव तो उसकी इजाज़त नहीं देता। लगता है कि मुझे तो यहीं रहकर मरना होगा!"

"नमस्ते, बिल्लेराम!" लोमड़ी धूर्त्तरानी ने मेहमान को देखकर कहा।

"नमस्ते, नमस्ते," बिल्ले ने मुंह फेरते हुए कहा, क्योंकि किसान से बहुत नाराज़ था।

"कैसे और किसलिये तुम्हारा यहां आना हुआ?"

बिल्लेराम ने अपनी सारी दास्तान कह सुनायी।

"कभी ऐसा भी ज़माना था कि खाओ, और मज़े से सो जाओ," उसने कहा, "और ख़ूब मोटे-चिकने नज़र आओ। लेकिन अब बूढ़ा हो जाने पर किसी काम का नहीं रहा और बुरी आदतों के लिये मुझे यहां निकाल दिया गया है। तो अब ऐसे मरना होगा।"

"ज़रा रुको तो," लोमड़ी सोचने लगी, "क्या इस मौक़े से कोई फ़ायदा नहीं उठाया जा सकता? बिल्लेराम ऐसा जानवर है जिसे यहां जंगल में न तो किसी ने देखा है और न कोई जानता ही है – दूसरे जानवरों को इससे डराया जा सकता है।"

"सुनो मेरे दोस्त, बिल्लेराम," लोमड़ी ने कहा, "मुझे तुम्हारे लिये अफ़सोस हो रहा है, मैं तुम्हारी मदद करूंगी। चलो, मेरे यहां चलकर रहो – कुछ ज़्यादा तो हमारे पास है नहीं, छोटे-से लोग हैं हम, जो कुछ रूखा-सूखा भगवान ने दिया है, वह हाज़िर है।"

"ऐसे अच्छे शब्दों के लिये धन्यवाद," बिल्लेराम ने जवाब दिया। "चलो।"

अपनी मांद को और गहरा और चौड़ा करके, ताकि वह अधिक भयानक प्रतीत

हो, लोमड़ी बिल्ले को वहां ले आयी, उससे लेटकर आराम करने को कहा और ख़ुद जानवरों की पंचायत बुलाने के लिये भाग गयी।

छोटे-बड़े सभी जानवर जमा हो गये और बहुत ध्यान से लोमड़ी की बात सुनने लगे। सभी का अभिवादन और सभी के लिये शुभकामनायें करने के बाद वह बोली:

"मित्रो, काश आपने सुना होता कि हमारे इस इलाक़े में क्या ग़ज़ब हो रहा है? हमारे यहां एक नया कारिन्दा भेजा गया है। ऐसा भयानक है जैसा कि हमने पहले कभी नहीं देखा – बहुत बुरा वक़्त आ रहा है अब! उसका नाम है बिल्लेराम, थूथन पर मूंछें हैं, जीभ सूई जैसी, आंखें – आग की तरह चमकती हुईं, नाख़ून हेंगे जैसे, पूंछ सांप जैसी, समूर नर्म, मगर दिमाग़ बेहद गर्म! सोता है, तो इन्सानों की तरह खर्राटे लेता है, लेकिन जब जागता होता है, तो खाने को चाहे कितना ही दे दो यही रट लगाये रहता है – और खाऊं, और खाऊं, और खाऊं। तो सुनो अब आगे – उसने मुझे तो मेरे घर से निकाल बाहर किया है! मेरी मामूली-सी मांद उसे पसन्द आ गयी है। क्या हो सकता है, भगवान भला करे उसका, मैं इसके लिये अफ़सोस न करती – मेरा दिल दुखाया है उसने, तो मैं क्या उससे झगड़ा मोल लूंगी। मैं तो अपने बाल-बच्चे लेकर किसी ठूंठ, किसी तने के नीचे जाकर रहने लगती, लेकिन जाने भी तो नहीं देता, कहता है कि मुझे खिलाओ-पिलाओ। यह मुझ अकेली के बस की बात नहीं। मैं ख़ुद भी और मेरे मामूली-से नौकर-चाकर सभी भूखे बैठे हैं और कारिन्दा अकेला ही वह सब कुछ चट कर गया जो मैंने शिकार करके हासिल किया था, बचाकर रखा था। उसी ने मुझे सब को पंचायत करने का हुक्म दिया है, सभी को उसके बारे में बताने, उसे याद रखने तथा नये कारिन्दे, बिल्लेराम से डरने को कहा है। यह आदेश दिया है कि सभी अपना-अपना हिस्सा लायें ताकि उसका पेट भरने के लिये हर दिन काफ़ी ख़ुराक हो। तो दोस्तो, मैं अब और ज़्यादा कुछ नहीं कहूंगी, आप ख़ुद ही जानते हैं कि क्या करना चाहिये – मुझसे ज़्यादा समझदार हैं। बड़ा ग़ुस्सैल, बहुत ही ग़ुस्सैल है हमारा नया कारिन्दा!"

सभा में शोर मच गया, ऐसे हलचल हो गयी जैसे सागर में लहरें। "आगे और भी ज़्यादा मुसीबत होगी," अपने को खुजलाते हुए भालू बड़बड़ाया। लेकिन पंचायत ने जिसके ज़िम्मे जो लगाया, किसी ने भी उससे इन्कार नहीं किया और हर कोई यह याद करके सभा से गया कि उसे कब और कौन-सी चीज़ लोमड़ी के यहां पहुंचानी है। पहली बार के लिये यह तय किया गया कि अगले दिन सभी बिल्लेराम को प्रणाम करने जायें और हर कोई अपने साथ कुछ लेकर आये।

तो अगले दिन सभी वहां पहुंचे डरते-डरते। हर किसी ने अपनी चीज़ वहां रख दी – भेड़िया एक-चौथाई भेड़ लाया, भालू ने बियर-शहद का शरबत बनाया, गन्धमार्जार बत्तख़ को साफ़ करके ले आया और उसकी मादा कुछ अण्डे – मतलब यह कि जिसके

लिये जो कुछ सम्भव था, वह वही ले आया। सभी घेरा बनाकर खड़े थे, इन्तज़ार कर रहे थे, जाने की हिम्मत नहीं कर पा रहे थे। लोमड़ी ने मांद से थूथन बाहर निकाली और फुसफुसाकर सभी का अभिवादन किया।

"हमारा कारिन्दा अभी सो रहा है," उसने कहा, "उसे जगाने की हिम्मत मैं नहीं कर सकती, बहुत ही क्रोधी है वह। भले लोगो, उदास नहीं होओ, थोड़ा इन्तज़ार करो..."

"सुनो सहेली..." भालू ने कहना शुरू किया।

लेकिन लोमड़ी ने फिर से सिर बाहर निकाला और बोली:

"भालू जी, माफ़ी चाहती हूं, मगर मैं अब सहेली-वहेली नहीं रही, कारिन्दे की बीवी हो गयी हूं। बिल्लेराम को तो अविवाहित ही यहां संचालन करने के लिये भेजा गया था और, जैसा कि आप सभी जानते हैं, मैं भी एकाकी विधवा थी और किसी तरह अपनी गुज़र-बसर करती थी। तो कारिन्दा साहब ने मुझ पर मेहर की नज़र की, मेरी ख़िदमत को ध्यान में रखते हुए मुझे अपनी बीवी बना लिया। अगर तकलीफ़ न हो, तो अब आप मुझे श्रीमती धूर्त्तरानी बिल्लेराम कहकर बुलाया करें।"

सभी जानवरों ने एक-दूसरे की तरफ़ देखा, कंधे झटके और ख़ामोश हो गये। भालू ने तो सिर झुका लिया, अपने पंजे को इधर-उधर हिलाने-डुलाने तथा नाख़ूनों को देखने लगा।

कुछ देर बाद लोमड़ी मांद से बाहर आई और बुज़ुर्गों को कारिन्दा साहब के पास जाने, बहुत झुककर उसका स्वागत करने, भोजन का न्योता देने के लिये बुलाने लगी।

सभी जानवर डर रहे थे, कोई भी तो अपनी जगह से हिलने को तैयार नहीं था, एक-दूसरे की तरफ़ देखते और यह कहते थे:

"तुम पहले जाओ, तुम पहले!"

आख़िर उन्होंने यह तय किया कि जंगली सूअर को, जो सबसे ज़्यादा और इतना बूढ़ा था कि न मुंह में दांत, न पेट में आंत, उसके पास भेजा जाये। लेकिन वह जैसे ही मांद के पास आया और उसने, बेशक बहुत ही आदरपूर्वक ख़्रू-ख़्रू की आवाज़ निकाली, वैसे ही कारिन्दा साहब की बीवी उस पर चिल्ला उठी और यह कहकर उसे खदेड़ दिया कि इसमें तमीज़ नाम की कोई चीज़ नहीं और उसे बिल्कुल कोई तौर-तरीक़ा नहीं आता।

अब वे भालू से मांद में जाने को कहने लगे। भालू गया और जैसे ही उसने अंधेरे में जलती हुई सी दो आंखें देखीं जो मूंछोंवाले गोल-गोल और भयानक थूथन पर चमक रही थीं तो बड़ी मुश्किल से अपने पैरों पर खड़ा रह पाया, उसने बुदबुदाकर कुछ कहा, सहम गया और सिर झुकाकर वापस चला गया।

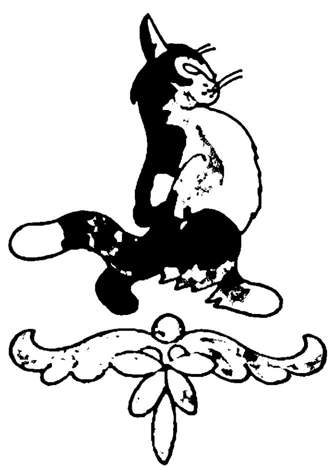
"सब पीछे हट जायें!" लोमड़ी चिल्लायी। "कारिन्दा साहब खुद बाहर आ रहे हैं! खुद आ रहे हैं!"

सभी जानवर पीछे हटकर जहां-तहां छिप गये – कोई पेड़ पर जा चढ़ा, तो कोई झाड़-झाड़ियों और ठूंठों के पीछे जा छिपा। बिल्लेराम बड़ी शान से बाहर आया। इसी वक़्त लोमड़ी धूर्तरानी ने उसके कान में फुसफुसाकर कहा कि वह, जहां तक सम्भव हो, अपनी पूंछ को अधिक से अधिक ऊंचा कर ले और उससे हवा में लहरिये-से बनाता हुआ जाये। इस तरह बिल्लेराम उसके लिये चुनी गयी खाने की मेज़ के क़रीब पहुंचा और खाना शुरू करने के पहले पुरानी आदत के मुताबिक़ कह उठा:

"और खाऊं, और खाऊं, और खाऊं।"

इसी वक़्त उसने कनखियों से उन झाड़ियों की तरफ़ देखा, जहां छिपा हुआ भालू इस अनुठे कारिन्दे को देख रहा था और जिसने उन झाड़ियों को हिला-डुला दिया था। बिल्ले को लगा कि वहां चूहा छिपा हुआ है, वह अपने को बस में न रख सका और एक ही छलांग में वहां जा पहुंचा। बस, अब तो सभी जानवरों का डर के मारे दम निकल गया, सब की टांगें जवाब दे गयीं, उन्हें लगा कि उनकी आखिरी घड़ी आ गयी। सभी अपने छिपने की जगहों से निकले, सिर पर पांव रखकर ऐसे भागे कि किसी ने मुड़कर नहीं देखा। इस तरह सारा जंगल खाली हो गया और लोमड़ी अपने कारिन्दा साहब के साथ वहां रहने लगी। उसके मन को अब बड़ा चैन था, उसके लिये खूब विस्तार था और सभी तरफ़ शिकार ही शिकार था।

तो इस तरह मक्कार लोमड़ी ने किसान द्वारा वन में निकाले गये खूसट और निकम्मे बिल्ले को अपना टुकड़खोर बनाकर सारे जानवरों को डरा दिया और जंगल से भगा दिया।





कोन्स्तान्तीन उशीन्स्की

अंधा घोड़ा

पुराने, बहुत ही पुराने ज़माने में, जब न केवल हम, बल्कि हमारे दादा-परदादा भी इस दुनिया में नहीं थे, सागर-तट पर वीनेता नाम का एक बड़ा समृद्ध और तिजारती स्लाव शहर था। इसी शहर में सर्वधनसम्पन्न नाम का एक बड़ा अमीर सौदागर रहता था जिसके क़ीमती मालों से लदे हुए जहाज़ दूर-दूर के सागरों में जाते थे।

सर्वधनसम्पन्न बहुत ही अमीर था और बड़े ठाट-बाट से रहता था। शायद इसीलिये उसका सर्वधन-सम्पन्न नाम पड़ गया था—उसके घर में महंगे से महंगा और बढ़िया से बढ़िया वह सभी कुछ था जो उस वक़्त

कहीं मिल सकता था। ख़ुद सौदागर, उसकी बीवी और बाल-बच्चे सिर्फ़ सोने-चांदी के बर्तनों में खाते-पीते थे, सेबल के समूर और किमख़ाब पहनते थे।

सर्वधनसम्पन्न के अस्तबल में अनेक बढ़िया घोड़े थे, किन्तु न तो उसके अस्तबल और न पूरे वीनेता शहर में ही किसी के पास "पवन-पछाड़" से ज़्यादा तेज़ और सुन्दर घोड़ा था। सर्वधनसम्पन्न ने अपनी सवारी के प्यारे घोड़े को उसकी बहुत तेज़ चाल के लिये ही "पवन-पछाड़" का नाम दिया था। मालिक के सिवा कोई भी "पवन-पछाड़" पर सवारी करने की हिम्मत नहीं करता था और ख़ुद मालिक भी कभी किसी दूसरे घोड़े पर सवार नहीं होता था।

एक बार क्या हुआ कि सौदागर सर्वधनसम्पन्न व्यापार-कार्य के लिये कहीं गया और अपने प्यारे घोड़े पर सवारी करता हुआ एक बड़े और घने जंगल में से वीनेता वापिस लौट रहा था। शाम हो रही थी, जंगल बहुत ही अन्धकारपूर्ण और घना था, हवा उदासी में डूबे सनोबरों की फुनगियों को झुला रही थी। एकदम अकेला सौदागर अपने प्यारे घोड़े की चिन्ता करते हुए, जो लम्बी यात्रा से बेहद थक गया था, क़दम-क़दम चला रहा था।

अचानक झाड़ियों के पीछे से झबरीली टोपियां पहने छः हट्टे-कट्टे और हिंसक चेहरोंवाले जवान ऐसे सामने आ खड़े हुए मानो ज़मीन फाड़कर निकले हों। उनके हाथों में बर्छियां, कुल्हाड़े और छुरियां थीं। इनमें से तीन घोड़ों पर सवार थे और तीन पैदल थे। दो डाकुओं ने आगे बढ़कर सौदागर के घोड़े की लगाम भी पकड़ ली।

सर्वधनसम्पन्न अगर "पवन-पछाड़" के बजाय किसी भी दूसरे घोड़े पर सवार होता, तो कभी भी अपने प्यारे वीनेता नगर में ज़िन्दा न लौट पाता। लगाम पर पराया हाथ महसूस करते ही घोड़ा तेज़ी से आगे लपका, अपनी चौड़ी और मज़बूत छाती से उसने दोनों दुष्ट लुटेरों को ज़मीन पर गिरा दिया, तीसरे को पैरों तले रौंद डाला जो बर्छी घुमाते हुए आगे भागा था और उसका रास्ता रोकना चाहता था तथा बवंडर की तरह बहुत तेज़ी से उड़ चला। घोड़ों पर सवार डाकू उसका पीछा करने लगे, उनके घोड़े भी बढ़िया थे, मगर "पवन-पछाड़" की बराबरी कब कर सकते थे वे!

यह अनुभव करते हुए कि उनका पीछा किया जा रहा है, "पवन-पछाड़" अपनी थकान के बावजूद बहुत कसे धनुष से छोड़े गये तीर की भांति उड़ता चला जा रहा था और उसने ग़ुस्से से उबलते हुए डाकुओं को बहुत पीछे छोड़ दिया था।

आध घण्टे बाद सर्वधनसम्पन्न अपने शानदार घोड़े पर सवार, जिसके बदन से ढेरों झाग ज़मीन पर गिर रहा था, प्यारे वीनेता नगर में पहुंच गया।

घोड़े से नीचे उतरते हुए जो थकान के कारण बुरी तरह हांफ रहा था, सौदागर ने उसकी झाग से भीगी गर्दन को थपथपाकर बड़ी गम्भीरता से इसी क्षण यह प्रतिज्ञा

की कि उसके साथ चाहे कुछ भी क्यों न हो जाये, वह अपने वफ़ादार घोड़े को न तो कभी बेचेगा, न किसी को भेंट करेगा, उसके बेहद बुढ़ा जाने पर भी उसे घर से नहीं निकालेगा और ज़िन्दा रहने तक उसे बढ़िया जई के तीन तोल हर दिन चारे के रूप में देगा।

लेकिन बीवी-बच्चों के पास जाने की जल्दी में सर्वधनसम्पन्न ने घोड़े की ख़ुद चिन्ता नहीं की, काहिल नौकर ने बेहद थके-हारे घोड़े को ढंग से घुमाया नहीं, उसके जिस्म को पूरी तरह से ठण्डा नहीं होने दिया और समय से पहले ही पानी पिला दिया।

"पवन-पछाड़" उसी समय से बीमार रहने और दुबलाने लगा, उसकी टांगें कमज़ोर होने लगीं और आख़िर वह अन्धा हो गया। सौदागर को बहुत दुख हुआ और छ: महीने तक उसने बहुत अच्छी तरह से अपना वादा पूरा किया – अन्धा घोड़ा पहले की तरह ही अस्तबल में रहता था और उसे जई के तीन तोल चारे के रूप में दिये जाते थे।

सर्वधनसम्पन्न ने बाद में अपनी सवारी के लिये दूसरा घोड़ा ख़रीद लिया और छ: महीने बीतने पर उसे ऐसा प्रतीत होने लगा कि एकदम निकम्मे अन्धे घोड़े को हर दिन जई के तीन तोल देना बड़ी फ़ज़ूलख़र्ची है और उसने दो तोल देने का हुक्म दिया। छ: महीने और बीते, अन्धा घोड़ा अभी जवान था और इसलिये बहुत अर्से तक उसे खिलाते रहना ज़रूरी था। चुनांचे उसे जई का एक तोल चारे के रूप में दिया जाने लगा। सौदागर को आख़िर यह भी बोझ महसूस होने लगा, उसने "पवन-पछाड़" की लगाम उतारकर उसे बाहर निकाल देने का आदेश दिया, ताकि वह अस्तबल में व्यर्थ ही जगह न घेरे रहे। नौकरों ने अंधे घोड़े को डंडे मार-मारकर अहाते से बाहर निकाला, क्योंकि वह किसी तरह भी वहां से जाना नहीं चाहता था।

बेचारा अन्धा घोड़ा यह न समझते हुए कि उसके साथ ऐसा बर्ताव क्यों किया जा रहा है, यह न जानते और न देख पाते हुए कि किधर जाये, सिर झुकाये और दुखी मन से कानों को हिलाता हुआ फाटक के बाहर ही खड़ा रहा। रात हो गयी, बर्फ़ गिरने लगी, बेचारे अन्धे घोड़े के लिये पत्थरों पर सोना सम्भव नहीं था – वे चुभते थे और ठण्डे थे। कई घण्टों तक वह एक ही जगह पर खड़ा रहा और आख़िर भूख ने उसे चारा ढूंढ़ने के लिये मजबूर कर दिया। सिर ऊपर उठाकर इस उम्मीद से हवा को सूंघता हुआ कि कहीं किसी गिरी हुई पुरानी छत का थोड़ा फूस ही खाने, को मिल जाये, अन्धा घोड़ा इधर-उधर भटकने लगा और ऐसा करते हुए वह रह-रहकर कभी तो घर के कोने और कभी बाड़ से जा टकराता।

आपको यह मालूम ही होगा कि सभी प्राचीन स्लाव नगरों की तरह वीनेता में भी कोई राजा नहीं था और जब कोई ज़रूरी मामला सामने आ जाता, तो नगरवासी एक बड़े मैदान में जमा होकर ख़ुद ही उसका हल ढूंढ़ लेते थे। अपने ऐसे मामलों को

तय करने, किसी पर मुक़दमा चलाने और सज़ा देने की ऐसी जन-सभा को पंचायत कहा जाता था। वीनेता के मध्य में जिस मैदान में यह पंचायत होती थी, चार खम्भों पर एक बहुत बड़ा पंचायती घण्टा लटका हुआ था। इसी की आवाज़ सुनकर लोग जमा होते थे और कोई भी, जिसके साथ किसी तरह की ज़्यादती या बेइन्साफ़ी होती थी और जो लोगों से न्याय तथा रक्षा चाहता था, इसे बजा सकता था। किसी छोटी-मोटी बात को लेकर कोई इस पंचायती घण्टे को बजाने की जुर्रत नहीं करता था, क्योंकि सभी को मालूम था कि ऐसा करने पर लोग उसकी खूब ख़बर लेंगे।

इसी मैदान में घूमता हुआ अन्धा, बहरा और भूखा घोड़ा संयोग से उन खम्भों के पास जा पहुंचा जिन पर घण्टा लटका हुआ था। यह सोचते हुए कि शायद वह फूस की छत से कुछ फूस ही बाहर खींच ले, उसने घण्टे के साथ बंधी हुई रस्सी को दांतों से पकड़कर उसे झटके देना शुरू किया। घण्टा इतने ज़ोर से बजने लगा कि बहुत सवेरा होने पर भी लोग यह जानने के लिये मैदान में जमा होने लगे कि कौन उनसे न्याय और रक्षा की मांग कर रहा है। वीनेता में सभी "पवन-पछाड़" घोड़े को जानते थे, सभी को यह मालूम था कि उसने अपने मालिक की जान बचाई थी और मालिक ने क्या प्रतिज्ञा की थी। इस अन्धे, भूखे, ठंण्ड से कांपते और बर्फ़ से ढके घोड़े को मैदान के बीचोंबीच खड़ा देखकर सब लोग हैरान रह गये।

जल्द ही सारी बात साफ़ हो गयी और जब लोगों को यह पता चला कि धनी सर्वधनसम्पन्न ने अन्धे घोड़े को, जिसने उसकी जान बचायी थी, घर से निकाल दिया है, तो सभी ने एकमत से यह फ़ैसला किया कि "पवन-पछाड़" को पंचायती घण्टा बजाने का पूरा अधिकार था।

कृतघ्न सौदागर को मैदान में बुलवाया गया और अपनी हरकत की सफ़ाई देने पर भी लोगों ने यह फ़ैसला सुनाया कि वह पहले की तरह ही घोड़े को अपने पास रखे और उसके मरने तक उसे खिलाये-पिलाये। एक ख़ास आदमी को इस निर्णय की पूर्त्ति की जांच के लिये नियुक्त किया गया और निर्णय को इस घटना की स्मृति में पंचायत-मैदान में गाड़े गये एक पत्थर पर अंकित किया गया।



लेव तोलस्तोय

अक़्लमन्द क़ाज़ी

अल्जीलिया के बाउकास नाम के बादशाह को यह पता चला कि उसके एक शहर में बहुत ही इन्साफ़ करनेवाला एक समझदार क़ाज़ी है, कि वह फ़ौरन सचाई की तह तक पहुंच जाता है और कोई भी मक्कार उसकी आंखों में धूल नहीं झोंक पाता। बादशाह का मन हुआ कि वह ख़ुद वहां जाकर इस बात की जांच करे, पता लगाये कि यह बात सच है या झूठ। चुनांचे उसने एक सौदागर का भेस बनाया और घोड़े पर सवार होकर उस शहर की तरफ़ चल दिया, जहां काज़ी रहता था। शहर के फाटक के पास एक अपाहिज उसके नज़दीक आकर उससे भीख मांगने लगा। बाउकास ने उसे

भीख दी और आगे जाना चाहा, लेकिन अपाहिज ने उसका पल्लू पकड़ लिया।

"तुम्हें क्या चाहिये?" बाउकास ने पूछा। "क्या मैंने तुम्हें अभी भीख नहीं दी?"

"भीख तो तुमने दे दी," अपाहिज ने कहा, "लेकिन एक मेहरबानी और करो, मुझे घोड़े पर बिठाकर चौक तक पहुंचा दो। कहीं घोड़े और ऊंट मुझे कुचल ही न डालें।"

बाउकास उसे अपने पीछे बिठाकर चौक तक ले आया। चौक में उसने घोड़ा रोक लिया। लेकिन अपाहिज नीचे नहीं उतरा। बाउकास ने कहा:

"तुम घोड़े से नीचे क्यों नहीं उतरते? उतरो, हम चौक में पहुंच गये।"

लेकिन भिखमंगे ने जवाब दिया:

"किसलिये उतरूं – घोड़ा तो मेरा है। अगर शराफ़त से देना नहीं चाहते तो हम चलते हैं क़ाज़ी के पास।"

लोगों की भीड़ इनके गिर्द जमा होकर झगड़े को सुनने लगी। आख़िर सभी ने चिल्लाकर कहा:

"क़ाज़ी के पास जाओ, वह फ़ैसला कर देगा!"

बाउकास और अपाहिज क़ाज़ी की तरफ़ चल दिये। कचहरी में बहुत लोग थे और क़ाज़ी बारी-बारी से उनको बुलाता जाता था जिनका उसे फ़ैसला करना होता था।

बाउकास की बारी आने के पहले क़ाज़ी ने एक विद्वान और किसान को बुलाया। उनके बीच बीवी को लेकर झगड़ा था। किसान कहता था कि बावी उसकी है और विद्वान कहता था उसकी। क़ाज़ी ने दोनों की बात सुनी, कुछ देर ख़ामोश रहा और फिर बोला:

"बीवी को यहीं छोड़ दो और कल दोनों मेरे पास आ जाना।"

इन दोनों के जाने के बाद कसाई और तेली उसके सामने हाज़िर हुए। कसाई के कपड़े ख़ून से लथपथ थे और तेली के तेल से। कसाई के हाथ में रुपये थे और तेली कसाई का हाथ पकड़े हुए था। कसाई ने कहा:

"मैंने इस आदमी से तेल ख़रीदा और पैसे देने के लिये बटुआ निकाला। लेकिन इसने मेरा हाथ पकड़ लिया और पैसे छीन लेने चाहे। इसी हालत में हम दोनों आपके पास आ गये हैं – मेरे हाथ में बटुआ है और यह मेरा हाथ पकड़े है। लेकिन रुपये मेरे हैं और यह चोर है।"

तेली ने जवाब में यह कहा:

"यह झूठ है। कसाई मेरे यहां तेल ख़रीदने आया। जब मैंने इसका मटका तेल से भर दिया, तो इसने मुझसे सोने की मुद्रा की रेज़गारी देने को कहा। मैंने रेज़गारी

निकालकर तख़्त पर रख दी, इसने उसे उठाया और चम्पत हो जाना चाहा। मैंने इसका हाथ पकड़ा और इसे यहां ले आया।"

क़ाज़ी कुछ देर चुप रहने के बाद बोला:

"रुपये यहां छोड़ दो और दोनों कल आ जाना।"

आख़िर बाउकास और अपाहिज की भी बारी आई। बाउकास ने सारी बात कह सुनाई। उसकी बात सुनने के बाद उसने भिखमंगे से पूछा कि क्या मामला है। भिखमंगे ने कहा:

"यह सब बिल्कुल झूठ है। मैं घोड़े पर सवारी करता हुआ शहर में से गुज़र रहा था और यह ज़मीन पर बैठा था। इसने मेरी मिन्नत की कि मैं इसे अपने घोड़े पर बिठाकर वहां पहुंचा दूं, जहां इसे जाना था। मैंने ऐसा ही किया, लेकिन वहां पहुंचकर इसने उतरना नहीं चाहा और बोला कि घोड़ा इसका है। यह झूठ है।"

क़ाज़ी ने कुछ सोचकर कहा:

"घोड़े को मेरे पास छोड़ दो और कल आ जाना।"

अगले दिन बहुत-से लोग यह सुनने के लिये कचहरी में जमा हो गये कि क़ाज़ी क्या फ़ैसला करता है। पहले तो किसान और विद्वान हाज़िर हुए।

"यह बीवी तुम्हारी है," उसने विद्वान से कहा, "और इस किसान को पचास बेंत लगाये जायें।"

विद्वान ने अपनी बीवी का हाथ थाम लिया और किसान को इसी वक़्त सज़ा दी गयी। इसके बाद क़ाज़ी ने कसाई और तेली को बुलवाया।

"यह रुपये तुम्हारे हैं," उसने कसाई से कहा। इसके बाद तेली की तरफ़ इशारा करके हुक्म दिया: "इसे पचास बेंत लगाये जायें।"

इसके बाद बाउकास और अपाहिज को हाज़िर होने के लिये कहा गया।

"बीस अन्य घोड़ों में तुम अपने घोड़े को पहचान लोगे?" क़ाज़ी ने बाउकास से पूछा।

"पहचान लूंगा।"

"और तुम?"

"मैं भी पहचान लूंगा," अपाहिज ने जवाब दिया।

"मेरे पीछे-पीछे आओ," क़ाज़ी ने बाउकास से कहा।

वे अस्तबल में गये। बाउकास ने अन्य बीस घोड़ों के बीच फ़ौरन अपने घोड़े की तरफ़ इशारा कर दिया।

इसके बाद क़ाज़ी ने अपाहिज को अस्तबल में बुलाया और उससे भी अपना घोड़ा दिखाने को कहा। अपाहिज ने घोड़े को पहचाना और उसकी तरफ़ संकेत किया। तब क़ाज़ी ने अपनी जगह पर बैठकर बाउकास से कहा:

"घोड़ा तुम्हारा है – तुम इसे ले लो। अपाहिज को पचास बेंत लगाये जायें।"

कचहरी का वक़्त खत्म होने पर क़ाज़ी घर को चल दिया और बाउकास भी उसके पीछे-पीछे हो लिया।

"क्या बात है, क्या मेरे फ़ैसले से खुश नहीं हो?" क़ाज़ी ने पूछा।

"फ़ैसले से तो खुश हूं," बाउकास ने जवाब दिया। "मैं तो सिर्फ़ यह जानना चाहता था कि आपने किस तरह यह तय किया कि बीवी किसान की नहीं, विद्वान की है, कि रुपये तेली के नहीं, कसाई के हैं, कि घोड़ा भिखमंगे का नहीं, मेरा है?"

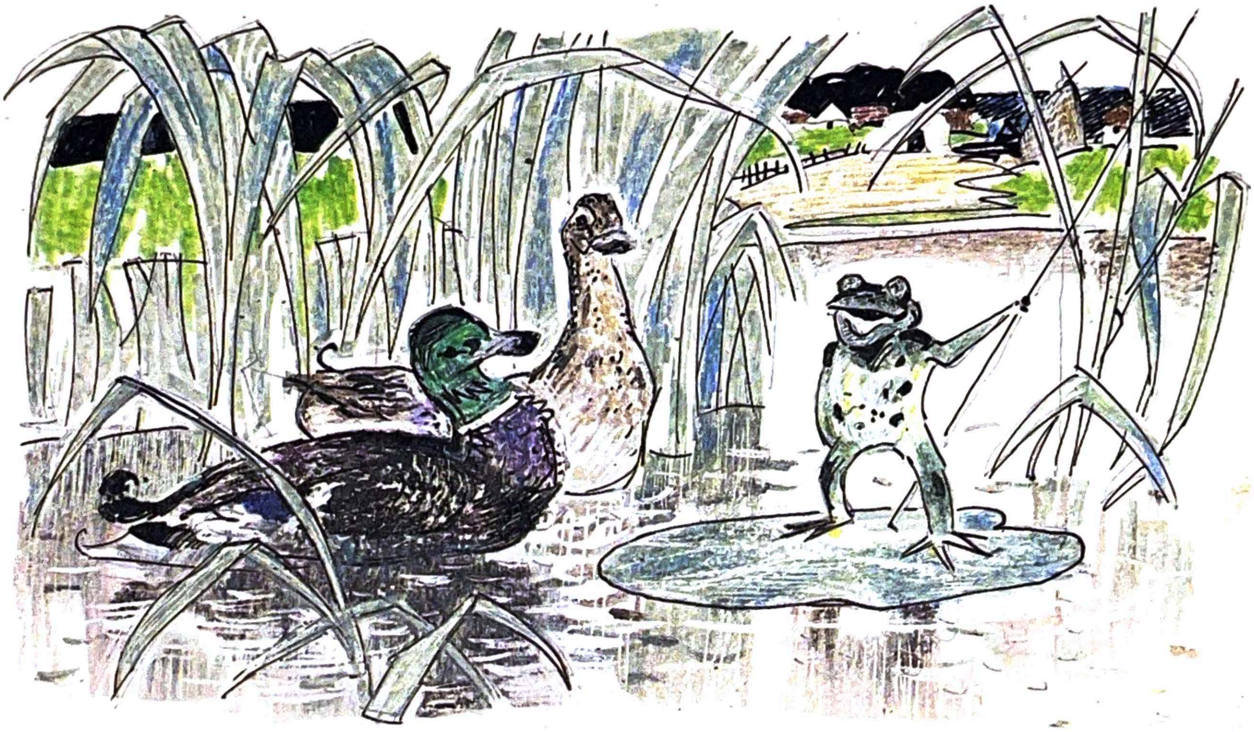
"बीवी के बारे में मैंने ऐसे मालूम किया – सुबह को उसे अपने पास बुलाया और कहा – मेरी दवात में स्याही डाल दो। उसने दवात ली, झटपट और बड़े ढंग से उसे साफ़ करके उसमें स्याही डाल दी। मतलब यह कि वह इस काम को करने की आदी है। इसलिये विद्वान की बात सच थी... रुपयों के बारे में मैंने इस तरह मालूम किया – रुपयों को मैंने पानी से भरे प्याले में डाल दिया और आज सुबह यह देखा कि पानी के ऊपर तेल आया या नहीं। अगर रुपये तेली के होते तो उन पर उसके तेल से सने हाथों का तेल लगा होता। पानी के ऊपर तेल नहीं था और इसका यही मतलब निकलता था कि कसाई की बात सच थी... घोड़े के बारे में कुछ कठिनाई हुई। तुम्हारी तरह अपाहिज ने भी बीस घोड़ों में से फ़ौरन इसी घोड़े की तरफ़ इशारा कर दिया। लेकिन मैं तो तुम दोनों को यह देखने के लिये अस्तबल में नहीं ले गया था कि तुम दोनों घोड़े को पहचान पाते हो या नहीं, बल्कि इसलिये कि तुम दोनों में से घोड़ा किसे पहचानता है। जब तुम उसके नज़दीक गये, तो उसने तुम्हारी तरफ़ सिर घुमाया, तुम्हारी ओर खिंचा। लेकिन जब अपाहिज ने उसे छुआ, तो उसने कनौतियां बदलीं और टांग ऊपर उठाई। इस तरह मुझे मालूम हो गया कि तुम ही घोड़े के असली मालिक हो।"

यह सब सुनकर बाउकास ने कहा:

"मैं सौदागर नहीं, बादशाह बाउकास हूं। मैं यही देखने के लिये यहां आया था कि तुम्हारे बारे में जो कुछ कहा जाता है, वह सच है या नहीं। अब मैं देख रहा हूं कि तुम बहुत समझदार मुंसिफ़ हो। तुम जो भी चाहो, मांग लो, मैं तुम्हें मुंहमांगा इनाम दूंगा।"

क़ाज़ी ने जवाब दिया:

"मुझे कोई इनाम नहीं चाहिये..."



व्सेवोलोद गार्शिन

सैलानी मेढकी

कभी एक मेढकी थी, टर्र-टर्र करती रहती थी। उसका घर था दलदल में, छोटे-बड़े मच्छर खाकर पेट भरती थी और वसन्त में अपनी सहेलियों, दूसरी मेढकियों के साथ मिलकर ख़ूब ज़ोर से टर्र-टर्र का राग अलापती थी। अगर कोई क्रौंच पक्षी उसे न हड़प जाता तो शायद ऐसे ही उसकी सारी ज़िन्दगी बीत जाती। लेकिन अचानक एक अजीब घटना घट गयी उसके जीवन में।

एक दिन क्या हुआ कि वह पानी में डूबे पेड़ की बाहर निकली टहनी पर बैठी हुई प्यारी-प्यारी बूंदाबांदी का मज़ा ले रही थी।

"अहा, आज कैसा भीगा-भीगा मौसम है!" उसने सोचा। "कितना लुत्फ़ है ज़िंदगी में!"

हल्की-हल्की बारिश उसकी चमकती और चित्तीदार पीठ पर गिर रही थी, बूंदें उसके पेट और पंजों से नीचे बह रही थीं और उसे यह बहुत अच्छा लग रहा था। इतना अधिक अच्छा कि उसका टरटराने को मन हो उठा। यही ख़ुश-क़िस्मती कहिये, उसे याद आ गया कि पतझर का मौसम है और पतझर में मेढकियां टर्र-टर्र नहीं करतीं – वसन्त में ही ऐसा किया जाता है। इसलिये वह चुप रहकर आनन्द-विभोर होती रही।

अचानक पतली, सीटी-सी बजाती और बीच-बीच में रुकती-सी आवाज़ हवा में गूंज गयी। बात यह है कि ऐसी बत्तखें भी हैं जिनके पंख हवा को काटते समय मानो गाते हैं या यों कहना अधिक ठीक होगा, सीटी-सी बजाते हैं। ऐसी बत्तखों का झुण्ड जब बहुत ऊंचाई पर उड़ता है तो वे ख़ुद तो दिखाई भी नहीं देतीं, मगर हवा में उनके पंखों की शूं-शूं गूंजती रहती है। इतनी ऊंची उड़ती हैं वे। किन्तु इस बार उन्होंने बहुत बड़ा आधा चक्कर लगाया, नीचे उतरीं और उसी दलदल में आ बैठीं, जहां यह मेढकी रहती थी।

"कैं-कैं!" एक बत्तख बोली। "हमें अभी काफ़ी दूर तक उड़ना है, कुछ खा लेना चाहिये।"

मेढकी तुरन्त छिप गयी। बेशक वह यह जानती थी कि बत्तखें उस जैसी बड़ी और मोटी मेढकी को नहीं खायेंगी, फिर भी सावधानी बरतते हुए वह ग़ोता लगाकर पानी में डूबे पेड़ के नीचे जा छिपी।

किन्तु कुछ देर तक सोचने के बाद उसने अपनी उभरी आंखोंवाला सिर पानी से बाहर निकालने की जुर्रत की – वह यह जानने को बड़ी उत्सुक थी कि बत्तखें कहां जानेवाली हैं।

"कैं-कैं!" दूसरी बत्तख बोली। "ठण्ड होती जा रही है! जल्दी से पहुंचना चाहिये दक्षिण में!"

सभी बत्तखें इस बात का अनुमोदन करने के लिये ज़ोर से कैं-कैं करने लगीं।

"श्रीमती बत्तखो," मेढकी ने हिम्मत करके पूछा, "यह दक्षिण क्या है, जहां आप उड़ी जा रही हैं? कष्ट देने के लिये क्षमा चाहती हूं।"

बत्तखों ने मेढकी को घेर लिया। पहले तो उनका मन हुआ कि उसे खा जायें, लेकिन हर किसी ने यह सोचा कि मेढकी बहुत ही बड़ी है और गले से नीचे नहीं उतरेगी। तब वे सभी पंखों को फड़फड़ाते हुए शोर मचाने लगीं:

"दक्षिण में बड़ा मज़ा है! इस वक़्त वहां बहुत प्यारा मौसम है! बड़ी अच्छी दलदलें हैं वहां! अहा, कैसे बढ़िया कीड़े हैं वहां! बड़ा मज़ा है दक्षिण में!"

बत्तखें इतना अधिक शोर मचा रही थीं कि मेढकी के तो मानो कान बहरे हो गये। बड़ी मुश्किल से उसने उन्हें चुप करवाया और एक बत्तख़ से, जो अन्य सभी से मोटी और अधिक समझदार प्रतीत होती थी, यह समझाने का अनुरोध किया कि दक्षिण किसे कहते हैं। इस बत्तख़ ने जब इसे दक्षिण के बारे में सब कुछ बता दिया, तो मेढकी की ख़ुशी का कोई ठिकाना न रहा। पर चूंकि वह बड़ी सावधान थी, इसलिये अन्त में यह पूछे बिना न रह सकी:

"वहां छोटे-बड़े मच्छर भी बहुत हैं न?"

"अरे, दल के दल!" बत्तख़ ने जवाब दिया।

"टर्र!" मेढकी कह उठी और इसी क्षण उसने मुड़कर देखा कि पास में कोई सहेली तो नहीं जो उसकी आवाज़ सुनकर पतझर में टर्राने के लिये उसकी भर्त्सना करती। वह इतनी ज़्यादा ख़ुश हुई थी कि एक बार टर्राये बिना रह नहीं सकी थी। "मुझे अपने साथ ले चलो!"

"यह भी कमाल हो गया!" बत्तख़ हैरान होकर कह उठी। "हम तुझे कैसे अपने साथ ले जायेंगी? तुम्हारे तो पंख नहीं हैं।"

"तुम कब उड़नेवाली हो?" मेढकी ने पूछा।

"बहुत जल्द, बहुत जल्द!" सभी बत्तखें चिल्ला उठीं। "कैं-कैं! कैं-कैं! यहां ठण्ड है! दक्षिण को चलो! दक्षिण को चलो!"

"मुझे सोचने के लिये सिर्फ़ पांच मिनट दे दो," मेढकी ने कहा, "मैं अभी लौट आऊंगी, शायद कोई न कोई अच्छी तरकीब सोच लूंगी।"

वह उस टहनी से, जिस पर फिर से चढ़ गयी थी, पानी में कूद गयी, ग़ोता लगाकर कीचड़ में गहरी चली गयी, ताकि कोई भी उसके चिन्तन में बाधा न डाल सके। पांच मिनट बीत गये, बत्तखें उड़ने को तैयार हो गयी थीं कि अचानक उसी टहनी के पास, जिस पर मेढकी बैठी रही थी, पानी में से उसकी थूथनी बाहर निकली। ख़ुशी से उसकी बाछें खिली हुई थीं।

"मैंने तरकीब सोच ली है! बहुत बढ़िया हल सूझ गया है मुझे!" वह बोली। "तुम में से दो अपनी चोंचों में टहनी पकड़ लें और मैं बीच में लटक जाऊंगी। तुम उड़ोगी और मुझे अपने साथ लेती जाओगी। बस, इतना ही ज़रूरी है कि तुम कैं-कैं न करो और मैं टर्र-टर्र न करूं। तब सब कुछ बढ़िया रहेगा।"

बेशक यह सही था कि ख़ामोश रहते हुए मेढकी को चार हज़ार से अधिक किलो-मीटर तक अपने साथ ले जाने में बत्तखों के लिये कोई ख़ुशी नहीं थी, लेकिन मेढकी की सूझ-बूझ ने उन पर ऐसा असर डाला कि वे उसे ले चलने को राज़ी हो गयीं। यह तय हुआ कि हर दो घण्टे बाद बत्तखें बदलती रहेंगी, दो बत्तखें टहनी को अपनी



चोंचों में ले लेंगी और चूंकि वे तो थीं बेशुमार और मेढकी थी सिर्फ़ एक, तो हर किसी की बारी बहुत देर से आनेवाली थी। एक अच्छी, मज़बूत टहनी ढूंढ़ ली गयी, दो बत्तख़ों ने उसे चोंचों में दबा लिया, मेढकी ने उसे मध्य में मुंह से पकड़ लिया और बत्तख़ों का पूरा झुण्ड आकाश में उड़ चला। अधिक ऊंचाई पर पहुंचने से मेढकी का दिल दहल उठा। इसके अलावा बत्तख़ें उड़ते हुए कभी ऊपर, तो कभी नीचे भी हो जाती थीं, टहनी को झटके देती थीं। बेचारी मेढकी काग़ज़ के गुड्डे की तरह हवा में इधर-उधर हिचकोले खा रही थी और टहनी को पकड़े हुए थी, ताकि उससे अलग होकर ज़मीन पर न जा गिरे। किन्तु वह जल्द ही अपनी इस स्थिति की आदी हो गयी और इधर-उधर नज़र भी दौड़ाने लगी। उसके नीचे धरती पर खेत-मैदान, चरागाह, नदियां और पहाड़ बड़ी तेज़ी से गुज़रते जाते थे जिन्हें देख पाना उसके लिये कठिन था, क्योंकि टहनी पर लटकते हुए वह अपने पीछे और थोड़ा-सा ऊपर ही देख पाती थी। फिर भी कुछ तो नीचे भी देख लेती थी और इस बात पर गर्व करती हुई ख़ुश थी।

"कितनी बढ़िया तरकीब सोची है मैंने," वह अपने मन में कहती थी।

और उसे उड़ाये लिये जानेवाली बत्तख़ों की जोड़ी के पीछे उड़ रही बतख़ें शोर मचाती हुई उसकी तारीफ़ कर रही थीं।

"बहुत ही समझदार है हमारी मेढकी," वे कह रही थीं। "बत्तख़ों में भी ऐसी अक़्लमन्द कम ही मिलेंगी।"

उसका बेहद मन हुआ कि उनके प्रति आभार प्रकट करे, किन्तु यह याद आने पर कि मुंह खोलते ही वह भयानक ऊंचाई से नीचे जा गिरेगी, उसने टहनी को और कसकर जबड़े में दबा लिया और चुप रहने का निर्णय किया। इस तरह वह दिन भर लटकती रही। उसे ले जानेवाली बत्तख़ें उड़ते हुए ही बदलती रहती थीं, बड़ी फ़ुर्ती से टहनी को चोंचों में पकड़ लेती थीं। यह बड़ा भयानक होता और कई बार तो मेढकी डर के मारे टर्र-टर्र करते रह गयी। इसके लिये दिल का मज़बूत होना बहुत ज़रूरी था और वह दिल की मज़बूत थी। शाम हो जाने पर इन सभी ने किसी दलदल में आराम किया और भोर होते ही बत्तख़ें मेढकी को लेकर फिर से उड़ चलीं। किन्तु इस बार मेढकी ऐसे लटकी कि नीचे की दुनिया को अधिक अच्छी तरह से देख सके। बत्तख़ें बोये हुए खेतों, पीले पत्तोंवाले जंगलों और उन गांवों के ऊपर से गुज़रीं जहां कटी हुई फ़सल की बड़ी-बड़ी टालें थीं। वहां से लोगों की बातचीत और मूसलों की धम-धम भी सुनाई दे रही थी जिनसे कूटू को कूटा जा रहा था। लोग बत्तख़ों के झुण्ड को देखते थे, उसमें किसी अजीब चीज़ की तरफ़ उनका ध्यान जाता था और वे हाथों से उसकी तरफ़ इशारा करते थे। मेढकी का बहुत मन हो उठा कि वह धरती के अधिक निकट ऐसे उड़ती हुई गुज़रे, अपने को दिखाये और यह सुन सके कि लोग

उसके बारे में क्या कहते हैं। अगली बार जब वे आराम के लिये रुकीं तो उसने बत्तख़ों से कहा :

"क्या हम कुछ कम ऊंचाई पर नहीं उड़ सकतीं? ज़्यादा ऊंचाई से मेरा सिर चकराता है और मुझे डर है कि अगर कहीं मेरी तबीयत ख़राब हो गयी तो मैं नीचे गिर जाऊंगी।"

दयालु बत्तख़ें कम ऊंचाई पर उड़ने को राज़ी हो गयीं। अगले दिन वे इतने नीचे उड़ रही थीं कि उन्हें आवाज़ें सुनाई देती थीं।

"देखिये, देखिये," एक गांव में बच्चे चिल्लाये, "बत्तख़ें मेढकी को उड़ाये लिये जा रही हैं!"

मेढकी ने यह सुना और उसका दिल बल्लियों उछलने लगा।

"देखिये, देखिये," दूसरे गांव में वयस्क चिल्ला उठे, "यह है असली अजूबा!"

"इन्हें यह मालूम है या नहीं कि यह बत्तख़ों की नहीं, मेरे दिमाग़ की सूझ है?" मेढकी ने सोचा।

"देखिये, देखिये," तीसरे गांव में लोग-बाग चिल्लाने लगे, "क्या-कमाल है यह भी! किसने सोची है ऐसी अनूठी तरकीब?"

यह सुनकर मेढकी अपने को वश में न रख सकी और सभी तरह की सावधानी भूलकर पूरे ज़ोर से चिल्ला उठी :

"मैंने! मैंने! मैंने!"

इस तरह चिल्लाते ही वह कलाबाज़ियां खाती हुई ज़मीन पर जा गिरी।

बत्तख़ें बहुत ज़ोर से चीख उठीं, उनमें से एक ने मेढकी को हवा में ही लोक लेने की कोशिश की, मगर नाकाम रही। मेढकी अपने चारों पंजे झटकते हुए बड़ी तेज़ी से धरती की ओर नीचे जा रही थी। चूंकि बत्तख़ें बहुत तेज़ी से उड़ रही थीं, इसलिये वह उसी जगह पर नहीं गिरी जहां चिल्लायी थी और जहां पक्की सड़क थी, बल्कि ख़ुशक़िस्मती से बहुत आगे, गांव के छोर पर गन्दे पानी के एक पोखर में जा गिरी।

किन्तु शीघ्र ही वह पानी से बाहर निकली और फिर पूरे ज़ोर से चिल्ला उठी;

"यह मेरी सूझ थी! यह तरकीब मैंने सोची थी!"

किन्तु उसकी बात सुननेवाला आस-पास कोई नहीं था। पानी में अचानक होनेवाले ज़ोरदार छपाके से इस पोखर की मेढकियां पानी में जा छिपी थीं। कुछ देर बाद बाहर निकलने पर वे इस नयी मेढकी को हैरानी से देखने लगीं।

और इस मेढकी ने इन्हें यह अनूठी कहानी सुनायी कि कैसे वह ज़िंदगी भर सोचती, अपनी अक़्ल लड़ाती रही थी और आखिर कैसे उसने बत्तखों पर सवारी करते हुए दुनिया की सैर का एक नया और अनूठा उपाय सोचा था। उसने बताया कि कैसे उसकी निजी बत्तखें थीं जो उसे वहीं ले जाती थीं, जहां वह जाना चाहती थी, कि वह बहुत सुन्दर दक्षिण में हो आयी है, जहां बहुत बढ़िया और गर्म दलदलें हैं जिनमें ढेरों छोटे मच्छर और खाने लायक़ दूसरे मज़ेदार कीड़े हैं।

"मैं तो यह देखने के लिये तुम्हारे पास आई हूं कि कैसी ज़िंदगी है तुम्हारी," मेढकी ने कहा। "मैं वसन्त तक यहां रहूंगी जब मेरी निजी बत्तखें लौट आयेंगी, जिन्हें मैंने कुछ महीनों की छुट्टी दे दी है।"

किन्तु बत्तखें कभी नहीं लौटीं। वे तो यही समझती थीं कि मेढकी ज़मीन पर गिरकर टुकड़े-टुकड़े हो गयी और उन्हें उसके लिये बहुत अफ़सोस था।





द्मीत्री मामिन-सिबिर्याक

टूटे पंखवाली

१

पतझर की पहली ठण्ड ने ही, जिससे घास पीली हो गयी, सभी पक्षियों को अत्यधिक उद्विग्न-चिन्तित कर दिया। सभी लम्बे सफ़र की तैयारी करने लगे और सभी में गम्भीरता तथा चिन्ता का भाव देखा जा सकता था। सचमुच, कई हज़ार किलोमीटरों तक उड़ना कोई आसान काम नहीं... बेचारे बहुत-से पक्षियों की ताक़त तो रास्ते में ही जवाब दे जाती है, कितने ही अन्य कारणों से मर जाते हैं – कुल मिलाकर, उनके लिये गम्भीरता से सोच-विचार करने की कुछ बात तो थी ही।

हंसों, कलहंसों और बत्तखों जैसे बड़े और संजीदा परिन्दे निकट भविष्य में अपने बहादुरी के कारनामे

की सारी मुश्किलों को समझते हुए धीर-गम्भीर मुद्रा बनाकर इसकी तैयारी कर रहे थे। टिटिहरियों जैसे छोटे-छोटे पक्षी ही सबसे ज़्यादा शोर मचा रहे थे, दौड़-धूप और इधर-उधर भाग-दौड़ कर रहे थे। वे तो बहुत पहले से ही झुण्ड बनाकर एक तट से दूसरे तट पर छिछली नदियों और दलदलों को ऐसी तेज़ी से लांघते हुए ऐसे दूर पहुंच गये थे मानो किसी ने मुट्ठी भरकर मटर बिखरा दिये हों। छोटे पक्षियों के लिये इतना बड़ा काम था यह ...

जंगल अन्धकारपूर्ण और मौन था, क्योंकि तराने छेड़नेवाले पक्षी तो ठण्ड आने से पहले ही उड़ गये थे।

"यह रेज़गारी कहां जाने की जल्दी में है!" बूढ़े नर-बत्तख़ ने, जो अपने को परेशान करना पसन्द नहीं करता था, बड़बड़ाते हुए कहा।

"तुम तो सदा के काहिल हो, इसलिये तुम्हें दूसरों की दौड़-धूप देखना अच्छा नहीं लगता," उसकी मादा, बूढ़ी बत्तख़ ने कारण स्पष्ट किया।

"मैं सदा का काहिल हूं? मेरे साथ तुम यह ज़्यादती कर रही हो, इसके सिवा कुछ नहीं। सम्भव है कि मैं दूसरों से कहीं ज़्यादा चिन्ता करता हूं, किन्तु उसे ज़ाहिर नहीं होने देता। अगर मैं सुबह से शाम तक तट पर भागता, चीख़ता-चिल्लाता, दूसरों के आड़े आता और सबके नाक में दम करता फिरूं, तो इससे कोई ख़ास फ़ायदा नहीं होगा।"

बूढ़ी बत्तख़ तो अपने साथी से यों भी बिल्कुल ख़ुश नहीं थी और अब पूरी तरह से नाराज़ हो गयी:

"तुम दूसरों को देखो तो, काहिल! उन पर नज़र डालो, हमारे उन पड़ोसियों – कलहंसों और हंसों पर, – उन्हें देखकर जी ख़ुश होता है। दो जिस्म, एक जान – ऐसे रहते हैं वे ... हंस या कलहंस कभी अपना घोंसला छोड़कर नहीं जाता और हमेशा बच्चों की सबसे पहले फ़िक्र करता है। हां, हां, सोलह आने सही कह रही हूं मैं ... लेकिन तुम्हें बच्चों से कोई मतलब ही नहीं, बस, अपनी ही फ़िक्र करते हो, अपनी ही तोंद फुलाते हो। मतलब यह कि बिल्कुल काहिल हो ... तुम्हें तो देखने को भी मन नहीं होता।"

"बड़बड़ नहीं करो, बुढ़िया! .. मैं तो तुमसे यह नहीं कह रहा हूं कि तुम्हारा मिज़ाज बहुत बुरा है। हर किसी में कोई न कोई कमी होती है ... इसमें मेरा तो कोई क़ुसूर नहीं है कि कलहंस एक बुद्धू पक्षी है और इसलिये अपने बच्चों की आयागिरी करता है। वैसे मेरा तो यही उसूल है कि दूसरों के मामलों में टांग नहीं अड़ाओ। क्या ज़रूरत है इसकी? जो जैसे चाहे, वैसे जिये।"

नर-बत्तख़ को गम्भीर विचार-विमर्श करना अच्छा लगता था और फिर मज़े की बात यह थी कि हमेशा वही सही, हमेशा समझदार और हमेशा अन्य सभी से बेहतर

सिद्ध होता था। बूढ़ी बत्तख़ कभी से इस चीज़ की आदी हो चुकी थी, लेकिन इस वक़्त वह एक ख़ास वजह से परेशान थी।

"कैसे बाप हो तुम भी!" वह अपने बुड्ढे पर बरस पड़ी। "बाप अपने बच्चों की चिन्ता करते हैं, मगर तुम्हारी बला से!..."

"तुम क्या भूरी गर्दनवाली की बात कर रही हो? अगर वह उड़ नहीं सकती, तो इसमें मैं क्या कर सकता हूं? मेरा तो क़ुसूर नहीं..."

भूरी गर्दनवाली वे अपनी उस अपाहिज बेटी को कहते थे जिसका पंख वसन्त में तभी टूट गया था, जब लोमड़ी लुक-छिपकर इनके बच्चों के पास पहुंच गयी थी और उसने इस नन्ही बत्तख़ को दबोच लिया था। बूढ़ी बत्तख़ यानी मां बड़ी दिलेरी से लोमड़ी पर टूट पड़ी थी और उसने बच्ची को छुड़वा लिया था, लेकिन उसका एक पंख टूटा ही रह गया था।

"यह सोचकर भी दिल को दहशत होती है कि अपनी इस बिटिया को हम यहां छोड़ जायेंगे," बत्तख़ ने आंसू बहाते हुए दोहराया। "सब उड़ जायेंगे और वह अकेली, एकदम अकेली रह जायेगी। हां, बिल्कुल अकेली... हम दक्षिण को, गर्म देशों की ओर उड़ जायेंगे और यह बेचारी यहां ठिठुरती रहेगी... आख़िर तो वह हमारी बिटिया है और कितना अधिक प्यार करती हूं मैं अपनी इस भूरी गर्दनवाली को! सुनो, मेरे बूढ़े, मैं तो इसके साथ जाड़ा बिताने को यहीं रह जाऊंगी..."

"और दूसरे बच्चों की कौन देख-भाल करेगा?"

"वे स्वस्थ हैं, मेरे बिना भी उनका काम चल जायेगा।"

भूरी गर्दनवाली की जब भी चर्चा होने लगती, नर-बत्तख़ हमेशा बातचीत का विषय बदलने की कोशिश करता। निश्चय ही वह भी उसे प्यार करता था, किन्तु व्यर्थ ही अपने को परेशान करने में क्या तुक है? हां, रह जायेगी वह यहीं, हां, ठिठुरेगी वह ठण्ड में – बेशक बहुत दुख की बात है, लेकिन कुछ किया भी तो नहीं जा सकता! इसके अलावा, दूसरे बच्चों की भी तो चिन्ता करनी चाहिये। बीवी तो हमेशा परेशान होती रहती है, मगर सीधा-सादा रवैया होना चाहिये ज़िन्दगी की तरफ़। नर-बत्तख़ को मन ही मन बीवी पर तरस आ रहा था, किन्तु मां के दुख की गहराई को वह अच्छी तरह से नहीं समझ पा रहा था। अगर लोमड़ी उस वक़्त उनकी इस बिटिया को खा जाती, तो यह कहीं बेहतर होता – जाड़े में तो वह हर हालत में मर जायेगी।

२

जुदाई का वक़्त नज़दीक होने के कारण बूढ़ी बत्तख़ अपनी अपाहिज बिटिया को पहले से कहीं ज़्यादा प्यार करती थी। जुदाई और एकाकीपन क्या होता है, बेचारी नन्ही बत्तख़ अभी यह नहीं जानती थी और इसलिये दूसरों की सफ़र की तैयारी को

एक अनाड़ी के कौतूहल से देखती थी। यह सच है कि कभी-कभी उसे इस बात से ईर्ष्या होती कि उसके भाई-बहन इतने ख़ुश होते हुए उड़ान की तैयारी कर रहे थे, कि वे कहीं बहुत, बहुत दूर उड़ जायेंगे, जहां जाड़ा नहीं होता।

"वसन्त में तो आप सभी लौट आयेंगे न?" भूरी गर्दनवाली नन्ही बत्तख़ ने अपनी मां से पूछा।

"हां, हां, लौट आयेंगे, मेरी प्यारी... और फिर से हम सब एकसाथ रहेंगे।"

टूटे पंखवाली बिटिया को तसल्ली देने के लिये, जो अब इस विषय पर सोच-विचार करने लगी थी, मां ने उसे कई ऐसी घटनायें सुनायीं, जब बत्तखें जाड़े में भी यहीं रह गयी थीं। उसने बताया कि ऐसे दो जाड़ों को तो वह ख़ुद जानती है।

"मेरी लाड़ली, किसी तरह से यह वक़्त काट लेना," बूढ़ी बत्तख़ ने दिलासा देते हुए कहा। "शुरू में मन उदास होगा, मगर बाद में आदी हो जाओगी। अगर तुम्हें गर्म पानी के चश्मे पर पहुंचाया जा सकता जो जाड़े में भी नहीं जमता, तो बहुत ही अच्छा हो जाता। वह यहां से बहुत दूर भी नहीं है... वैसे यों ही बातें करने से क्या फ़ायदा है, हम तुम्हें वहां पहुंचा तो सकेंगे नहीं!"

"मैं तो हर वक़्त आप सबको याद करती रहूंगी," बेचारी नन्ही बत्तख़ ने दोहराया। "यही सोचती रहूंगी कि आप लोग कहां हैं, क्या कर रहे हैं, हंसी-ख़ुशी की ज़िन्दगी है आपकी या नहीं... इसलिये यह तो वैसे ही हो जायेगा मानो मैं आप सबके साथ हूं।"

अपनी हताशा को छिपाने के लिये बूढ़ी बत्तख़ को मन की सारी शक्ति से काम लेना पड़ा। वह अपने को ख़ुश ज़ाहिर करने की कोशिश करती और दूसरों से छिप-छिपकर रोती। उफ़, कितना अफ़सोस होता था उसे अपनी प्यारी, अपनी बेचारी भूरी गर्दनवाली बिटिया के लिये!.. दूसरे बच्चों की तरफ़ तो उसका लगभग ध्यान नहीं जाता था, वह उनकी बिल्कुल परवाह नहीं करती थी और उसे तो यह तक प्रतीत होता था कि वह उन्हें बिल्कुल प्यार नहीं करती।

और वक़्त कितनी तेज़ी से उड़ता जा रहा था! लगातार कई ठण्डी सुबहें आ चुकी थीं, पाले से भोज वृक्षों के पत्ते पीले, और एस्प वृक्षों के पत्ते लाल हो गये थे। नदी का पानी काला-काला हो गया था और स्वयं नदी कहीं अधिक चौड़ी प्रतीत होती थी, क्योंकि उसके किनारों पर उगे हुए झाड़-झंखाड़ बहुत जल्दी-जल्दी पातहीन होते जा रहे थे और किनारे नंगे-बुच्चे हो गये थे। पतझर की ठण्डी हवा सूखे पत्तों को तोड़कर उड़ा ले जाती थी। आकाश में अक्सर भारी-भारी बादल छाये रहते और पतझर की हल्की-हल्की बूंदा-बांदी होती। कुल मिलाकर यह कि बात बिगड़ती ही जा रही थी और कई दिनों से गर्म देशों को उड़नेवाले पक्षियों के झुण्ड पास से गुज़र रहे थे...

सबसे पहले तो दलदली परिन्दे उड़ने लगे, क्योंकि दलदलें जमने लगी थीं। पानी

में तैरनेवाले पक्षी सबसे अधिक देर तक यहीं बने रहे। सारसों के उड़ जाने से नन्ही बत्तख़ को सबसे ज़्यादा दुख हुआ, क्योंकि वे ऐसी दर्दभरी आवाज़ में चीख़ते हुए गुज़रे मानो उसे अपने साथ उड़ चलने को पुकार रहे हों। किसी पूर्वानुभूति से पहली बार उसका दिल बैठ-सा गया और वह आकाश में उड़े जा रहे सारसों के झुण्ड को बहुत देर तक देखती रही।

"कितना अच्छा लग रहा होगा इन्हें!" टूटे पंखवाली ने सोचा।

हंस, कलहंस और बत्तखें भी उड़ जाने की तैयारी करने लगीं। अलग-अलग घोंसलों के ऐसे पक्षियों ने बड़े-बड़े झुण्ड बना लिये। बूढ़े और अनुभवी पक्षी नौउम्र परिन्दों को उड़ान के राज़ बताने और गुर सिखाने लगे। नौउम्र परिन्दे हर सुबह को ख़ुशी से चहकते, शोर मचाते हुए दूर-दूर तक उड़ानें भरते, ताकि बहुत लम्बी उड़ान के लिये अपने पंखों को मज़बूत कर सकें। समझदार मुखिया पहले अलग-अलग दलों को शिक्षा देते और फिर सभी को एकसाथ। बेहद हो-हल्ला होता, जवान पक्षी ऐसे अपनी ख़ुशी और उछाह को ज़ाहिर करते...

केवल टूटे पंखवाली ही सैर की इन उड़ानों में हिस्सा नहीं ले पाती थी और दूर से ही इन्हें देखती रहती थी। बेचारी करती भी तो क्या, अपने भाग्य के सामने सिर झुकाना पड़ा उसे। लेकिन वह कितना अच्छा तैरती थी, कितने बढ़िया ग़ोते लगाती थी! पानी ही उसकी ज़िन्दगी था।

"अब उड़ चलना चाहिये... इसका वक़्त हो गया!" बुज़ुर्ग मुखिया कहते। "क्या तुक है अब यहां बने रहने में?"

और वक़्त उड़ता जा रहा था, बहुत तेज़ी से उड़ता जा रहा था... आख़िर उड़ान भरने का दुखद दिन भी आ गया।

नदी-तट पर सभी का एक बहुत बड़ा झुण्ड जमा हो गया। यह पतझर के शुरू की एक सुबह थी, जब पानी पर घने कुहासे की चादर बिछी हुई थी। कोई तीन सौ बत्तख़ों का झुण्ड था। बड़े मुखियों की कैं-कैं ही सुनाई दे रही थी। बूढ़ी बत्तख़ सारी रात नहीं सोई। टूटे पंखवाली अपनी बिटिया के साथ उसकी यह अन्तिम रात थी।

"तुम उस तट के पास रहना, जहां गर्म पानीवाला चश्मा नदी में आकर मिलता है," मां ने उसे सलाह दी। "वहां जाड़े भर पानी नहीं जमता..."

टूटे पंखवाली नन्ही बत्तख़ एक अजनबी की तरह पूरे झुण्ड से अलग रही...

सभी की इस साझी उड़ान की तैयारी में सब इतने व्यस्त थे कि उसकी तरफ़ किसी ने ध्यान ही नहीं दिया। बेचारी नन्ही बिटिया के लिये बूढ़ी बत्तख़ का दिल टुकड़े-टुकड़े हुआ जा रहा था। उसने मन ही मन कई बार यह निर्णय किया कि यहीं रह जायेगी, किन्तु रहती तो कैसे, जब दूसरे बच्चे भी थे और पूरे झुण्ड के साथ उड़ना चाहिये था?

"तो उड़ चलो!" सबसे बड़े मुखिया ने ज़ोर से आदेश दिया और पूरा झुण्ड एकबारगी उड़ चला।

टूटे पंखवाली नन्ही बत्तख़ नदी-तट पर अकेली रह गयी और उड़े जाते झुण्ड को बहुत देर तक देखती रही। शुरू में सभी बत्तख़ें एक बड़े झुण्ड के रूप में उड़ती रहीं और फिर ढंग का तिकोण बनाकर आंखों से ओझल हो गयीं।

"क्या मैं एकदम अकेली रह गयी हूं?" नन्ही बत्तख़ ने आंसू बहाते हुए सोचा। "अगर लोमड़ी ने उस दिन मुझे खा लिया होता, तो यह कहीं अच्छा रहता..."

३

टूटे पंखवाली नन्ही बत्तख़ जिस नदी के किनारे पर रह गयी थी, वह घने जंगल से ढके पहाड़ों में से बड़ी मस्ती से बहती थी। यह जगह एकदम सुनसान थी, आस-पास कोई नहीं रहता था। सुबह को तटों के निकट पानी जमने लगा और दिन के वक़्त शीशे की तरह पतली बर्फ़ की परत पिघल जाती।

"क्या पूरी नदी जम जायेगी?" नन्ही बत्तख़ धड़कते दिल से सोचती।

उसे अकेली को ऊब महसूस होती और वह अपने भाई-बहनों के बारे में ही सोचती रहती – कहां हैं वे इस वक़्त? सही-सलामत पहुंच गये या नहीं? उसे याद करते हैं या नहीं? सभी चीज़ों के बारे में सोचने के लिये उसके पास काफ़ी वक़्त था। उसे एकाकीपन का भी अनुभव हो गया था। नदी सूनी थी और केवल जंगल में ही, जहां तीतर-बटेर चहकते थे, गिलहरियां और ख़रगोश उछलते-कूदते थे, ज़िन्दगी के निशान बाक़ी रह गये थे। नन्ही बत्तख़ ऊब के कारण एक बार जंगल में चली गयी और जब लुढ़कता-पुढ़कता हुआ एक ख़रगोश झाड़ी के नीचे से अचानक सामने आ गया, तो बहुत बुरी तरह से डर गयी।

"अरी बुद्धू, कैसे तुमने मुझे डरा दिया!" कुछ शान्त होने पर ख़रगोश ने कहा। "मेरी तो जान ही निकल गयी... तुम यहां क्या कर रही हो? सभी बत्तख़ें तो कभी की उड़ गयीं..."

"मैं उड़ नहीं सकती। जब मैं बिल्कुल छोटी थी, लोमड़ी ने तभी मेरा पंख नोच डाला था..."

"ओह, क्या मुसीबत है यह लोमड़ी भी!.. इससे बुरा कोई दूसरा जानवर ही नहीं। वह तो कभी से मुझे भी झपट लेने के फेर में है... तुम उससे बचकर रहना, ख़ास तौर पर तब, जब नदी पर बर्फ़ जम जाये। तब वह तुम्हें दबोच लेगी..."

इन दोनों की जान-पहचान हो गयी। टूटे पंखवाली नन्ही बत्तख़ की तरह ख़रगोश के सिर पर भी हर वक़्त ख़तरा मंडराता रहता था और लगातार इधर-उधर भागकर ही वह [illegible]नी जान बचाता था।

"अगर पक्षी की तरह मेरे भी पंख होते तो मेरे ख़्याल में मैं दुनिया मे किसी से भी न डरता!.. तुम्हारे पंख नहीं, तो तुम तैर तो सकती हो, और कुछ नहीं, तो पानी में ग़ोता ही लगा जाओगी," ख़रगोश ने कहा। "लेकिन मैं तो लगातार डर से कांपता रहता हूं... मेरे तो सभी ओर दुश्मन ही दुश्मन हैं। गर्मी में तो फिर भी कहीं छिपा जा सकता है, मगर जाड़े में सब कुछ नज़र आता है।"

जल्द ही पहली बर्फ़ पड़ गयी, मगर नदी ठण्ड के सामने अभी भी घुटने टेकने को तैयार नहीं थी। रात को जो कुछ जम जाता, पानी उसे तोड़ डालता। ज़िंदगी और मौत का संघर्ष चल रहा था। निर्मल और तारों से झिलमिलाते आकाशवाली रातें सब से ज़्यादा ख़तरनाक होती थीं, जब सब कुछ दम साध लेता था और नदी में लहरें नहीं होती थीं। नदी मानो सो जाती थी और ठण्ड उसे सोते हुए ही बर्फ़ में जकड़ लेने का प्रयास करती थी।

आख़िर ऐसा ही हुआ। बड़ी शान्त और सितारोंवाली रात थी। अन्धकारपूर्ण जंगल तट पर शान्त खड़ा था मानो महाबलियों का पहरा हो। जैसा कि रात के समय होता है, पर्वत ऊंचे प्रतीत हो रहे थे। बहुत ऊंचाई पर चमकते हुए दूज के चांद की स्पन्दित और टेढ़ी-तिरछी चांदनी में सब कुछ नहाया हुआ था। दिन के वक़्त कल-छल करती और शोर मचाती पहाड़ी नदी शान्त हो गयी थी, ठण्ड दबे पांव उसके निकट आ गयी, उसने इस गर्वीली और अदम्य सुन्दरी को अपनी बांहों में भर लिया और दर्पण जैसे चमकते शीशे से ढक दिया।

टूटे पंखवाली नन्ही बत्तख़ बेहद परेशान हो गयी, क्योंकि केवल नदी का मध्य भाग ही नहीं जमा था, जहां पानी का चौड़ा घेरा-सा बन गया था। उसके अबाध रूप से तैरने के लिये कोई तीस मीटर से अधिक स्थान नहीं रह गया था।

जब तट पर लोमड़ी दिखाई दी, नन्ही बत्तख़ तब तो बिल्कुल हताश हो उठी। यह वही लोमड़ी थी जिसने उसका पंख तोड़ा था।

"अरे, पुरानी परिचिता, नमस्ते!" नदी-तट पर रुकते हुए लोमड़ी ने प्यार से कहा। "बहुत अर्से से मुलाक़ात नहीं हुई... जाड़े की बधाई!"

"कृपया जाओ यहां से, मैं तुमसे बिल्कुल बात नहीं करना चाहती," टूटे पंखवाली ने जवाब दिया।

"अच्छा बदला दे रही हो तुम मेरे प्यार का! क्या कहने हैं तुम्हारे!.. वैसे मेरे बारे में तो बहुत-सी फ़ालतू बातें कही जाती हैं। ख़ुद ही लोग कुछ गड़बड़ कर डालते हैं और डाल देते हैं मेरे सिर... तो नमस्ते, फिर मिलेंगी!"

लोमड़ी के जाने के बाद ख़रगोश उछलता हुआ आया और बोला:

"सावधान रहना, टूटे पंखवाली, लोमड़ी फिर आयेगी।"

और यह नन्ही बत्तख़ भी ख़रगोश की तरह भयभीत रहने लगी। बेचारी अपने

आस-पास हो रहे क़ुदरत के करिश्मों को देखकर भी ख़ुश नहीं हो सकती थी। जाड़ा अपने पूरे रंग में आ गया था। धरती पर बर्फ़ का सफ़ेद क़ालीन बिछ गया था। कहीं एक भी काला धब्बा नहीं रह गया था। नंगे-बुच्चे भोज, आल्डर, बेदमजनूं और गिरि-प्रभूर्ज के पेड़ों तक पर रुपहले रोयों जैसी पाले की परत जम गयी थी। फ़र वृक्ष तो और भी ज़्यादा शान दिखाने लगे थे। उनपर पड़ी हुई बर्फ़ ऐसे लगती थी मानो उन्होंने समूर का कोई मूल्यवान कोट पहन लिया हो।

हां, बहुत ही अनूठा सौन्दर्य था सब ओर। लेकिन बेचारी नन्ही बत्तख़ सिर्फ़ इतना ही जानती थी कि यह सौन्दर्य उसके लिये नहीं है। एक ही ख़्याल से उसका दिल कांप-कांप उठता था कि नदी का जलवाला भाग भी जल्द ही जम जायेगा और तब उसके लिये कहीं कोई जगह नहीं रह जायेगी। लोमड़ी तो सचमुच ही कुछ दिनों के बाद फिर से आई, तट पर बैठ गयी और पुनः कहने लगी:

"अरी बत्तख़, तुम्हारे लिये मेरा मन उदास हो गया है... पानी से निकलकर यहां आ जाओ और अगर तुम ऐसा नहीं करना चाहतीं, तो मैं ख़ुद तुम्हारे पास आ जाऊंगी... मेरे पैरों में मेंहदी नहीं लगी है..."

और लोमड़ी जमी बर्फ़ पर बड़ी सावधानी से रेंगती हुई पानी के घेरे की तरफ़ बढ़ने लगी। नन्ही बत्तख़ का दिल धक-धक करने लगा। किन्तु लोमड़ी पानी तक नहीं पहुंच सकी, क्योंकि उसके निकट बर्फ़ बहुत पतली थी। उसने अगले पंजों पर अपना सिर टिका दिया, ओंठ चाटे और बोली:

"कैसी बुद्धू हो तुम, बत्तख़... बर्फ़ पर निकल आओ। पर ख़ैर, फिर मिलेंगी। मुझे बहुत-से काम करने हैं, जल्दी में हूं..."

लोमड़ी यह देखने के लिये हर दिन आने लगी कि पानी का घेरा जमा या नहीं। ज़ोर का पाला कटने लगा और उसने अपनी करनी कर दिखायी। पानी के बड़े घेरे की जगह कोई दो मीटर का छोटा-सा टुकड़ा रह गया। जमी हुई बर्फ़ मज़बूत थी और लोमड़ी पानी के बिल्कुल सिरे पर बैठी थी। बेचारी नन्ही बत्तख़ ने डर के मारे पानी में ग़ोता लगा लिया और लोमड़ी उसे चिढ़ाते हुए मज़ाक उड़ा रही थी:

"कोई बात नहीं, लगाओ ग़ोता, मैं तो तुम्हें हर हालत में खा ही जाऊंगी... यही ज़्यादा अच्छा होगा कि ख़ुद बाहर आ जाओ।"

ख़रगोश तट पर से लोमड़ी की ऐसी हरकत देख रहा था और उसका दिल ग़ुस्से से धधक रहा था:

"ओह, कैसी बेहया है यह लोमड़ी! .. ऐसी बदक़िस्मत है यह नन्ही बत्तख़! लोमड़ी इसे खा जायेगी..."

पानी के घेरे के पूरी तरह जम जाने पर लोमड़ी नन्ही बत्तख़ को शायद खा ही गयी होती, लेकिन हुआ कुछ दूसरा ही। ख़रगोश ने अपनी भेंगी आंखों से सब कुछ देखा।

एक सुबह की बात है। कुछ खाने और दूसरे ख़रगोशों के साथ खेलने को ख़रगोश अपनी खोह से बाहर निकला। ख़ूब ज़ोर का पाला कट रहा था और ख़रगोश अपने पंजे पर पंजा मारकर ख़ुद को गर्मा रहे थे। बेशक ठण्ड थी, फिर भी मन ख़ुश हो रहा था।

"भाइयो, सावधान!" एक ख़रगोश चिल्लाया।

वास्तव में ही उनके सिर पर ख़तरा मंडरा रहा था। जंगल के छोर पर झुकी कमरवाला एक बूढ़ा शिकारी खड़ा था, जो स्कीइज़ पर चुपचाप यहां पहुंच गया था और अब यह तय कर रहा था कि किस ख़रगोश पर गोली चलाये।

"अरे, बुढ़िया के लिये बहुत ही गर्म फ़र-कोट बनेगा!" सबसे बड़े ख़रगोश को चुनते हुए उसने सोचा।

उसने तो बन्दूक़ भी तान ली थी, मगर ख़रगोशों ने उसे देख लिया और ताबड़तोड़ जंगल में भाग गये।

"ओह, शैतान कहीं के!" बूढ़े ने झल्लाते हुए कहा। मैं भी छोड़ूंगा नहीं तुम्हें... बुद्धू इतना भी नहीं समझते कि मेरी बुढ़िया का फ़र-कोट के बिना काम नहीं चल सकता। ठिठुरती थोड़े ही रहेगी वह... चाहे कितना ही क्यों न भागो, मेरी आंखों में धूल नहीं झोंक सकते। मैं तो तुमसे ज़्यादा चालाक हूं... और मेरी बुढ़िया ने मुझसे यह कहा है: 'देख, बुड्ढे, फ़र-कोट के बिना नहीं लौटना।' और तुम भागते हो..."

बूढ़ा ख़रगोशों के पैरों के निशानों को देखते हुए उन्हें ढूंढ़ने लगा, लेकिन वे मटर के दानों की तरह जंगल में बिखर गये। बूढ़ा काफ़ी थक-टूट गया, चालाक ख़रगोशों को उसने ख़ूब कोसा और सुस्ताने के लिये नदी-तट पर बैठ गया।

"ओह, बुढ़िया, बुढ़िया, हमारा फ़र-कोट भाग गया!" वह ऊंचे-ऊंचे सोच रहा था। "ज़रा दम ले लूं और फिर दूसरा फ़र-कोट ढूंढ़ने के लिये जाऊंगा।"

बूढ़ा बैठा हुआ मन ही मन दुखी हो रहा था। इसी वक़्त क्या देखा उसने कि एक लोमड़ी जमी नदी पर रेंग रही है, बिल्कुल बिल्ली की तरह।

"अरे वाह, यह भी ख़ूब रही!" बूढ़ा बेहद ख़ुश हुआ। "बुढ़िया के फ़र-कोट का कॉलर तो ख़ुद रेंगता आ रहा है... लगता है कि पानी पीना चाहती है या फिर मछलियां पकड़ने का इरादा बनाया है इसने।"

लोमड़ी सचमुच ही रेंगकर पानी के घेरे तक जा पहुंची, जहां नन्ही बत्तख़ तैर

रही थी और बर्फ़ पर बैठ गयी। बूढ़े की नज़र कमज़ोर थी और लोमड़ी के पीछे उसे बत्तख़ नज़र नहीं आई।

"इस पर ऐसे गोली चलानी चाहिये कि कॉलर ख़राब न हो," लोमड़ी का निशाना साधते हुए बूढ़े ने सोचा। "अगर कॉलर में छेद हो गया, तो बुढ़िया बहुत कोसेगी... हर चीज़ को करने का अपना ढंग होता है, उस ढंग के बिना तो खटमल भी नहीं मारा जाता।"

फ़र-कोट के भावी कॉलर को ध्यान में रखते हुए बूढ़ा बहुत देर तक निशाना साधता रहा। आख़िर गोली दग़ने की आवाज़ गूंजी। गोली चलने से पैदा हुए धुएं में शिकारी को बर्फ़ पर किसी चीज़ के भागने की झलक मिली। वह पूरी तेज़ी से पानी के घेरे की तरफ़ दौड़ पड़ा। रास्ते में दो बार गिरा भी और पानी के घेरे तक पहुंचने पर केवल हाथ झटक कर रह गया – कॉलर तो जैसे वहां था ही नहीं और पानी के छोटे से घेरे में डरी-सहमी हुई एक बत्तख़ तैर रही थी।

"यह भी ख़ूब रही!" निराशा से हाथ झटकते और आह भरते हुए बूढ़े ने कहा। "ज़िन्दगी में पहली बार यह देख रहा हूं कि लोमड़ी बत्तख़ में बदल गयी... बहुत ही चालाक है कम्बख़्त!"

"दादा, लोमड़ी भाग गयी," टूटे पंखवाली नन्ही बत्तख़ ने बात साफ़ की।

"भाग गयी? लो, बन गया तुम्हारे फ़र-कोट के लिये कॉलर, मेरी बुढ़िया... अब मैं क्या करूंगा, बताओ तो? बस, मामला चौपट हो गया... अरी बुद्धू, तू यहां क्यों तैर रही है?"

"दादा, मैं दूसरी बत्तख़ों के साथ उड़ नहीं सकी। मेरा एक पंख टूटा हुआ है..."

"अरी बुद्धू, बुद्धू!.. तू या तो यहां ठिठुरकर मर जायेगी या फिर तुझे लोमड़ी खा जायेगी... समझी..."

बूढ़ा सोचता रहा, सोचता रहा, सिर हिलाता रहा और आख़िर उसने यह फ़ैसला किया:

"तो देख, हम ऐसा करेंगे – मैं तुझे अपनी पोतियों को दे दूंगा। बड़ी ख़ुश होंगी वे... वसन्त में तू बुढ़िया को अण्डे दे देना, बच्चे देकर ख़ुश कर देना। ठीक कहता हूं न मैं? समझी, समझी, बुद्धू..."

बूढ़े ने बत्तख़ को पानी में से निकाला और अपने कोट के भीतर छिपा लिया।

"अपनी बुढ़िया को मैं कुछ नहीं बताऊंगा," घर की ओर लौटते हुए उसने सोचा। "कोई बात नहीं, कॉलर के साथ उसका फ़र-कोट अभी जंगल में और सैर करता रहे। सबसे बड़ी बात तो यह है कि पोतियों को कितनी अधिक ख़ुशी होगी..."

ख़रगोशों ने यह सब कुछ देखा और ख़ूब हंसे। कोई बात नहीं, बुढ़िया को फ़र-कोट के बिना तन्दूर से ही काफ़ी गर्माहट मिल जायेगी।



बीस

निकोलाई गारिन

शेरों का शिकारी

(कोरियाई लोक-कथा)

साल पहले ख़ान-ज़ोंडो प्रान्त के कील्चू नगर में शेरों के शिकारियों का एक संगठन था। बहुत ही अमीर लोग इस संगठन के सदस्य थे। एक ग़रीब नौजवान ने इस संगठन में शामिल होने और इसका सदस्य बनने की व्यर्थ ही कोशिश की।

"कहाँ घुसना चाहते हो तुम?" - अध्यक्ष ने कहा। "क्या तुम नहीं जानते कि ग़रीब आदमी तो आदमी ही नहीं होता? जाओ, अपना रास्ता देखो!"

लेकिन ऐसा रूखा जवाब मिलने के बावजूद इस नौजवान ने अपना पेट काटकर भी पैसा जमा किया और इस्पात का वैसा ही, शायद दूसरे शिकारियों से भी बेहतर एक बरछा बनवा लिया।

और एक बार जब शिकारी लोग शेरों के शिकार के लिये पहाड़ पर गये तो वह भी चल दिया।

यह ग़रीब नौजवान एक गढ़े के क़रीब इन अमीर शिकारियों के पड़ाव में गया और एक बार फिर इनसे यह अनुरोध किया कि वे उसे अपने संगठन का सदस्य बना लें।

किन्तु ये लोग तो ख़ूब मज़े से अपना वक़्त बिताते थे और ग़रीब आदमी से उन्हें क्या लेना-देना था। उन्होंने उसका मज़ाक़ उड़ाकर उसे फिर भगा दिया।

तब नौजवान ने कहा: "आप लोग यहां पियें-पिलायें, मज़े से वक़्त बितायें और मैं अकेला ही जाता हूं शिकार को।"

"अगर यही चाहते हो कि शेर तुम्हें फाड़ खायें," उन्होंने जवाब दिया, "तो जाओ, सिरफिरे!"

"तुम लोगों से दुतकारा जाने के बजाय शेरों का शिकार बनें जाना कहीं बेहतर है।"

और वह जंगल में चला गया। घने वन में पहुंचने पर उसे बहुत बड़ा धारीदार शेर नज़र आया। शेर उसके साथ बिल्ली की तरह खेलता रहा – कभी छलांग मारकर उसके नज़दीक आ जाता तो कभी छलांग मारकर दूर चला जाता, लेट जाता और उसकी तरफ़ देखते हुए अपनी बहुत बड़ी पूंछ को ख़ुशी से इधर-उधर हिलाता-डुलाता।

यह खिलवाड़ उस वक़्त तक चलता रहा, जब तक कि शिकारी ने प्रचलित परम्परा के अनुसार शेर को तिरस्कारपूर्वक ललकारकर यह नहीं कहा:

"लो, आ रहा है तुम पर मेरा बरछा!"

इसी क्षण शेर शिकारी पर झपटा और बरछे को अपने सामने देखकर उसे दांतों के बीच दबा लिया। लेकिन इसी वक़्त शिकारी ने असाधारण शक्ति से बरछे को शेर के गले में घुसेड़ दिया और शेर मुर्दा होकर ज़मीन पर गिर गया।

यह शेर नहीं, शेरनी थी और उसका नर यानी शेर अपनी संगिनी की मदद के लिये लपका आ रहा था।

नौजवान शिकारी को यह चिल्लाना भी नहीं पड़ा: "लो, आ रहा है तुम पर मेरा बरछा!", क्योंकि शेर उसे देखते ही भयानक छलांग मारकर ख़ुद उसपर झपट पड़ा।

नौजवान शिकारी ने इसके सामने अपना बरछा कर दिया और फिर उसे गले में घुसेड़ने में भी सफल हो गया।

मरे हुए शेर-शेरनी को उसने घसीटकर झाड़ियों में छिपा दिया और उनकी पूंछों को रास्ते पर रहने दिया, ताकि नज़र आ सकें।

इसके बाद वह मौज करनेवाले अमीर शिकारियों के पास लौटा।

"कहो, बहुत से शेर मार डाले?"

"मुझे तो दो ही मिले हैं, लेकिन मैं उनसे पार नहीं पा सका और इसलिये आपकी मदद लेने आया हूं।"

"यह हुई न ढंग की बात – हमें ले जाकर दिखाओ।"

उन्होंने पीना-पिलाना बन्द किया और नौजवान शिकारी के पीछे-पीछे चल दिये। रास्ते में वे उस पर फबतियां कसते रहे।

"क्यों, मरना नहीं चाहा, इसीलिये हमसे मदद लेने आ गये..."

"चुपचाप चलते आइये," ग़रीब शिकारी ने इन्हें आदेश दिया, "शेर बिल्कुल निकट हैं।"

इन लोगों को चुप हो जाना पड़ा। अब वह इनके बीच मुखिया हो गया था।

"ये रहे शेर," उसने उन्हें शेरों की पूंछें दिखायीं।

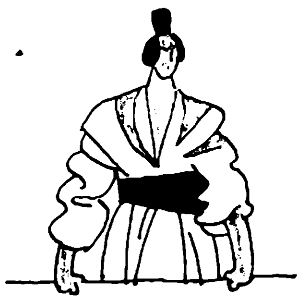
तब वे सभी क़तार बनाकर खड़े हो गये और चिल्लाये:

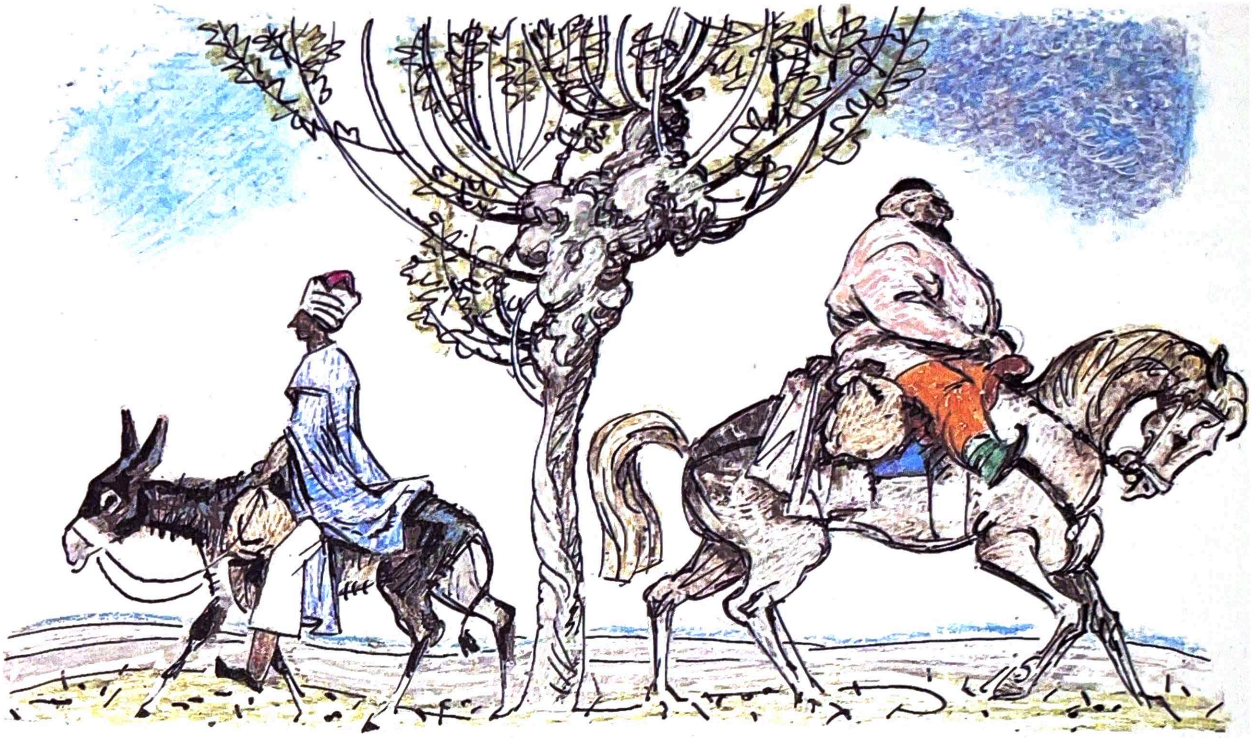
"लो, आ रहा है तुम पर मेरा बरछा!"

मगर मुर्दा शेर हिले-डुले नहीं।

तब ग़रीब शिकारी ने कहा:

"यह एक बरछा उनका काम तमाम भी कर चुका है। अब तो इन्हें सिर्फ़ शहर तक ले जाना है। इन्हें ले लीजिये और शहर ले जाइये।"





अलेक्सान्द्र कुप्रिन

क़िस्मत के रंग

(पूर्वी क़िस्सा)

बहुत-बहुत साल पहले किसी छोटे-से, लेकिन बहुत खुशहाल शहर में एक सौदागर रहता था, क़ालीनों, हाथी दांत, मसालों और गुलाब के तेल की तिजारत करता था। वह बड़ा ही समझदार, शिष्ट, धर्म-परायण और ईमानदार आदमी था, आदर्श ढंग से अपना कामकाज चलाता था और इसलिये सभी उस पर भरोसा और उसका बड़ा आदर-सत्कार करते थे।

एक बार ऐसा मौक़ा बना कि वह बहुत बड़े परिमाण में सस्ते दामों पर सोने का चूरा ख़रीदकर और उसे महंगा बेचकर बड़ा नफ़ा कमा सकता था।

दौलत फ़ौरन तिगुनी हो सकती थी। किन्तु इसके लिये ज़रूरी था कि सौदागर अपनी नक़द पूंजी को ही नहीं, बल्कि उधार दी गयी सारी रक़म भी जमा करे और अपना सारा माल भी झटपट बेच डाले। उसने इस मामले के नफ़े-नुक़सान पर ख़ूब अच्छी तरह से सोच-विचार किया और इस नतीजे पर पहुंचकर कि अगर तक़दीर ही खोटी न हुई, तो पौ बारह हो जायेंगे, दिलेरी से अपनी सारी पूंजी को इसी धंधे में लगाने का फ़ैसला कर लिया।

चुनांचे उसने एक हफ़्ते के दौरान ही सारी तैयारी कर ली, ज़रूरी आदेश-निर्देश दे दिये और ऐसा करते समय घर के किसी आदमी से किसी तरह का कोई सलाह-मशविरा नहीं किया, जो एक अच्छे कामकाजी आदमी के अनुरूप था। जब सभी कामों का श्रीगणेश करने के शुभ बृहस्पतिवार की सुबह आई तो उसने अपने बड़े बेटे को बुलाकर कहा:

"लाखी घोड़े पर अपने लिये ज़ीन कस लो और खच्चर पर मेरे और सामान के लिये।"

बेटा चुपचाप पिता का हुक्म बजाने का आदी था। कोई सवाल किये बिना उसने वैसा ही किया, जैसा पिता ने कहा था। उसने चमड़े की दो थैलियां भी, जो बड़ी नहीं थीं और जो पिता ने उसे दी थीं, ज़ीन के दोनों ओर लटकाकर बांध दीं। बाप-बेटे ने सफ़र पर चलने से पहले भगवान को याद किया और तड़के ही घर से रवाना हो गये – पिता आगे-आगे और बेटा कुछ पीछे तथा एक ओर को।

क़िस्मत इनका ख़ूब साथ दे रही थी। व्यापार और रुपयों-पैसों के मामले इतनी आसानी से, जल्दी-जल्दी और नफ़े से तय होते जाते थे कि सौदागर लगातार मिलनेवाली इन सफलताओं के कारण घबराहट अनुभव करते हुए मन ही मन अक्सर यह दोहराने लगा – "अगर भगवान की यही इच्छा है", "अगर भगवान ऐसा ही चाहते हैं", कहीं क़िस्मत को नज़र न लग जाये।

रास्ते में उसे पता चला कि फ़्रांसीसी राजकुमार ने स्पेन की एक बड़ी रईसज़ादी से शादी की है और इसके फलस्वरूप ठाट-बाट की चीज़ों की क़ीमतें बेहद ऊंची हो गयी हैं। चुनांचे उसने उम्मीद से कहीं बड़ी-बड़ी पेशगी रक़में लेकर अपने सामान को आसानी से बेच दिया। जिन लोगों ने उससे माल उधार लिया, वे सभी अमीर थे, हील-हुज्जत करनेवाले नहीं थे और उन्होंने ख़ुशी-ख़ुशी अपने क़र्ज़ चुका दिये। रास्ते में किसी तरह की बाधा नहीं आई, रुकावट पैदा नहीं हुई।

अपना माल बेचने का काम बहुत अच्छे ढंग से ख़त्म करने के बाद सौदागर सागर तटवर्ती उस नगर की ओर रवाना हो गया, जहां उसे सोने का चूरा ख़रीदना था। सौदागर का मन बेहद ख़ुश था, गो वह धीरे-धीरे यह फुसफुसाता रहता था –

"इंशा अल्लाह।"*

सागर और मशहूर बन्दरगाह तक पहुंचने से पहले बाप-बेटा एक सराय की तरफ़ चले गये, ताकि कुछ खायें-पियें और वहां रात बिता लें। हमेशा की तरह सौदागर थैलियां लेकर क़हवाख़ाने में चला गया और बेटे ने घोड़े तथा खच्चर को अस्तबल में ले जाकर ज़ीन उतारे और उन्हें चारा दिया। इसके बाद दोनों ने हाथ-मुंह धोया, नमाज़ अदा की और सीधा-सादा भोजन करने बैठ गये।

ये दोनों अभी खाना खा ही रहे थे कि क़हवाख़ाने में गन्दे-मन्दे कपड़े पहने और शोर मचाते हुए ऐसे लोगों की भीड़ आ घुसी जो भले और शरीफ़ मालूम नहीं पड़ते थे। उन्होंने शराब पी, गाने गाये और फिर से शराब के जाम चढ़ाये। कुछ देर बाद उनमें तू-तू, मैं-मैं शुरू हो गयी, झगड़ा चीख़-चिल्लाहट, गाली-गलौज और हाथा-पाई में बदल गया, चाकू-छुरे निकल आये।

"आओ चलें यहां से, बुराई से दूर रहना ही अच्छा है," सौदागर ने मेज़ से उठते हुए कहा। "मैं ज़ीन कसने में तुम्हारी मदद करूंगा।"

इन दोनों ने अंधेरे में घोड़े और खच्चर पर जल्दी-जल्दी ज़ीन कसे, अपने रास्ते चल दिये और तब तक तेज़ी से बढ़ते गये, जब तक कि सराय से सुनाई देनेवाली चीख़-चिल्लाहट और लोगों के पैरों की खट-पट उन तक पहुंचनी बन्द नहीं हो गयी। जब शान्ति हो गयी तो पिता ने अचानक ज़ोर से लगाम खींचकर अपने खच्चर को रोका, ज़ीन के इर्द-गिर्द हाथों से कुछ टटोला और बेटे को हुक्म दिया:

"रुको! वापस चलो!"

ख़ुद झटपट अपने खच्चर को मोड़ा, उस पर चाबुक सटकारा और उसे अन्धाधुंध दौड़ाने लगा। बेटा उसके पीछे-पीछे आ रहा था।

वे फिर से सराय में पहुंचे। उन्होंने क़हवाख़ाने की खिड़कियों में से भीतर झांका, कान लगाकर आहट ली। वहां क़ब्र जैसा गहरा सन्नाटा था। लैम्प जल रहे थे। शुरू में लोग दिखाई नहीं दिये। बहुत ग़ौर से देखने पर उन्हें फ़र्श पर लाशें और ख़ून के डबरे दिखाई दिये। उन्होंने मालिक और नौकरों को पुकारा। कोई जवाब नहीं मिला। शायद वे मार-काट से डरकर छिप गये थे या जंगल में भाग गये थे।

सौदागर ने लगामें बेटे की तरफ़ फेंक दी। तेज़ क़दमों से ड्योढ़ी लांघकर वह कमरे में गया, उस जगह पहुंचा जहां कुछ ही देर पहले उन्होंने भोजन किया था, बेंच पर झुका और बेटे ने खिड़की में से देखा कि पिता ने चमड़े की दोनों थैलियां

---

* अल्लाह ने चाहा तो सब ठीक ही होगा।–अनु०

उठाकर, जो रस्सी से बंधी हुई थीं, अपने कंधे पर डालीं। इसी वक़्त बेटे की समझ में आया कि उतावली में वे ये थैलियां अपने साथ लेना भूल गये थे।

किन्तु अहाते में आने पर सौदागर ने बेटे से एक भी शब्द नहीं कहा। थैलियों को ज़ीन के साथ लटकाकर वह खच्चर पर सवार हुआ और उसने उसके पेट पर चाबुक लगाया।

बाप-बेटा देर तक घोड़े और खच्चर को सरपट दौड़ाते रहे। उन्हें यही डर था कि क़हवाख़ाने में अभी पुलिस आ धमकेगी, ताज़ा निशानों का पीछा करते हुए उन्हें आ पकड़ेगी और क़ाज़ी के पास ले जायेगी। कोई क़ुसूरवार हो या न हो, क़ाज़ी से ज़िन्दगी भर पिंड नहीं छूटेगा, तन का आख़िरी कपड़ा उतर जाने तक निजात नहीं मिलेगी।

पौ फटने पर वे एक छोटी-सी नदी पर पहुंचे, जिसके दोनों तटों पर हरे-भरे और छायादार वृक्षों के झुरमुट थे। सौदागर ने बेटे से कहा कि घोड़े और खच्चर को वृक्ष से बांध दे। दोनों ने सुबह की नमाज़ अदा की। इसके बाद सौदागर ने बेटे को हुक्म दिया:

"थैलियां लेकर मेरे पीछे-पीछे आओ।"

दोनों एक छोटे-से वन-प्रांगण में गये जो सभी ओर से वृक्षों की ओट में था और जहां उन्हें कोई नहीं देख सकता था। सौदागर ने बेटे को वहां बैठने के लिये कहा।

दोनों बैठ गये। सौदागर ने दोनों थैलियां खोलीं और उनमें जो कुछ भी था, उन्हें निकाल-निकालकर चुपचाप दो बराबर ढेरियों में रखने लगा। हीरे, मोती, फ़ीरोज़ा आकार और मूल्य के अनुसार दो समान ढेरियों में बांटे। सोने की मुद्राओं और अमीर व्यापारियों के नाम हुंडियों का भी ऐसे ही विभाजन किया। यह काम ख़त्म करने के बाद उसने बेटे से कहा:

"यहां एक जैसे दो हिस्से हैं। एक तुम्हारा है। कोई भी ढेरी चुन लो और उसमें जो कुछ भी है, उसे थैली में डालकर बन्द करो और अपने ज़ीन के साथ बांध लो। इसी वक़्त अपने घोड़े पर सवार होकर उसी तरफ़ चल दो, जिस तरफ़ हम अब तक चलते रहे हैं। पांच मिनट तक सवारी करने पर दोराहा सामने आयेगा। तुम बायें बढ़ना। इस तरह तुम जल्दी घर पहुंच जाओगे। याद रखना कि घर में अब तुम्हीं सबसे बड़े हो। अपनी ज़िन्दगी को जैसे चाहो और जो भी मुमकिन हो, शक्ल दो। मैं न तो तुम्हें सलाहें-नसीहतें दे रहा हूं और न आशीर्वाद। जाओ! किसी बस्ती में पहुंचने से पहले पीछे मुड़कर देखने की जुर्रत नहीं करना। मैं बहुत अर्से तक घर नहीं लौटूंगा। मुमकिन है कि कभी भी न लौटूं। तो अब जाओ।"

बेटे ने चुपचाप बाप का हुक्म सुना, पिता के पांव छुए, पिता के पैरों के बीच की धरती को चूमा, मुड़ा, घोड़े पर सवार हुआ और वृक्षों के बीच ग़ायब हो गया।

सौदागर और उसके बेटे के क़िस्से को फ़िलहाल हम यहीं छोड़ते हैं।

एक बहुत बड़े राज्य की राजधानी, एक बड़े ही शानदार और मशहूर शहर में बहुत बड़ा त्योहार आनेवाला था। इसलिए सुबह से ही उस राज्य के बहुत ही शक्तिशाली और सभी दुख-दर्द दूर करनेवाले शासक से लेकर ग़रीब-ग़ुरबा तक व्रत या रोज़ा रख रहे थे। शाम का अन्धेरा गहरा जाने तक, उस वक़्त तक जब नज़र काले और लाल धागे में फ़र्क़ न कर सके, किसी को भी भोजन नहीं करना चाहिये था और अगर किसी को बहुत ज़्यादा प्यास लगे तो वह साफ़ पानी से सिर्फ़ ग़रारे करके अपने सूखे गले को तर कर सकता था। दिन भर इतना सब्र करने के लिए शाम को हर कोई तरह-तरह के फलों-मेवों, मिठाइयों, व्यंजनों, शराबों और दुनिया की दूसरी नेमतों से अपना जी ख़ुश कर सकता था।

उस देश में पुराने ज़माने से यह परम्परा चली आ रही थी कि त्योहार की इस शाम को लोग किसी ग़रीब, यतीम बालक, एकाकी बूढ़े या किसी राहगीर को, जिसे रैन-बसेरा न मिला हो, अपने यहां बुलाकर उसकी ख़ातिरदारी करते थे। इस परम्परा को अमीरों के शानदार महलों और शहर के बाहर बनी ग़रीबों की टूटी-फूटी झुग्गी-झोंपड़ियों में भी पावन मानकर व्यावहारिक रूप दिया जाता था।

तो शाम होने के पहले शहर के एक बहुत ही जाने-माने और बड़ी इज़्ज़त-आबरूवाले आदमी ने मसजिद से बाहर आते हुए अपने इर्द-गिर्द चल रहे मित्रों से कहा:

"दोस्तो, आप सब से मेरी एक इल्तिजा है। मेरे घर कुछ ऐसे ग़रीबों को लाने की मेहरबानी करें जो सड़कों या क़हवाख़ाने के दरवाज़े पर मिलते हैं। वे जितने ज़्यादा कमज़ोर, मजबूर और क़िस्मत के मारे होंगे, मैं उनकी उतनी ही ज़्यादा इज़्ज़त और दिल से ख़ातिरदारी करूंगा।"

यह आदमी इतना ज़्यादा अमीर था, इसके पास इतनी दौलत थी कि कोई हिसाब ही नहीं। उसके ऊंटों के लम्बे-लम्बे कारवां देश में बहुत दूर-दूर, महानदी तक जाते थे, अनेक पालोंवाले जहाज़ दुनिया भर के समुद्रों में घूमते थे, बड़े-बड़े बाग़-बगीचों और ठण्डे फ़व्वारोंवाले संगमरमर के महल अपनी ख़ूबसूरती से लोगों को हैरत में डालते थे। लेकिन अगर दौलत से उसे इज़्ज़त मिलती थी, वह लोगों में हैरत पैदा करता था तो सबका प्यार मिलता था उसकी दिल की ख़ूबियों की वजह से। ये ख़ूबियां थीं– सचाई, दरियादिली और दानिशमन्दी। ग़रीबों के लिये उसके ख़ज़ाने हमेशा खुले रहते

थे, कभी भी उसने दुख-मुसीबत और नाकामयाबी में दोस्त का साथ नहीं छोड़ा था और ज़िन्दगी के सबसे पेचीदा मामलों में भी ऐसी अच्छी, सही और दूर की कौड़ी लानेवाली सलाहें देता था कि इस धरती पर ख़ुदा का नुमाइन्दा – ख़ुद बादशाह भी उससे सलाह लेता था।

इसलिये दोस्तों ने उसकी इल्तिजा के जवाब में सिर झुका दिये और जल्दी से जल्दी उसकी इच्छा पूरी करने का वचन दिया।

एक दोस्त ने एक ख़ास बात कही:

"ओ नेकी के समन्दर, ग़रीबों के सरपरस्त, हीरों के पारखी! जैसा कि तुम जानते हो, आज के दिन धर्म-ईमान रखनेवाले हर आदमी को नहाने के लिये हम्माम में जाना चाहिये, और अब मेहरबानी करके वह सुनिये जो मेरे नौकरों ने वहां से लौटकर मुझे बताया।

"उसी हम्माम में एक ऐसा बूढ़ा, बुढ़ापे का मारा और ऐसा ग़रीब आदमी आया, जैसा कि भिखमंगों से भरे हमारे ख़ुशहाल शहर में किसी ने आज तक नहीं देखा था। उसकी कुल जमा पूंजी थी – फटे स्लीपर, चमड़े की एक थैली और चीथड़े, जिन्हें बदलने के लिये उसके पास दूसरे चीथड़े भी नहीं थे।

"नहाने के बाद जब वह वहां आया, जहां उसने कपड़े उतारे थे तो देखा कि अगर चोरी के इरादे से नहीं, तो भोंडा मज़ाक़ करने के लिये ही कोई उस ग़रीब की थैली और फटे स्लीपर भी उठा ले गया है और सिर्फ़ तन ढकने को एक चीथड़ा छोड़ गया है। वहां हाज़िर सभी लोगों को बहुत दुख हुआ और ग़ुस्सा आया। लेकिन उन्हें उस वक़्त तो बहुत ही ज़्यादा हैरानी हुई जब उन्होंने यह देखा कि बूढ़े का चेहरा दुख और ग़ुस्सा ज़ाहिर करने के बजाय उल्लास और ख़ुशी से खिल उठा। हाथ ऊपर उठाकर उसने ऐसे अच्छे-अच्छे शब्दों में, सच्चे दिल और जोश से अल्लाह और अपनी क़िस्मत का शुक्रिया अदा किया कि वहां खड़े लोग सकते में आ गये और कुछ न समझ पाते हुए अपने रास्ते चल दिये... ओ, दिलों को चैन देनेवाले, इसी आदमी के बारे में मैं तुम्हें बताना चाहता था, गो मानता हूं कि यह अजीब बूढ़ा मुझे पागल लगता है।"

धनी-मानी सौदागर ने सिर हिलाकर कहा: "वह पागल है या कोई महात्मा-धर्मात्मा – हमें यह मालूम नहीं। मेरे दोस्त, तुम जल्दी से जल्दी, उसे मेरे पास ले आओ। आज रात के खाने के वक़्त वही मेरा सबसे बड़ा मेहमान होगा।"

चुनांचे जब वह चिर-प्रतीक्षित घड़ी आई, राजधानी के सभी घरों में बत्तियां जगमगा उठीं, सभी चूल्हों से पुलाव, तली हुई मुर्ग़ियों और मसालों की बढ़िया ख़ुशबू हवा में बस गयी तो ग़रीब बूढ़े को धनी-मानी सौदागर के घर में लाया गया। घर के

मालिक ने ख़ुद बाहर आकर उसका स्वागत किया, बड़े अदब से उसका हाथ थामकर वह उसे जशन के हॉल में ले गया, सबसे ज़्यादा इज़्ज़त की जगह पर बिठाया और नौकर के हाथ से तश्तरी लेकर ख़ुद चुन-चुनकर उसे खाना परोसा।

दावत में हिस्सा ले रहे सभी लोगों को बूढ़े का स्नहे-प्यार और दयालुता से चमकता चेहरा देखकर बहुत ख़ुशी हो रही थी। उसके पके बालों और बुढ़ापे की मर्मस्पर्शी ख़ुशी से अभिभूत सौदागर ने पूछा:

"बड़े मियां, क्या मैं आपकी कोई ख़िदमत कर सकता हूं, आप मुझे अपनी कोई छोटी या बड़ी इच्छा पूरी करने का मौक़ा दे सकते हैं?"

बूढ़ा ख़ुश होकर मुस्कराया और बोला:

"अपने सभी बेटों-पोतों को मेरे सामने बुलाओ, मैं उन्हें आशीर्वाद दूंगा।"

उम्र के मुताबिक़ सौदागर के चार बालिग़ बेटे और तीन किशोर पोते बारी-बारी से बूढ़े के सामने आये, हर किसी ने घुटने टेककर उसे प्रणाम किया और बूढ़े ने उनके सिरों पर हाथ फेरा।

जब यह पुरानी और अच्छी रस्म ख़त्म हो गयी तो सबसे बाद में जाने-माने सौदागर ने भी उससे आशीर्वाद देने का अनुरोध किया। बूढ़े ने उसे केवल आशीर्वाद ही नहीं दिया, उसे गले लगाया और उसके दोनों गालों और होंठों को चूमा भी।

घुटने टेके और बहुत भाव-विह्वल धनी-मानी सौदागर ने उठते हुए कहा:

"बड़े मियां, मैं आपसे जो सवाल पूछने की हिम्मत कर रहा हूं, उसके लिये माफ़ी चाहता हूं और आप उसे मेरी बेकार जिज्ञासा नहीं मानना। जब से आप मेरे यहां आकर बैठे हैं, मैं लगातार आपको देख रहा हूं, दिल में इज़्ज़त पैदा करनेवाले आपके चेहरे से किसी तरह भी अपनी नज़र नहीं हटा पा रहा हूं और वह मुझे अपने दिल के ज़्यादा से ज़्यादा नज़दीक तथा अपना लग रहा है। क्या आपको याद नहीं, बड़े मियां, कि हम पहले कभी कहीं मिले थे... बहुत-बहुत साल पहले?"

"यह सवाल पूछने के लिये तुम्हें ख़ुशी से माफ़ करता हूं," बूढ़े ने प्यार से मुस्कराते हुए कहा, "और अपनी तरफ़ से यह सवाल करता हूं – क्या तुम्हें एक छोटी-सी नदी के किनारे पर छायादार वन-कुंज में वृक्ष से बंधे खच्चर, लाखी घोड़े और दो आदमियों यानी बाप-बेटे की याद है या नहीं जिन्होंने वृक्षों की ओट में छिपे छोटे-से वन में चमड़े की थैलियों से हीरे और सोना निकालकर उन्हें आधा-आधा बांटा था? .."

तब सौदागर ने बूढ़े के सामने माथा टेका, उसके पैरों के पास ज़मीन को चूमा और ख़ुशी से हुमकते हुए ऊंची आवाज़ में कहा:

"ओ, मेरे प्यारे अब्बा, बहुत-बहुत शुक्र है अल्लाह का कि वह आपको यहां लाया। देखिये तो यह है आपका घर-बार और मैं तथा मेरे बेटे-पोते आपके नौकर-चाकर और ग़ुलाम हैं।"

बाप-बेटा गले मिले और देर तक ख़ुशी के आंसू बहाते रहे। उनके गिर्द खड़े लोग भी रोते रहे। जब कुछ वक़्त गुज़र गया और प्यारी ख़ामोशी छा गयी तो जाने-माने सौदागर ने बड़े अदब से पिता से पूछा:

"प्यारे अब्बा, यह बताइये कि उस सुबह को आपने सारी दौलत को हमारे बीच क्यों बांटा था, क्यों यह चाहा था कि हम अलग-अलग दिशाओं में जायें और अगर हमेशा के लिये नहीं, तो लम्बे अर्से के लिये जुदा हो जायें?"

बुज़ुर्ग ने जवाब दिया:

"बात यह है कि जैसे ही हम अपने काम से रवाना हुए, तो हर जगह हमें लाजवाब कामयाबी मिलती गयी। तुम्हें याद होगा कि मैं लगातार इंशा अल्लाह कहता जाता था। मुझे डर था कि कहीं क़िस्मत को नज़र न लग जाये। लेकिन जब हम सराय में लौटे और क़हवाख़ाने में मुझे अपनी दोनों थैलियां ज्यों की त्यों मिल गयीं, जिनपर किसी की भी नज़र पड़ सकती थी और जिन्हें कोई भी उठा सकता था, मैं यह समझ गया कि शायद ही कभी किसी आदमी की तक़दीर ने उसका इतना ज़्यादा साथ दिया हो और इन्साफ़ के नाते यह ज़रूरी है कि आगे मुझे बहुत-सी असफलताओं और दुख-मुसीबतों का मुंह देखना होगा। इसलिये तुम्हें, अपने सबसे बड़े बेटे और पूरे घर को आगे की मुसीबतों से बचाने के लिये मैंने आप लोगों से दूर हो जाने और अपनी तक़दीर में लिखी सभी मुसीबतों को अपने साथ ले जाने का फ़ैसला किया। किसी ने ठीक ही कहा है कि आंधी-तूफ़ान के वक़्त बेवक़ूफ़ ही किसी पेड़ के नीचे, जिसपर बिजली गिर सकती है, पनाह लेता है... और तुम देख रहे हो कि जुदाई के इन सालों में मेरी हालत कैसी ख़स्ता हो गयी है। क्या ख़्याल है तुम्हारा, मैंने समझदारी से काम लिया था या नहीं?"

इन शब्दों को बहुत ध्यान से सुन रहे सभी लोगों ने बुज़ुर्ग के सामने सिर झुकाया और उसकी गहरी सूझ-बूझ तथा अपने परिवार के प्रति, जिसे वह छोड़कर चला गया था, उसके सच्चे प्यार से बड़े हैरान हुए।

एक सबसे बड़ी उम्रवाले और सम्मानीय मेहमान ने पूछा:

"बड़े मियां, यह बताइये कि अपनी मामूली-सी थैली के चुरा लिये जाने की ख़बर पाकर आप रोने के बजाय बेहद ख़ुश क्यों हुए थे, आपकी बाछें क्यों खिल गयी थीं? आपसे इल्तिजा है कि मेरे ऐसे अटपटे सवाल का बुरा नहीं मानियेगा और अगर ठीक समझें तो जवाब देने की मेहरबानी करें।"

बुज़ुर्ग ने दयालुता से मुस्कराते हुए उत्तर दिया :

"मैं उस घड़ी फ़ौरन यह समझ जाने से ही बेहद ख़ुश हुआ था कि क़िस्मत मुझे सताते हुए अब तंग आ चुकी है। वरना तुम खुद ही सोचो और यह बताओ – क्या इस बड़ी दुनिया में ऐसे ग़रीब और बदक़िस्मत से भी बुरी हालतवाले किसी आदमी की कल्पना की जा सकती है, जिसकी मामूली थैली भी चुरा ली जाये? क़िस्मत मेरे साथ इससे ज़्यादा बुराई करने की नहीं सोच सकती थी। और देखो – मेरी बात बिल्कुल सही निकली। क्या इसी दिन मुझे अपना बेटा, उसके बेटे और बेटों के बेटे नहीं मिल गये? अब इस बात की फ़िक्र न करते हुए कि मेरी खोटी तक़दीर का उनपर साया पड़ सकता है, मैं प्यार, ख़ुशी और चैन में अपनी ज़िन्दगी के बाक़ी दिन बिता सकता हूं।"

फिर से सभी ने अपने सिर झुकाये और एकसाथ कह उठे :

"ऐसे हैं क़िस्मत के रंग!"



इस पुस्तक में संकलित कथाएं १६ वीं शताबदी के सुविख्यात रूसी लेखकों ने रची हैं। इनमें हैं महाकवि अलेक्सान्द्र पुश्किन, भाषाशास्त्री, जहाज़ी, फ़ौजी डाक्टर व्लादीमिर डाल, दार्शनिक तथा संगीतज्ञ व्लादीमिर ओदोयेव्स्की, विख्यात शिक्षाशास्त्री कोन्स्तान्तीन उशीन्स्की, इत्यादि। ये रूसी लेखक दूसरे जनगण की लोक-कथाओं में गहरी रुचि लेते थे। इन कथाओं की सारी विविधता के बावजूद इन सब में हम सच्चाई और भलाई की कामना, श्रम के प्रति आदर भाव और जन्मभूमि के प्रति प्रेम की भावना पाते हैं।

पाठकों से

रादुगा प्रकाशन इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिज़ाइन के बारे में आपके विचार जानकर अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। हमारा पता है:

रादुगा प्रकाशन,
१७, ज़ूबोव्स्की
बुलवार, मास्को,
सोवियत संघ।





